जालौन जनपद में साहित्य सर्जना : एक सर्वेक्षण

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की
हिन्दी साहित्य विषय में
पी–एच.डी. शोध उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध
2005

मार्गदर्शक
डॉ. श्यामसुन्दर सोनकिया
पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
श्रीमंत विजयाराजे सिंधिया
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अड़ोखर
जिला भिण्ड (म. प्र.)

सहमार्गदर्शक
डॉ. रामस्वरूप खरे
पूर्व प्राचार्य, डी.वी. कॉलेज,
उरई, उ.प्र.

अनुसंधित्सु
योगेश कुमार पचौरी
योगेशकुमार पचौरी
ग्राम तांबा, पोस्ट हथेरी
जनपद जालौन (उ. प्र.)

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री योगेशकुमार पचौरी ने मेरे निर्देशन में **"जालौन जनपद में साहित्य सर्जना : एक सर्वेक्षण"** विषय पर अपना शोधकार्य पूर्ण किया है।

शोधार्थी ने मेरे निर्देशन में 200 दिन की उपस्थिति देकर कार्य को विधिवत् सम्पन्न किया।

शोध प्रबंध विश्वविद्यालय की शोध–उपाधि से सम्बंधित अध्यादेश की वांछित नियमावली को पूर्ण करता है तथा विषयवस्तु और भाषा दोनों ही दृष्टियों से परीक्षकों के सम्मुख प्रस्तुत करने योग्य है।

मैं इनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

सहमार्गदर्शक

डॉ. रामस्वरूप खरे

पूर्व प्राचार्य

डी.वी.कॉलेज, उरई, उ.प्र.

मार्गदर्शक

डॉ.श्याम सुन्दर सौनकिया

पूर्व विभागाध्यक्ष हिन्दी विभाग

श्रीमंत विजयराजे सिंधिया स्नातकोत्तर

महाविद्यालय, अड़ोखर जिला भिण्ड, म.प्र.

शोधार्थी का घोषणा-पत्र

मैं घोषणा करता हूँ कि **"जालौन जनपद में साहित्य सर्जना : एक सर्वेक्षण"** शीर्षक शोध–प्रबंध डॉ. श्यामसुन्दर सौनकिया के मार्गदर्शन में किया गया सर्वथा मौलिक प्रबंध है तथा मेरे द्वारा किए गए शोध कार्य पर आधारित है। मेरे पूर्ण ज्ञान से इस शीर्षक पर किसी भी विश्वविद्यालय और शैक्षणिक संस्थान में अभी तक कोई कार्य नहीं हुआ।

शोधार्थी
योगेश कुमार पचौरी
योगेशकुमार पचौरी

अनुसंधान क्रम और आभार

स्नातकोत्तर कक्षा में अध्ययन के समय हिन्दी में शोध करने की तीव्र जिज्ञासा मेरे मन में उत्पन्न हो गयी थी। तत्पश्चात् आचार्य प्रवर डॉ. रामशंकर द्विवेदी का 'जनपद जालौन की साहित्यिक परम्परा', श्री अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' का ' जालौन जनपदः साहित्य और पत्रकारिता' तथा डॉ. रामस्वरूप खरे का 'उरई के कवि' लेख पढ़कर हृदय की जिज्ञासा को बल मिला था। शोध कार्य की आकांक्षा से जब इस जिज्ञासा को मैंने एस. व्ही. एस. महाविद्यालय अड़ोखर (भिण्ड) म.प्र. के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. श्याम सुन्दर सौनकिया के समक्ष रखा, तो उन्होंने आत्मीयता के साथ 'जनपद जालौन की साहित्य–सर्जनाः एक सर्वेक्षण' विषय पर शोध निर्देशक बनने की स्वीकृति दे दी और कृपा पूर्वक विषय की रूपरेखा तैयार करने में मेरी मदद की। इस रूपरेखा के निश्चित करने में डॉ. रामस्वरूप खरे तथा डॉ. सीता किशोर के सुझाव मूल्यवान रहे हैं। डॉं. रामस्वरूप खरे ने स्नेहाशीष के साथ सह–शोध निदेशक बनने की कृपा की।

जनपद जालौन की साहित्यिक परम्परा सदियों पुरानी है। यहाँ की समृद्ध साहित्य सर्जना में महाकाव्य, खण्डकाव्य, उपन्यास, निबन्ध, कहानी, समीक्षा, आलोचना तथा अनुवाद सभी उपलब्ध हैं। इस विषय पर स्फुट लेख तो लिखे गये किन्तु जनपद की साहित्य–सर्जना पर विधिवत् शोध कार्य अभी तक नहीं हुआ था। इस शोध ग्रंथ को पूरा करने में जो मौलिक सुझाव तथा दिशा–निर्देश श्रद्धेय डॉ. श्याम सुन्दर सौनकिया जी से प्राप्त हुये हैं, उन्हीं का पल्लवित स्वरूप प्रस्तुत शोध–प्रबंध है।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से शोधप्रबंध को नौ अध्यायों में विभाजित किया गया है एवं अन्त में परिशिष्ट के अन्तर्गत सन्दर्भ ग्रन्थ सूची दी गई है। प्रथम अध्याय में जिले की भौगोलिक स्थिति एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त विवेचन है। भौगोलिक स्थिति में स्थिति, सीमा तथा क्षेत्रफल से लेकर उपज व खनिज तक का विवरण प्रस्तुत है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में महाभारत कालीन संदर्भों के साथ कछवाहों, भदौरियों, जाटों तथा मराठों के शासनकाल में जनपद की स्थिति का विवरण है। सामाजिक गठन, सांस्कृतिक व धार्मिक स्वरूप, जनजीवन पर रियासती प्रभावों के परीक्षण का परिचय तथा जनपद में उपलब्ध साहित्य—सर्जना का विकास प्रस्तुत है।

द्वितीय अध्याय में उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व का साहित्यिक परिवेश विवेच्य रहा है। इसमें महेशदास उर्फ वीरबल तथा रीतिकालीन सर्वांगनिरूपक आचार्य श्रीपति मिश्र का व्यक्तित्व एवं कृतित्व प्रस्तुत है। इनके प्रकाशित तथा अप्रकाशित ग्रंथों का भाषा—शिल्प तथा साहित्यिक मूल्यांकन किया गया है।

तृतीय अध्याय में उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में साहित्य—सर्जना अनुसंधानाधीन रही है। इसमें पं. कालीदत्त नागर तथा लछमन ढीमर 'लाख' का सामान्य परिचय एवं उनकी साहित्य—संरचना विचाराधीन रही है। काली कवि के गंगा गुण मंजरी, छबि रत्नम्, रसिक—विनोद, हनुमत्पताका, कवि—कल्पद्रुम तथा ऋतु—राजीव आदि ग्रंथों का और 'लाख' कवि के एकमात्र अप्रकाशित ग्रंथ गंगा शतक का काव्यानुशीलन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की साहित्य—सर्जना का सूक्ष्मावलोकन है। इस काल—खण्ड में अवतरित प्रमुख कवियों में पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', कृष्ण बल्देव वर्मा, द्वारिका प्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र', पं. बेनीमाधव तिवारी तथा डॉ. आनन्द के व्यक्तित्व और कृतित्व का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत करते हुये अनेक ग्रंथों का साहित्यिक मूल्यांकन किया गया है।

पंचम् अध्याय के अन्तर्गत बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की साहित्य–सर्जना प्रस्तुत है। इस युग में जनपद जालौन में अवतरित मूर्धन्य कवियों में पं. दशाराम मिश्र, बाबूराम गुबरेले, भगीरथ सिंह 'तकदीर', रामबाबू अग्रवाल, डॉ. रामस्वरूप खरे तथा ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' आदि की रचनाओं के भाषा–शिल्प के साथ उनकी रचनाओं का काव्यानुशीलन विवेचनाधीन रहा है।

छठवें अध्याय में बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की साहित्य–सर्जना पर विचार किया गया है। इसमें रबिशंकर मिश्र, नासिर अली 'नदीम', अरुण नागर, डॉ. वीणा श्रीवास्तव, असीम मधुपुरी, महेन्द्र पाटकार 'मृदुल', श्रीमती शिखा मनु गर्ग, कु. नीलम कश्यप, कु. अपर्णा स्वरूप तथा विनोद सौनकिया आदि रचनाकारों के सामान्य परिचय तथा उनकी रचनाओं का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है।

सप्तम् अध्याय में जनपद जालौन की साहित्य–सर्जना का यहाँ के समाज पर प्रभाव विवेचित है। युगानुसार कवियों की रचनाओं का तत्कालीन परिवेश पर पड़े प्रभाव को रेखांकित किया गया है।

अष्टम् अध्याय में जनपद की साहित्य–सर्जना में साहित्यिक पत्रकारिता के योगदान को विवेचन का विषय निर्धारित किया गया है। इस अध्याय में मूर्धन्य पत्रकार मूलचन्द्र अग्रवाल, राधारमण शाण्डिल्य, डॉ. आनन्द, राजाराम पाण्डेय, डॉ. रामस्वरूप खरे, राधेश्याम दाँतरे, डॉ. रामशंकर द्विवेदी, नासिर अली 'नदीम' तथा श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' की साहित्यिक पत्रकारिता का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है।

नवम् अध्याय इस शोध ग्रंथ का उपसंहार है। इसमें उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व से बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक जनपद जालौन की साहित्य सर्जना पर विचार किया गया है।

आदरणीय डॉ. रामस्वरूप खरे, राधेश्याम दाँतरे, डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, माया हरिश्याम पारथ, राधेश्याम योगी, पूरनचन्द्र मिश्र, हरिनारायण

'विकल', राममोहन शर्मा, राधारमण शाण्डिल्य, महेन्द्र पाटकार 'मृदुल', शिवानन्द मिश्र 'बुन्देला', बट्टू तिवारी, यज्ञदत्त त्रिपाठी, अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद', विजय पाण्डेय, प्रभुदयाल नायक, रामरूप स्वर्णकार 'पंकज', नरेन्द्र मित्र, राजेन्द्रसिंह चौहान, कन्हई सिंह बुन्देला, डॉ. नीलम मुकेश, डॉ. मुनीव शर्मा, जगदीशप्रसाद बुधोलिया, संतोष सौनकिया, बद्रीप्रसाद चंसौलिया, देवेन्द्र कुमार गुबरेले, शिवस्वरूप दीक्षित, नासिर अली 'नदीम', रबीन्द्र शर्मा, अरुण नागर, सूरजसिंह कछवाह, रामकुमार तिवारी, रंधीरसिंह कछवाह, राजेन्द्र श्रीवास्तव, संतोषसिंह आदि ने शोध कार्य में समागत समस्याओं के सुलझाने में मदद की है, और डॉ. श्याम बिहारी श्रीवास्तव ने शोध–प्रबंध के पुनरनिरीक्षण में सहयोग प्रदान किया। मैं इनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

विवेक सौनकिया, वैभवनारायण द्विवेदी, कु. मीनाक्षी, कु. श्वेता दीक्षित, कु. आर.एस. तथा कु. शारदा पायल ने समय–समय पर मित्र–मण्डली में बैठकर अपने वैचारिक सुझाव दिए हैं। मैं इन सभी का आभार व्यक्त करता हूँ।

यह शोध प्रबन्ध डॉ. श्याम सुन्दर सौनकिया हिन्दी विभागाध्यक्ष एस. व्ही. एस. महाविद्यालय अड़ोखर (भिण्ड) म.प्र. के निर्देशन में लिखा गया है। उन्होंने अपने हार्दिक स्नेहपूर्ण आदेश–निर्देश से निरन्तर पथ–प्रदर्शन किया और समय– समय पर मेरी त्रुटियों को दूर करने की प्रेरणा प्रदान की तथा समयानुरूप उनके परिवारजनों ने मुझे आत्मीयता प्रदान कर शोध–प्रबंध को पूरा करने को प्रेरित किया। मैं उनका और उनके परिवारजनों का आजीवन ऋणी रहूँगा।

डी. वी. सी. कॉलेज उरई, राजकीय पुस्तकालय उरई, राजकीय महाविद्यालय जालौन, हिन्दी साहित्य परिषद्, लोकनाथ चौराहा इलाहाबाद, हिन्दी भवन कालपी तथा बुन्देला शोध संस्थान सेंवढ़ा आदि के पुस्तकालयों से जनपद के अनेक कवियों की कृतियाँ उपलब्ध हुयीं। इसके लिये वहाँ के पुस्तकालयाध्यक्ष बधाई के पात्र हैं। जिन विद्वानों के ग्रंथों से

मुझे किंचिन्मात्र भी सहायता मिली है उनके प्रति मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

अन्त में पूजनीय पितामह ठाकुर प्रसाद पचौरी, पितामही श्रीमती ज्ञाना पचौरी, पिता लक्ष्मण प्रसाद पचौरी, माता कमला पचौरी, अग्रज अनिरुद्ध कुमार पचौरी, अंजनी कुमार पचौरी, अश्विनी कुमार पचौरी, भ्रातृजाया रेनू पचौरी, अर्चना पचौरी, वंदना पचौरी तथा बहिन माण्डवी तिवारी आदि ने मुझे गृहकार्य से मुक्त कर शोध–प्रबन्ध पूरा करने के लिये प्रेरित किया। ये तो अपने ही हैं, अपनों को आभार देना उनके सम्मान को चोट पहुँचाना है।

अक्षर कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स, सेंवढ़ा के संचालक श्री ज्योति प्रकाश श्रीवास्तव "अनपढ़ सा'ब" एवं प्रमोदकुमार श्रीवास्तव का मैं हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने इस शोध–प्रबन्ध को सुन्दर, स्वच्छ ढंग से टाइप कर ग्रन्थ का आकार दिया है।

अनुसंधित्सु :

योगेशकुमार पचौरी

अनुक्रम

प्रथम अध्याय :

जालौन जनपद का प्रशासनिक स्वरूप

- भौगोलिक स्थिति
- ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
- जालौन जनपद का सामाजिक गठन
- सांस्कृतिक व धार्मिक स्वरूप
- जालौन जनपद में उपलब्ध
- साहित्य सर्जना का विकास

प्रथम अध्याय

जालौन जनपद का प्रशासनिक स्वरूप

क - भौगोलिक स्थिति

बुन्देलखण्ड के उत्तरी सीमान्त पर स्थित जनपद जालौन स्वतंत्र भारत में रियासतों के उन्मूलनोपरान्त प्रशासनिक इकाई के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। कालक्रमानुसार विविध शासकों के आधिपत्य में यह भू–भाग रहा और आज भी सदियों पूर्व से अपना प्रभावशाली अस्तित्व अक्षुण्ण रखने में समर्थ हैं। त्रिकोणाकार में स्थित जनपद जालौन 26.27^{0} अंश से 25.46^{0} अंश उत्तरी अक्षांश तथा 79.52^{0} से 78.56^{0} अंश पूर्वी देशान्तर रेखाओं के मध्य स्थित है।[1]

इस जिले में पाँच तहसीलें है– 1. जालौन, 2. उरई, 3. कोंच, 4. कालपी, 5. माधौगढ़।[2]

1– हर्षिता भूगोल : जिला जालौन – डॉ. बी. शर्मा, हर्षिता प्रकाशन मंदिर, राजमार्ग उरई, पृष्ठ 3

2– उपरिवत्, पृष्ठ 14

जनपद का सीमांकन मुख्यतः नदियों से है। उत्तर तथा पूर्व में यमुना नदी, दक्षिण तथा पूर्व में बेतवा नदी और पश्चिमी सीमा पर पहूज नदी जनपद की सीमा निर्धारित करती है। पश्चिम में पहूज नदी इस जनपद को भिण्ड जिले से दक्षिण में बेतवा नदी हमीरपुर तथा झाँसी जिलों से और उत्तर तथा पूर्व में यमुना नदी कानपुर तथा इटावा जिलों से पृथक करती है।

जिले का क्षेत्रफल 4565 वर्ग किलोमीटर है।[1] जिले की लम्बाई 95 किलोमीटर तथा चौड़ाई 80 किलोमीटर है।[2] जिले का अधिकांश भू–भाग समतल है। नदियों के किनारों की भूमि तीव्र जल–प्रवाह के कारण ऊँची–नीची एवं भरकीली है। यमुना तथा पहूज नदियों के किनारे बीहड़ अधिक हैं। इन नदियों ने सीमान्त क्षेत्रीय धरातल को काटकर ऊबड़–खाबड़ बना दिया है।[3] सन् 2001 की जनगणना के अनुसार जिले की जनसंख्या 1455859 है। ग्रामीण क्षेत्र में 70 प्रतिशत लोग निवास करते हैं। जिले में शिक्षित पुरुषों का प्रतिशत 58.42 तथा शिक्षित महिलाओं का प्रतिशत 28.59 है।

जनपद जालौन समुद्र तल से लगभग 150 मीटर ऊँचा है। जिले का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है। यहाँ की मिट्टी कहीं पडुआ व दोमट है, कहीं काली, काबर व मार तथा नदियों के किनारों की भूमि कंकरीली एवं राकड़ है। जिले में पहाड़ नहीं के बराबर हैं। जनपद में कृषि योग्य भूमि का औसत अधिक है। नहरों द्वारा सिंचाई का साधन सुलभ होने के कारण खरीफ एवं रबी की फसलें पैदा की जाती है। कहीं–कहीं सरकारी एवं निजी ट्यूबबैल भी उपलब्ध हैं।

1– हर्षिता भूगोल : जिला जालौन – डॉ. बी. शर्मा, हर्षिता प्रकाशन मंदिर, राजमार्ग उरई, पृष्ठ 3

2– उपरिवत्, पृष्ठ 4

3– उपरिवत्, पृष्ठ 5

जनपद की जलवायु शीतोष्ण है। समुद्र से दूर होने के कारण ताप की विषमता रहती है। मई और जून में गर्मी अधिक पड़ती है। ग्रीष्म में तापमान 49° डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जाता है। वर्षा सामान्यतः अषाढ़ से प्रारम्भ होकर क्वाँर मास तक होती हैं इस प्रकार तापान्तर अधिक और जलवायु विषम हो जाती है। जिले में वर्षा वर्ष भर में 70 से 75 सेमी. के लगभग होती है। शीत ऋतु का प्रसार नवम्बर से फरवरी तक रहता है। जनवरी तथा फरवरी माह में सर्दी अधिक पड़ती है। जाड़ों में कहीं–कहीं वर्षा भी होती है। तथा भयंकर कोहरा भी पड़ता है। यह वर्षा रबी की फसल को लाभदायक होती है किन्तु अत्यधिक कोहरे से पाला पड़ने की सम्भावना बढ़ जाती है।

जालौन जिले में कँटीली झाड़ियों वाले वृक्ष पहूज, यमुना तथा बेतबा के जंगलों में पाये जाते हैं। इनसे जलाऊ लकड़ी का व्यवसाय भी पनपता है। जंगलों में इमारती लकड़ी के वृक्ष नहीं हैं। ऊँची–नीची, ऊबड़–खाबड़ एवं भरकीली भूमि पर कँटीले झाड़ ही हैं। जंगलों की घास पशुओं के चरने के काम आती है। जनपद के जंगलों में जंगली जानवर नहीं के बराबर हैं। कहीं–कहीं हिरन, लोमड़ी, खरगोश, सियार, भेड़िए एवं नीलगाय ही उपलब्ध होते हैं। पालतू पशुओं में गाय, भैंस, बकरी, घोड़ा, खच्चर, गदहा तथा सुअर आदि पाये जाते हैं।

कालपी के पास आटा में बकरियों की छिरिया, सलेमपुर में सुअरों की तथा कोंच में बैलों की बहुत बड़ी हाटें लगती हैं। जनपद जालौन खनिज सम्पदा की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं है। भवन निर्माण हेतु नदियों से बालू तथा बजरी एकत्रित कर सभी स्थानों पर भेजी जाती है। जनपद में लगभग सभी कस्बों एवं गावों में मिट्टी के बर्तन बनाने का काम किया जाता है। सम्पूर्ण जिले में खरीफ की फसल में ज्वार, बाजरा, मूँग, उड़द, तिल, धान, सोयाबीन, गन्ना, रोंसा, दरारी तथा अरहर आदि बोए जाते हैं। रबी की फसल में गेंहूं, चना, मटर, मसूर, अलसी, सरसों आदि पैदा किए जाते हैं।

गर्मियों में जहाँ ट्यूब बेल की सुविधा प्राप्त है, वहाँ पिपरमेंट की खेती प्रगति पर है। वन–विभाग जिले में वृक्षारोपण अभियान के तहत कार्यरत है। बोहदपुरा, गोपालपुरा, चमारी एवं कालपी के जंगलों में बृक्षारोपण एवं संरक्षण का दायित्व इसी विभाग का है। औषधि निर्माण हेतु वनस्पतियों का उत्पादन एवं सकारात्मक उपयोग कतिपय स्थानों पर किया जाता है। लेमन ग्रास तथा श्वेतमूसली की खेती भी कहीं–कहीं दिखाई देती है। धुरट में ख़स व केवड़े का उत्पादन कर इत्र बनाने का कार्य बहुत प्राचीन है।

जनपद जालौन की अधिकांश जनसंख्या का जीवनयापन कृषि पर आधारित है।[1] जनसंख्या वृद्धि के कारण कृषि योग्य भूमि का प्रति व्यक्ति औसत ह्रासोन्मुख है, इसलिए शुद्ध बोये गए क्षेत्रफल में गिरावट होती जा रही है। पूर्व में शासकीय सहयोग से सघन कृषि कार्यक्रम कार्यान्वित कर नवीन कृषि योग्य भूमि को उत्पादन के काम में लाया गया है। सिंचाई के समुचित साधन उपलब्ध हैं, इसलिए कृषि उत्पादन में निरन्तर वृद्धि का प्रयास किया जा रहा है। बीज–विपणन केन्द्र नवीन बीज उपलम्ब कराकर उत्पादन वृद्धि में अथक प्रयास कर रहे हैं। कृषि की नवीन वैज्ञानिक पद्धति का भी प्रयोग किया जा रहा है।

सिंचाई अधिकतर नहरों से की जाती है। बेतबा नदी से निर्गत दो नहरें हमीरपुर शाखा तथा कुठौंद शाखा हैं। जिनकी लम्बाई लगभग 1500 किलोमीटर है। जनपद में सर्वाधिक सिंचाई कुठौंद शाखा से होती है। बेतवा, पहूज तथा यमुना नदियों पर विशाल पुल निर्मित हैं। जिनसे जनपद का आवागमन एवं व्यापार दूरस्थ क्षेत्रों से सम्भव होता है। जिले का मुख्य रेलवे स्टेशन उरई है, जो दिल्ली, मुम्बई रेलवे–लाइन पर स्थित है। आवागमन एवं व्यापार के क्षेत्र में इसकी अहम् भूमिका है। एक छोटी रेलवे लाइन भी मौजूद है जो कोंच को एट से जोड़ती है।

1– हर्षिता भूगोल : जिला जालौन – डॉ. बी. शर्मा, हर्षिता प्रकाशन मंदिर, राजमार्ग उरई, पृष्ठ 10

ख - ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

एक निश्वित स्थान अभिधान के रूप में जालौन शब्द में पूर्वपद जाल तथा पर पद वन मिलकर जालवन बना, तत्पश्चात् बिगड़कर जालौन उच्चरित होने लगा। जालौन के नामकरण के सम्बन्ध में एक मान्यता यह है कि इसे जालिम नामक ब्राह्मण ने बसाया था।[1] दूसरी मान्यता के अनुसार यहाँ जालवन मुनि का स्थान होने के कारण यह स्थान जालवन कहलाया, फिर बिगड़कर जालौन हो गया।[2]

राजनीतिक चेतना एवं उथल—पुथल के परिणाम स्वरूप इस राज्य की सीमाएँ घटती—बढ़ती रही हैं। ईसा से 400 वर्ष पूर्व के इतिहास पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि यह क्षेत्र क्रमशः महापद्म नन्द, चन्द्रगुप्त मौर्य, पुष्यमित्र शुंग, कनिष्क, नागवंशी भारशिव, समुद्रगुप्त, हूण राजा तोरमण, परिहारों तथा चंदेलों के आधिपत्य में रहा है।[3] अगस्त 1729 में छत्रसाल और बंगश में संधि के परिणाम स्वरूप बंगश की सेना कालपी से यमुना पार करके अपने इलाके में चली गयी। इस जिले का सम्पूर्ण भाग छत्रसाल के राज्य का भाग बना रहा।

सन् 1732 ई. में गोविन्दपन्त बल्लाल खैर ने जालौन में मराठा राज्य स्थापित किया और इतिहास में गोविन्दपन्त बुन्देला के नाम से प्रसिद्ध हुए।[4] कुछ ही समय में गोविन्दपन्त ने चुर्खी, रायपुर, कनार, जालौन, कोंच, कालपी, मोहम्मदाबाद, एट तथा कैलिया का इलाका अपने छोटे पुत्र गंगाधर गोविन्द को सौंपकर उनका मुख्यालय कालपी में बनाया।

1— सारस्वत, जालौन जनपद विशेषांक — संपा. अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' सन् 2001—2002, पृष्ठ 33

2— बलवंतसिंह — जालौन गजेटियर, पृष्ठ 1

3— सरस्वत (पत्रिका) — सन् 2001—2002, पृष्ठ 33

4— उपरिवत्, पृष्ठ 34

1749 ई. में मराठों ने सिकरी, सुढ़ार आदि को जीतकर कछवायघार के इलाके में सत्ता स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। विभिन्न संघर्षों के बावजूद गोविन्दपन्त अपने राज्य विस्तार में सफलता प्राप्त करते रहे।

16 दिसम्बर सन् 1760 ई. की शाम अताई खाँ और करीम खाँ की सेना ने गोविन्दपन्त के डेरे पर आक्रमण कर दिया। मराठी सेना आक्रमण का सामना न कर सकी। एक सैनिक ने गोविन्दपन्त का सिर धड़ से अलग कर दिया। इस प्रकार जालौन में मराठा राज्य के संस्थापक की मृत्यु हुई। 1766 ई. में भरतपुर के जाट राजा जवाहरसिंह ने सिंध नदी पार कर रामपुरा के राजा कल्याणसिंह को पराजित कर रामपुरा और गोपालपुरा पर अधिकार कर लिया।[1] इस प्रकार जनपद की सभी सीमाएँ जवाहरसिंह के अधिकार में आ गयीं। किन्तु गंगाधरगोविन्द की सक्रियता एवं वीरता ने भरतपुर से जवाहरसिंह द्वारा भेजे गए दीवान दानाशाह को युद्ध में रसद सामग्री पर रोक लगाकर भरतपुर लौट जाने को विवश कर दिया। इस प्रकार 1770 ई. तक जालौन में फिर से मराठों की सत्ता स्थापित हो गयी।

1798 ई. तक गंगाधर गोविन्द वृद्ध हो गए थे। उनके गोविन्द गंगाधर उर्फ नाना नाम का एक पुत्र था। 1801 ई. में अपने पिता की मृत्यु के बाद गोविन्दराव अपनी अल्पायु में ही 1822 ई. में दिवंगत हो गए। गोविन्दराव की मृत्यु के बाद उनके पुत्र बालाराव जालौन के शासक हुए।[2] इनका शासन काल केवल दस वर्ष ही रहा। 1832 ई. में इनकी मृत्यु हो गयी। सन्तान न होने के कारण 1838 ई. में कम्पनी सरकार ने शासन में सुधार लाने के लिए जालौन राज्य का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया तथा कैप्टन डूलन को प्रशासक नियुक्त कर दिया।[3] तत्पश्चात् 1840 ई. में गवर्नन जनरल लार्ड आकलैण्ड ने जालौन राज्य का विलय अंग्रेजी राज्य में कर दिया।

1— सारस्वत (पत्रिका) — सन् 2001—2002, पृष्ठ 34

2— उपरिवत्,

3— उपरिवत्,

जालौन के मराठा राज्य पर ईस्ट इंडिया कम्पनी सरकार का अधिकार हो जाने पर 1844 ई. में सेंगर क्षत्रियों के जगम्मनपुर राज्य को भी अंग्रेजी राज्य में शामिल कर लिया गया। उसके बाद 1853ई. में परगना कालपी और कोंच को जालौन जिले में मिला लिया गया। 1857 ई. की क्रान्ति में सिंधिया ने अंग्रेजों की बहुत मदद की थी। अतः 1861 ई. में इनाम के रूप में गवर्नर जनरल ने परगना इन्दुरखी और माधौगढ़ के 125 गाँव सिंधिया को प्रदान कर दिए। अब जालौन जिले में परगना जालौन, उरई, माधौगढ़, कोंच और कालपी बचे। इसके बाद जालौन जिले में कोई बदलाव नहीं हुआ।

जनपद जालौन में कुछ स्थान ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। जैसे – जगम्मनपुर का पचनदा, जहाँ पर कुवाँरी, चम्बल, सिंध, पहूज और यमुना पाँच नदियों का संगम हैं। कालपी को बुन्देलखण्ड का प्रवेशद्वार माना जाता है। जहाँ पर सूर्यकुण्ड, लंकामीनार, चौरासी गुम्बद, बीरबल का रंगमहल, व्यास मठ तथा सतमठिया मंदिर विशेष आकर्षण के केन्द्र हैं। 'गुरु का इटौरा'' गाँव में रोपण गुरु का एक प्राचीन मंदिर है। कहा जाता है कि मुगल बादशाह अकबर भी रोपण गुरु की ख्याति सुनकर उनके दर्शनार्थ इटौरा आया था। उसने यहाँ पर रोपण गुरु की समाधि का निर्माण भी कराया था।

कोंच में अनेक पीर, पैगम्बर और संतों ने जन्म लेकर इस क्षेत्र को पावन किया है। इसी कड़ी में परमहंस बद्रीदास जी महाराज भी हुए। आज भी उनके शिष्य हिन्दू–मुसलमान श्री बद्रीदास आश्रम में उनकी पूजा–अर्चना करते हैं। उरई में राजा माहिल का तालाब आज भी दर्शनीय स्थल बना हुआ है। तालाब के किनारे गुर्ज पर माहिल के पुत्र अभई की प्रतिमा विशेष आकर्षण का केन्द्र है।

ग - जनपद जालौन का सामाजिक गठन

जालौन जिले का सामान्य जन–जीवन अव्यवस्थित एवं संघर्ष युक्त है। विकास की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का यह जिला पिछड़ा हुआ है। उच्च वर्णों में निम्न स्तरीय जातियों को येन–केन प्रकारेण दबाने की प्रवृत्ति पायी जाती है। यहाँ का सामाजिक गठन कुछ इस प्रकार का है कि निम्न जातियों में संगठन की भावना का पर्याप्त विकास होते हुए भी उच्च स्तरीय जातियाँ कूटनीति एवं भय–प्रदर्शन से उनमें विघटन लाने का प्रयास किया करती हैं। सामान्य रूप से परिश्रम की प्रवृत्ति है। उच्च जातीय व्यक्तियों के सम्पर्क से निम्न स्तर के लोग भी उच्छृंखल प्रवृत्ति की ओर अग्रसर हैं।

जातियाँ

इस भू–भाग में उच्च, मध्य एवं निम्न वर्ण की विभिन्न जातियाँ निवास करती हैं। उच्च वर्ग में ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य। मध्य वर्ग में सुनार, लुहार, कहार, ढीमर, तमोली, कुम्हार, गड़रिया, काछी, भाट, भड़भूँजा, खंगार, नाई, कायस्थ तथा भंगी आदि जातियाँ है। जो अपना–अपना पैतृक व्यवसाय करके जीविकोपार्जन करती हैं।

वर्गभेद की स्थिति

सामाजिक गठन में जाति–भेद की भावना प्रमुख रूप से पाई जाती है। ऊँच–नीच का विचार लोगों की सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रगति अवरुद्ध कर देता है। उच्च, मध्य एवं निम्न वर्गों में पारस्परिक संगठन का प्रायः अभाव ही रहता है। उच्च वर्ग में पूँजीपति, व्यापारी, डॉक्टर तथा वकील आते हैं, जिनमें निम्न वर्ग के शोषण की प्रवृत्ति पायी जाती है। मध्यवर्ग में बुद्धिजीवी समुदाय आता है, जिनका व्यवसाय लगभग निश्चित रहता है। निम्न वर्ग में मजदूर समुदाय आता है जिनका व्यवसाय लगभग अनिश्चित सा रहता है।

परिवार का स्वरूप

सामाजिक जीवन में संयुक्त एवं विभक्त दोनों प्रकार के परिवार उपलब्ध होते हैं। पारिवारिक स्नेह, संगठन एवं सहनशीलता के अभाव में अधिकांशतः प्रवृत्ति विभक्त परिवारों की ओर है। संयुक्त परिवारों का अस्तित्व विलीन होता जा रहा है। पारिवारिक विभाजन का मुख्य कारण संयुक्त परिवार है। संयुक्त परिवार के इच्छुक सहनशील व्यक्तियों का जीवन भी दूभर हो जाता है। स्वार्थपरता की प्रबलता तथा कमरतोड़ मँहगाई भी परिवार विभाजन का एक कारण माना जा सकता है।

पारिवारिक मुखिया

सामान्य रूप से परिवार में बड़ा–बूढ़ा ही मुखिया अथवा मालिक होता है। पिता के न रहने पर या बूढ़े हो जाने पर माँ अथवा बड़ा भाई ही परिवार का मालिक कहा जाता है। परिवार के मुखिया को मालिक कहकर पुकारने की प्रवृत्ति कहीं–कहीं दिखाई देती है। पारिवारिक, सामाजिक एवं आर्थिक सम्बन्धों में मालिक का अन्तिम निर्णय सर्वमान्य होता है। मालिकी के लिये पुरखान्त शब्द व्यवहृत होता है।

परिवार में स्त्रियों की स्थिति

परिवार में स्त्रियों की स्थिति सामान्य है। आर्थिक दृष्टि से समृद्ध परिवारों में सुखमय एवं विपन्न परिवारों में चिन्ताजनक स्थिति रहती है। जिन उच्च जातीय परिवारों में पर्दा–प्रथा है, उनमें स्त्रियाँ घर के अंदर रहने को बाध्य रहती है। निम्न परिवारों में स्त्रियों की स्थिति अपेक्षाकृत स्वतंत्र रहती है तथा कार्यों में भी स्त्रियाँ पुरुषों का सहयोग करतीं हैं। पाश्चात्य प्रभाव एवं वैज्ञानिक प्रगति ने महिलाओं में स्वच्छन्द विचरण की प्रवृत्ति को जाग्रत किया है। तुलनात्मक दृष्टि से शहरी सुशिक्षित महिलाएँ अधिक उन्मुक्त हैं।

आर्थिक स्वरूप

आर्थिक दृष्टि से यह जिला न तो सम्पन्न है न ही विपन्न है। यहाँ का आर्थिक ढाँचा सुदृढ़ा न होकर काम चलाऊ ही कहा जा सकता है। सम्यक् पर्यवेक्षण से ज्ञात होता है कि यहाँ की सत्तर प्रतिशत जनसंख्या अव्यवस्थित अर्थव्यवस्था का शिकार है। जिले की आय के मुख्य स्रोत कृषि, व्यापार, पशुधन तथा लघुउद्योग हैं। इनका विवरण निम्न प्रकार है।

अ - कृषि

यहाँ का सर्वाधिक जन–समूह कृषि कार्य पर अवलम्बित है। कृषि योग्य भूमि में काली, मार, पडुवा तथा कुछ क्षेत्रों में दोमट मिट्टी पायी जाती है। सिंचित क्षेत्रों में खरीफ एवं रबी दोनों फसलें ली जाती हैं। जब कि असिंचित क्षेत्रों में केवल खरीफ की फसल से संतोष कर लिया जाता है। खरीफ में ज्वार, बाजरा, उर्द, मूँग, सोयाबीन, तिल, अरहर तथा मक्का की मुख्य रूप से खेती की जाती है। जबकि रबी के अन्तर्गत गेहूँ, चना, सरसों, अल्सी, मटर तथा मसूर प्रधान हैं। भोजन की दृष्टि से गेहूँ अधिक उपयोगी है। कृषि उपज ही लोगों की आय का मुख्य साधन है। मजदूर वर्ग मजदूरी करके अपना पेट पालता है।

ब - व्यापार

व्यापार की दृष्टि से जिले की प्रगति संतोषप्रद है। जालौन और उरई में कई दाल एवं तेल मिलें हैं, माधौगढ़ में शक्कर मिल तथा कालपी में कागज फैक्ट्री लगी है। जिले में कुछ स्थानों पर चावल की मिलें, पिपरमेंट के प्लान्ट तथा गेहूं पर पॉलिश करने की मशीनें भी हैं। सोयावीन के प्लान्ट भी यत्र–यत्र देखे जाते हैं। जनपद में कई स्थानों पर भवन–निर्माण हेतु ईंट बनाने का काम किया जाता है। जालौन, उरई, कोंच तथा कालपी में बर्फ की फैक्ट्रियाँ भी हैं, जिनसे जिले के कुछ क्षेत्रों में बर्फ निर्यात होती है। प्रमुख गाँवों में सप्ताह में एक या दो बार हाटें लगती हैं, जिससे सब्जी तथा अन्योपयोगी सामग्री सर्वसाधारण को सरलता से उपलब्ध हो जाती है।

तथा धारदार औजारों पर धार निकालने का काम भी किया जाता है। मकानों पर पुताई का काम तथा मांगलिक अवसरों पर सजावट का काम भी मौसमी तौर पर होता है। फल तथा सब्जी बेचने का काम आजकल काफी प्रचलन में है। टूटे–फूटे टीन–टप्पड़ से वस्तु विनिमय का रोजगार भी पनप रहा है। कुछ असामाजिक तत्व चोरी छिपे नकली दवाइयाँ बनाने और बेचने में संलग्न हैं।

य - शिक्षा

शिक्षा के क्षेत्र में यह जिला प्रगति की ओर अग्रसर है। कुछ वर्षों में शासन की सहायता से प्राथमिक, माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक विद्यालय तथा महाविद्यालय स्थान–स्थान पर शिक्षा के विकास हेतु खोले गए हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बालकों को अधिक पढ़ाने एवं शिक्षा में गुणवत्ता लाने की प्रवृत्ति नहीं पायी जाती है। घर–गृहस्थी एवं कृषि कार्यों में बालकों का अधिक सहयोग लिया जाता है। महाविद्यालय स्तर के छात्र भी शिक्षण समय के उपरान्त कृषिकार्य में अपने संरक्षकों का सहयोग करते देखे जाते हैं। कुछ प्रबुद्ध लोग अपने बालकों को प्रशासनिक सेवाओं के लिए भी प्रोत्साहित करते देखे जाते हैं तथा कुछ छात्र चयनित भी होते हैं।

र - स्वास्थ्य

स्वास्थ्य की दृष्टि से जिले का स्तर उन्नतिशील कहा जा सकता है। कुश्ती लड़ने का शौक भी कहीं–कहीं दिखाई देता है। शहरी स्तर पर कुछ प्रशिक्षक व्यायाम शालाएँ भी चलाते हैं। चिकित्सा व्यवस्था सामान्य है। स्वास्थ्य सुधार में प्रगति की सम्भावनाएँ हैं।

ल - परिवहन

जिले में परिवहन की स्थिति सुदृढ़ है। यह जिला बसों के द्वारा भिण्ड, झाँसी, कानपुर, इटावा तथा हमीरपुर के जिलों से सम्बद्ध है। कुछ राजकीय परिवहन दिल्ली, राजस्थान तथा उत्तरांचल से सम्बद्ध है।

ट्रकों द्वारा उत्पादित सामग्री का अन्य प्रान्तों को निर्यात भी किया जाता है। जालौन से ग्वालियर, कानपुर, बाँदा, दिल्ली, जयपुर, आगरा तथा लखनऊ सीधे जाने की व्यवस्था है। कुछ ऐसी छोटी (कम लम्बाई की) सड़कें भी हैं। जो ग्रामीण क्षेत्रों को जिला मुख्य कार्यालय से जोड़ती हैं। यमुना, पहूज तथा बेतवा नदियों पर पुलों का निर्माण होने से यातायात में प्रगति हुई हैं।

व - दस्यु समस्या

दस्यु समस्या के कारण जिले की जनता में पर्याप्त असंतोष व्याप्त है। गाँव–गाँव में पकड़, राहजनी एवं डकैती के अपराध बढ़ रहे हैं। डकैंतों के दलालों ने तो इसे धन्धा बना लिया है। बेहड़ किनारे के ग्रामीण बड़ी सांसत में रहते हैं। कहीं डकेतों का संकट तो कहीं पुलिस का। उनका जीवन–यापन दूभर हो रहा है। पुलिस की निष्क्रियता अपराध वृद्धि में सहायक प्रतीत होती है। जिले की पाँचों तहसीलों में बागी समस्या के कारण व्यक्तियों का जीवनक्रम अत्यन्त संघर्षमय हो गया है। निरीह जनता गाँव छोड़कर शहर में बसने की चेष्टा में रहती है।

उत्तर प्रदेश शासन द्वारा डाकू–उन्मूलन का अभियान चलाए जाने पर खास सफलता नहीं मिली है। लेकिन बारदातें कुछ कम हो गईं हैं।

च - साहित्य

साहित्य के क्षेत्र में जिले का स्तर महत्वपूर्ण है। उच्च स्तरीय कवियों एवं साहित्यकारों में डॉ. आनन्द, बेनीमाधव तिवारी, कालीकवि, श्रीपति मिश्र, बीरबल, कृष्ण बल्देव वर्मा, नरेन्द्र मोहन (संस्थापक दैनिक जागरण) तथा मलूक दास आदि कवि भी इसी जिले की उपज थे। पद्य के साथ गद्य के क्षेत्र में भी जनपद के साहित्यकार अग्रगण्य हैं। निबन्ध, नाटक, समीक्षा, आलोचना तथा कहानी के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई है। समय–समय पर कवि गोष्ठियाँ एवं सेमिनार भी आयोजित होते रहते है। विचार गोष्ठियाँ तथा साहित्यिक प्रतियोगिताएँ भी हुआ करती हैं।

छ - संगीत

संगीत के क्षेत्र में शास्त्रीय संगीत का प्रचार बहुत कम है। ग्रामीण स्तर पर नौटंकी, भजन, अछरी तथा फाग और रामलीला का प्रचार पर्याप्त रूप में पाया जाता है। संगीत प्रेमी ढोलक, हारमोलियम की संगत के साथ भजन, कीर्तन एवं रामधुन गाते हैं। शहरी क्षेत्रों में कुछ संगीत अध्यापक प्राइवेट ट्यूशन द्वारा गायन एवं वादन कलाओं की शिक्षा दिया करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बुन्देली गीतों का अधिक प्रचार है। इनमें लोकगीतों की प्रमुखता है।

घ - सांस्कृतिक व धार्मिक स्वरूप

अ- धर्म

जिले की अधिकांश जनसंख्या धर्मावलम्बी है। यहाँ का सामान्य जन–जीवन सनातन धर्म से प्रभावित है। लोग धार्मिक कृत्यों में अधिक विश्वास रखते है। रामायण, भागवत्, महाभारत पढ़ने एवं सुनने में अत्यधिक श्रद्धा दिखाई देती है। अश्विन एवं चैत्र माह में नवदुर्गा के अवसर पर जबारे–बारी बोने की प्रथा है। देवी गीत गाकर लोग दुर्गा माता के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं। देवी–देवताओं की पूजा से शारीरिक कष्टों का निवारण हो जाता है। ऐसा दृढ़ विश्वास लोगों में व्याप्त है।

ग्रामीण देवी–देवताओं में सुहागिलें, बालक, बालिकाएँ, अउत, कारसदेव, घटोई, कालिका, सईयद आदि को पूजने की प्रवृत्ति है। अषाढ़ माह में वर्ष भर की कल्याण कामना से गाँव के सभी देवता पूजे जाते हैं। जैन मतालम्बी महावीर स्वामी के मंदिरों में नित्यप्रति दर्शनार्थ जाते हैं। मुसलमान मस्जिदों में जाकर नमाज पढ़ते हैं। रोजा भी रखते हैं। रामायण का अखण्ड पारायण तथा अखण्ड भगवन्नाम संकीर्तन यदा–कदा होते रहते हैं।

आ- उत्सव

अधिकांश उत्सव धार्मिक भावना के फलस्वरूप आयोजित होते हैं। रक्षाबन्धन के अवसर पर भुंजरियों का उत्सव प्रायः छोटे–छोटे गाँवों में भी होता है। जालौन, कोंच, उरई तथा कालपी में रामलीला के अंतर्गत दशहरा के उत्सव में रावण व मेघनाद के दीर्घाकार पुतले बनाकर जलाये जाते हैं। उत्तर भाद्रपद एकादशी को भगवान के विग्रह के जल–बिहार का उत्सव बड़ी धूमधाम से होता है।

महाशिवरात्रि के पावन पर्व पर शिवभक्त विशाल संख्या में टप्पे गाते हुए बिठूर तथा लोदेश्वर से गंगाजल लाते हैं तथा अपने निकटस्थ प्रसिद्ध शिवलिंग पर श्रद्धा पूर्वक चढ़ाते हैं। मुहर्रम के अवसर पर मुस्लिम बंधु ताजिया निकालते हैं। जैन सम्प्रदाय में जलेब का उत्सव आयोजित होता है, जिसमें महावीर स्वामी की मूर्ति विमान में रखकर घुमाई जाती है।

इ - मेले

मेलों का आयोजन परम्परागत रूप से होता है। जिले में कुछ ही मेले हैं, जो विशेष महत्वपूर्ण हैं। जैसे– जालौन में बराहीं का मेला, कोंच में दशहरा मेला, उरई में ठड़ेश्वरी मंदिर प्राँगण में बुढ़वा मंगल का मेला तथा कालपी में चैत्र में नवदुर्गा मेला बड़ी धूम–धाम से आयोजित किया जाता है। पशुओं के छोटे–छोटे मेलों के लिए 'हाट' शब्द व्यवहृत होता है। सरावन तथा हदरुख के मेले में पशुओं की संख्या एक लाख तक पहुँच जाती है। पशु विक्री हेतु कुछ सप्ताहिक हाटें उरई, कोंच तथा आटा में आयोजित होती हैं। मेलों में साँस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है।

ई - व्रत

व्रत की परम्परा धर्म से सम्बद्ध है। स्त्रियों में व्रत रखने की भावना उनकी धार्मिक श्रद्धा एवं आस्था की सूचक है। पुरुषों में व्रत रखने

की परम्परा बहुत कम है। स्त्रियों के व्रत जैसे– करवा चौथ, शिवरात्रि, अनन्त चतुर्दशी, सन्तान–सप्तमी, महालक्ष्मी, तीजा, हलषष्ठी आदि हैं।

उ - त्यौहार

हिन्दू और मुसलमान सभी अपने–अपने त्योहारों को बड़े उत्साह से मनाते हैं, लेकिन पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में त्योहारों के प्रति आस्था का अभाव सा प्रतीत होता है। मँहगाई इसका मूल कारण है। फिर भी निर्धन परिवारों में ऋण लेकर त्योहार मनाना देखा जाता है। मुसलमानों में अपेक्षाकृत अधिक उत्साह पाया जाता है। हिन्दुओं के त्योहारों जैसे – होली, दीवाली, रक्षाबन्धन, दशहरा आदि हैं। इसी तरह मुसलमानों के भी त्योहार बकराईद मुहर्रम आदि हैं।

त्योहारों पर सहृदयता पूर्वक मेल–मिलाप की संस्कृति सम्पूर्ण जनपद में मौजूद हैं। हिन्दू होली, रक्षाबन्धन तथा दीपावली के अवसर पर तथा मुसलमान ईद के अवसर पर परस्पर मेल–जोल को साकार करते हैं।

ऊ - वेश-भूषा

यहाँ के लोगों की वेश–भूषा साधारण है। वृद्ध व्यक्ति धोती –कुर्ता, साफी पहनते हैं। पंचा, बण्डी किसानों एवं मजदूरों में अधिकतर पहने जाते हैं। शिक्षित वर्ग में कुर्ता, धोती, कमीज पायजामा, पैन्ट, बुशर्ट, कोट तथा सदरी पहनने की परम्परा है। निम्न जातीय स्त्रियों में लहँगा पहना जाता है। लहँगा के साथ पहना जाने वाला लुँगरा तथा ऊर्ध्ववस्त्र सलूका है। उच्च जातीय स्त्रियों में धोती, साड़ी, पेटीकोट तथा बिलाउज पहनने की प्रथा है। आधुनिकता से प्रभावित महिलाएँ सलवार–कुर्ता भी पहनती हैं।

ए - लोक - रुचियाँ

इस जिले में निवास कर रहीं क्षत्रिय जातियाँ किसी न किसी काल में शासक रहीं हैं। परिवर्तित होती सत्ताओं ने शासन उनके

अधिकार से छीन लिया। उनके अधिकार कम हुए, परन्तु शासन करने की अदम्य लालसा कम नहीं हुई। इसी से यहाँ भय प्रदर्शन, मूछों पर ताव देना और धौंस जमाना जिले के लोक जीवन में गहराई तक व्याप्त है। ठगना और ठगवाना, लूटना और लुटवाना, शोषण करना और करवाना, कानून का उल्लंघन करना और करवाना वहाँ लोक–रुचियों में समाया हुआ है।

बालकों, युवाओं और वृद्धों में अपनी–अपनी रुचि के खेल हैं। बच्चे अन्टी, गोली, कबड्डी, तासमार और क्रिकेट, आँख मिचौनी में डूब जाते हैं। तो जवान और बूढ़े भी ताश, चौपर तथा शतरंज में व्यस्त रहते हैं।

ऐ - लोक गीत

लोक गीत सामान्य जन–जीवन की सांस्कृतिक धरोहर के रूप में पूर्ण–रूपेण सुरक्षित हैं, जिनमें यहाँ की संस्कृति का प्रतिबिम्ब स्पष्ट झलकता प्रतीत होता है। जालौन जिले का जन–मानस लोक गीतों के माध्यम से लोक–रुचि को प्रकट करता है। विभिन्न अवसरों पर संस्कारों से सम्बद्ध लोक गीत गाकर हार्दिक हर्ष एवं विषाद व्यक्त किया जाता है। लोकगीतों की सुरक्षा पुरुषों की अपेक्षा त्रियों में अत्यधिक रहती है। यहाँ फाग, अछरी, ओहरे, भतैया, जेवनार, जनेले (सोहरे) बधाए, बन्ना, भौंरा आदि लोक गीत ग्रामीण क्षेत्रों में समय–समय पर सुने जाते हैं। इनका लिखित रूप बहुत कम उपलब्ध होता है। अशिक्षितों में सुनकर ही सीखने की परम्परा है।

ड. - जनपद जालौन में उपलब्ध साहित्य सर्जना का विकास

बुन्देलखण्ड अपनी सांस्कृतिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक तथा पुरातात्विक उपलब्धियों के कारण पुरातन काल से परम गौरवान्वित रहा है। साहित्य के व्यापक क्षेत्र में राष्ट्रभाषा हिन्दी की विविध विधाएँ बुन्देलखण्ड में पल्लवित, पुष्पित होकर अपनी अमंद मकरंद मधु–निधि से सहृदय को

परितृप्त करती रही हैं। जालौन जनपद बुन्देलखण्ड का उत्तर वर्ती भू–भाग यमुना, बेतवा और पहूज नदियों से अभिसिंचित हैं।[1] इन नदियों ने यहाँ के जीवन को सद्‌विचारों से समृद्ध किया है। सद् विचार साहित्य–सर्जना के प्रेरक होते हैं। सदियों पूर्व से इस जनपद में साहित्य–सर्जना क्रमिक गतिमान रही है।

उपलब्ध साहित्य–सर्जना का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि जनपद के प्रारम्भिक हिन्दी कवियों में महाराजा बीरबल का नाम उल्लेखनीय है। स्व. प्रतिपालसिंह ने अपने 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में इनका नाम रेखांकित किया है। हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में सर्वांगनिरूपण करने वाले आचार्यों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण नाम है आचार्य श्रीपति मिश्र का। आपका जन्म सम्वत् 1740 के लगभग कालपी में हुआ।[2] आप गौड़ वंशीय ब्राह्मण पं. अनूपराय के पुत्र थे। डॉ. लक्ष्मीधर मालवीय ने 'श्रीपति मिश्र ग्रंथावली' का सम्पादन किया, जिसमें इनके दस ग्रन्थों का उल्लेख है।

रचनाकारों की उपलब्ध साहित्य–सर्जना के आधार पर श्रीपति मिश्र के बाद रीति परम्परा के सशक्त कवि कालीदत्त नागर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। तंत्र साधना में सिद्धहस्त कवि नागर के हनुमत्पताका, गंगा गुण मंजरी, छबि रत्नम् तथा रसिक विनोद चार गंथ प्रकाश में आये हैं, जिनसे इनकी उच्चकोटि की काव्य–प्रतिभा, प्रौढ़ अभिव्यक्ति तथा गम्भीर ज्ञान का परिचय मिलता है।[3]

पण्डित रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' ऐतिहासिक नगरी कालपी में पण्डित गिरधारी लाल गुबरेले के पुत्र थे। इनका जन्म मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष

1– सारस्वत – सन् 2001–2002, पृष्ठ 85

2– जालौन जनपद के साहित्यकार – त्रैमासिक पत्रिका 'सबकी खैर खबर' संपा. नासिर अली नदीम, पृष्ठ 7

3– उपरिवत्, पृष्ठ 39

की अष्टमी सोमवार को सम्वत् 1918 में हुआ। इनकी प्रौढ़तम कृति 'रत्नेश शतक' उपलब्ध है, जिसमें भक्ति और श्रृंगार विषयक एक सौ एक छन्द हैं।[1] देश के प्रारम्भिक कवि सम्मेलनों के माध्यम से जन–जागरण करने वाले श्री द्वारिका प्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र' का जन्म सम्वत् 1946 विक्रमी में कालपी में हुआ। आप हिन्दी, अंग्रेजी बंगला, गुजराती, उर्दू और संस्कृत भाषाओं के ज्ञाता थे।[2] इनकी अट्ठारह पुस्तकों में केवल आठ प्रकाशित हो सकीं, शेष अप्रकाशित हैं।

स्व. बेनीमाधव तिवारी जनपद जालौन ही नहीं अपितु समूचे बुन्देलखण्ड के गौरव थे। राष्ट्रीय गगन में यह देदीप्यमान नक्षत्र सम्वत् 1947 आषाढ़ शुक्ल 14 उत्तराषाढ़ नक्षत्र में उदय हुआ तथा यावज्जीवन अनूठी लगन और निर्भीकता के साथ राष्ट्र की सेवा करते हुए अनन्त के गर्भ में पौष कृष्ण 9 बुधवार सम्वत् 2009 की रात्रि में अस्त हो गया। तिवारी जी राष्ट्रीय और साहित्यिक चेतना जाग्रत करने में पांक्तेय थे।[3] आप कुशल कवि, सिद्ध हस्त लेखक, प्रतिभा सम्पन्न राजनीतिज्ञ और दूरदर्शी पुरुष थे। 'उरई एकादशी' में उनकी कवित्व प्रतिभा का चमत्कार देखने योग्य है।

हिन्दी कवि सम्मेलन मंच राष्ट्रीय ख्याति के ओजस्वी कवि डॉ. आनन्द का चिर ऋणी रहेगा। आपका जन्म सन् 1900 ई. में हुआ। आपके पिता पं. गोविन्द राव आशु कवि थे। विरासत में उपलब्ध काव्य–प्रतिभा का प्रदर्शन डॉ. आनन्द ने सन् 1932 से प्रारम्भ किया था। दिल्ली के लाल किले पर पठित 'चीन और पाकिस्तान' विषयक कविता ने तथा 'झाँसी की रानी' महाकाव्य ने आपको काव्य जगत में अमर बना दिया।[4] ब्रज भाषा में

1– जालौन जनपद के साहित्यकार– त्रैमासिक पत्रिका 'सबकी खैर खबर' संपा. नासिर अली नदीम, पृष्ठ 7
2– सारस्वत् सन् 2001–2002, पृष्ठ 86
3– जालौन जनपद के साहित्यकार – त्रैमासिक पत्रिका 'सबकी खैर खबर' संपा. नासिर अली नदीम, पृष्ठ 8
4– सारस्वत् सन् 2001–2002 पृष्ठ 87

धनाक्षरियाँ, बुन्देली गीत, हास्य एवं व्यंग्य पूर्ण रचनाओं ने आपकी काव्य प्रतिभा को उजागर किया। आपके 'झाँसी की रानी' एम.एल.ए. राज, सन् अड़तालीस, दारुल–शफा, पब्लिक– इन्ट्रेस्ट तथा शक्ति–निदान आदि रचनाएँ उपलब्ध हैं। वैश्या सती आपका अप्रकाशित नाटक हैं।

पं. शिवसहाय 'आरण्यक' का जन्म सन् 1908 ई. में रिनियाँ ग्राम में हुआ। आपका चिन्तन व्यापक, विचार प्रौढ़ एवं शैली परिष्कृत हैं। शब्द चयन, कल्पना की उड़ान तथा गीति काव्य की दृष्टि से आपका काव्य अनूठा है। आपका 'देवव्रत' प्रबन्ध काव्य, काव्य क्षेत्र में सराहनीय है। शेष दस रचनाएँ अप्रकाशित हैं। श्री शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' (जन्म एक जुलाई सन् 1910) स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकार एवं शीर्षस्थ अधिवक्ताओं में थे। आपने ब्रज भाषा एवं खड़ी बोली दोनों को अपनी रचनाओं का माध्यम बनाया। 'हँसते फूल' आपका प्रकाशित काव्य संग्रह है तथा शैव्या–विलाप अप्रकाशित लघु प्रबन्ध–काव्य है।

पं. दशाराम मिश्र का जन्म सन् 1910 ई. में दहगुवाँ तहसील जालौन में हुआ। आपने बुन्देली हास्य–व्यंग्य को नयी दिशा प्रदान की तथा कुछ गम्भीर एवं चिन्तन प्रधान काव्य जैसे – अश्वत्थामा, यमुना गुणमंजरी भी लिखे। श्री भगवान दास शुक्ल 'दास' का जन्म 3 मई 1912 ई. को कोंच में हुआ। आपने श्रीमद् भागवत गीता का पद्यानुवाद तथा रामायण को गीतों के रूप में प्रस्तुत किया। श्री मातादीन गुप्त (जालौन) का जन्म सन् 1913 ई. में हुआ। आपकी स्फुट रचनाओं में राष्ट्रीय भावना एवं मानवीय संवेदना का स्वर मुखरित हुआ हैं।

ठा. भगीरथसिंह 'तकदीर' का जन्म नूरपुर–जालौन में सन् 1921 में हुआ। पुरु और दुर्योधन उनके प्रबन्ध काव्य हैं। रति–संयोग (दोहे) तथा 'मिलिबो न भूलिओ' ब्रजभाषा में लिखे गए सरस काव्य हैं। पं. प्रभुदयाल नायक (औरय्या) ने 'जगत्गुरु आद्य शंकराचार्य' खण्ड काव्य लिखा। श्री सच्चिदानन्द 'कुसुमाकर' ने रीति–कालीन परिपाटी पर काव्य

रचना की। घनाक्षरी लिखने में आप सिद्धहस्त हैं। श्री रामस्वरूप 'सिंदूर' का जन्म सन् 1930 ई. में दहगुवाँ ग्राम में हुआ। आपके कई काव्य संग्रह प्रकाशित हैं।

श्री शिवानन्द मिश्र 'बुन्देला' इस जनपद के प्रतिष्ठित कवियों में हैं। आपकी बुन्देली रचनाओं में राष्ट्रीयता और देश भक्ति का स्वर मुखरित हुआ है। 'देखो जो पीरो पट' आपका सद्यः प्रकाशित काव्य संग्रह है। आपने गीत, कहानियाँ तथा अन्य स्फुट कविताएँ लिखीं। श्री राधेश्याम दाँतरे जनपद के प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं। आपके प्रणय गीत, राष्ट्रीय कविताएँ एवं व्यंग्य भी चर्चित हैं।

श्री राममोहन शर्मा ने राष्ट्रीय एवं देशभक्ति की रचनाएँ लिखीं। 'मर्माहत अयोध्या' आपका प्रकाशित लघु काव्य है। हरिनारायण श्रीवास्तव 'विकल' ने अपनी धारदार व्यंग्य रचनाओं से अपनी साहित्यक छवि निर्मित की आपके कवित्व को प्रधानता प्रदान कर 'सबकी खैर खबर' पत्रिका ने एक परिचयांक प्रकाशित किया है। स्व. संतोष दीक्षित की रचना धर्मिता कुछ अलग ही है। आपके गीतों में श्रृंगार का माधुर्य झलकता है। स्व. अवधबिहारी लोहिया 'कण' जी अच्छे गीतकार थे। रामरूप 'पंकज' वीर रसात्मक रचनाएँ लिखते हैं। लाला हरदौल पर इनका एक गीति नाट्य प्रकाशित है। श्री यज्ञ दत्त त्रिपाठी का 'तपस्या के प्रसून' खण्ड काव्य प्रकाशित है। यह खण्ड काव्य अप्सरा मेनका और महर्षि विश्वामित्र के पौराणिक कथा प्रसंग पर आधारित कोमलकान्त पदावली में विरचित आज के नूतन परिप्रेक्ष्य में विगत कल की कहानी को समेटे हुए है।

श्री पूरन मिश्र 'पूरन' तथा माया हरिश्याम 'पारथ' अपने विशिष्ट काव्य माधुर्य के लिए चर्चित हैं। स्व. आदर्श 'प्रहरी' की प्रशंसा में जितना कहा जाये उतना कम है। बजरंग विश्नोई का विस्थितियाँ, काव्य संग्रह प्रकाशित है। श्रीमती डॉ. वीणा श्रीवास्तव अपने मधुर गीतों एवं गजलों से श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर देती है। योगेश्वरी प्रसाद 'अलि' का **'बात कर**

गए नयन' काव्य संग्रह प्रकाशित है। परमात्मा शरण शुक्ल 'गीतेश' रवीन्द्र शर्मा, संतोष सोनकिया 'नवरस' नासिर अली 'नदीम' पं. रविशंकर आदि कवि एवं गीतकार अपनी काव्य रचनाओं से विकास के पथ पर अग्रसर प्रतीत होते हैं।

आलोचना एवं समीक्षा के क्षेत्र में डॉ. रामस्वरूप खरे (अनेक रचनाएँ प्रकाशित) विद्वान एवं श्रेष्ठ साहित्यकार हैं। डॉ. रामशंकर द्विवेदी अनुवाद, काव्य रचना, समीक्षा, आलोचना एवं शोध आलेख के क्षेत्र में अग्रगण्य है। डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, डॉ. श्रीमती नीलम 'मुकेश' डॉ. राजेन्द्र पुरवार, डॉ. हरिमोहन पुरवार तथा अयोध्याप्रसाद 'कुमुद' जी काव्य रचना, ऐतिहासिक लेख तथा पत्रकारिता में अपना विकल्प नहीं रखते। डॉ. दिनेश चंद्र द्विवेदी तथा श्री मिथिलेस द्विवेदी साहित्य क्षेत्र में विलक्षण प्रतिभा के परिचायक हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि जनपद जालौन में यदि एक ओर स्फुट काव्य रचना, खण्ड–काव्य तथा प्रबन्ध–काव्य उपलब्ध हैं तो दूसरी ओर उपन्यास, निबन्ध एवं कहानी संग्रह भी उपलब्ध हैं। समालोचना तथा समीक्षा के क्षेत्र में यदि काम हुआ है तो शोधपरक आलेख भी लिखे गए हैं। साहित्यक पत्रकारिता भी अछूती नहीं रही। इस प्रकार गद्य एवं पद्य दोनों ही क्षेत्रों में जनपद जालौन का उपलब्ध साहित्य समृद्ध है तथा भावी साहित्यकारों का मार्ग निर्देशन करने में सक्षम है। जनपद की साहित्य सर्जना पर अगले अध्यायों में विस्तार से विचार किया जावेगा।

द्वितीय अध्याय :

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व का साहित्यिक परिवेश

द्वितीय अध्याय

2-0 उन्नीसवी शताब्दी के पूर्व का साहित्यक परिवेश

हिन्दी साहित्येतिहास के काल विभाजन को प्रामाणिक मानकर उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व साहित्यिक परिवेश पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है। कि तत्कालीन साहित्य–सर्जना में भक्ति एवं श्रृंगार परक कविता प्रचलन में थी। कतिपय रचनाकार भक्ति की सरस स्रोतस्विनी प्रवाहित कर अपने आराध्य की अर्चना, वन्दना में व्यस्त थे तो कुछ आश्रयदाताओं को खुश करने के लिए नायिका के नख–शिख वर्णन में ही अपने जीवन को सफल मानते थे। कुछ ऐसे रचनाकार भी थे जो स्वतंत्र सर्जना में संलग्न रहकर वीर भावना एवं नीतिपरक रचनाएँ करते थे।

भक्ति रस की रचनाओं के मूल में साम्प्रदायिक सद्भावना तथा इष्ट के प्रति गहरी आस्था थी। श्रृंगारिक रचनाओं की प्रेरणा एवं प्रोत्साहन का कारण था, आश्रय दाताओं से प्राप्त धन एवं सम्मान। राजाश्रय के कारण राजाओं की मनोवृत्ति का ध्यान रखना पड़ता था। उनका अतिरंजित प्रशस्ति–गायन करना पड़ता था। अतिरंजित शैली में अलंकार–चमत्कार विशेष था। राजाश्रित कवियों को स्वतंत्रता नहीं थी, जबकि स्वतंत्रता साहित्य सर्जना की प्रथम अनिवार्यता है।[1]

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 284

उस काल के कवि भावुक, सहृदय और निपुण थे। उनकी रचनाओं में अलंकारों के सरस, हृदयग्राही उदाहरण प्रचुरता से उपलब्ध हैं। अलंकारों के साथ नायिका भेद पर विशेष दृष्टि रही। श्रृंगार रस का आलम्बन नायिका थी, इसीलिए नायिका का नख–शिख वर्णन ही प्रमुख रहा है। राधा–माधव की श्रृंगारिक रचनाओं में भक्ति–भावना नाम–मात्र की थी। वे **'आगे के सुकवि रीझि हैं तो कविताई, न तु राधा कन्हाई सुमिरन को बहानो है'** मानकर चलते थे तथा **'कूलन में केलिन कछारन में कुंजन में और 'वनन में बागन में बगरो बसंत है'** जैसी रचनाओं को प्रमुखता देते थे। कुछ कवियों ने ऋतु वर्णन तथा 'बारहमासा' भी लिखे हैं। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि उस युग की काव्यधारा एक सीमित क्षेत्र में होकर प्रवाहित हुई है। कविता में गम्भीर विषयों को स्थान नहीं मिला है।

भाषा के क्षेत्र में ब्रज और अवधी दोनों का प्रयोग हुआ है। व्याकरण द्वारा भाषा की समुचित व्यवस्था न होने से ब्रजभाषा सदोष थी। शब्दों के शुद्ध प्रयोग न होकर विकृत प्रयोग अधिकतर मिलते हैं। मुसलमानों के सम्पर्क से साहित्य में फारसी के शब्दों का प्रयोग होता था। रचना शैली में मुक्तकों का प्राधान्य था। छप्पय, दोहा, कवित्त तथा सवैया मुक्तकों के अधिक अनुकूल थे। हिन्दी साहित्य के नाटक, उपन्यास, कहानी आदि अंगों पर किसी रचना विशेष का उल्लेख नहीं मिलता। इसका सम्भवतः एक कारण यह भी था कि उस प्रकार की रचनाओं के उपयुक्त हिन्दी गद्य का विकास पूर्णतया नहीं हुआ था। दूसरे शासक और जनता की अभिरुचि जितनी अधिक काव्य की ओर थी उतनी साहित्य के किसी अन्य अंग की ओर नहीं।[1]

जालौन जनपद में अवतरित उस काल के साहित्यकारों में बीरबल (महेशदास), आचार्य श्रीपति मिश्र, फतेहसिंह कायस्थ, मलूकदास खत्री, कमलाजन कायस्थ, रतिभान आदि के नाम प्रमुख हैं। इनमें फतेहसिंह,

---

1— अकबरी दरबार के हिन्दी कवि – डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय प्रकाशन, सम्वत् 2007 विक्रमी, पृष्ठ 7–8

मलूकदास, कमलाजन कायस्थ तथा रतिभान की रचनाएँ अनुपलब्ध हैं। स्व. प्रतिपालसिंह जी ने अपने 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' ग्रंथ के प्रथम खण्ड में इस जनपद के जिन प्राचीन कवियों का उल्लेख किया है, उनमें पहला नाम बीरबल का है। अपनी कवित्व शक्ति एवं वाक् चातुर्य के कारण बीरबल सम्राट अकबर के दरबार मे पहुंच गए थे।

मिश्र बन्धु विनोद और हिन्दी साहित्य के अन्य इतिहास ग्रन्थों में आचार्य श्रीपति मिश्र का नाम जनपदीय साहित्याकाश के अत्यन्त जाज्वल्यमान नक्षत्र के रूप में मिलता है। यह रीतिकालीन काव्य परम्परा में सर्वांगनिरूपक आचार्य के रूप में विख्यात हुए। तत्कालीन परिवेश में भक्ति एवं श्रृंगारिक रचनाओं का जो प्रवाह गतिमान था, बीरबल एवं आचार्य श्रीपति का रचनाक्रम भी उसी के अनुरूप था।

बीरबल 'ब्रह्म' उपनाम से काव्य रचना करते थे। 'ब्रह्म' की रचनाओं पर रीतिकालीन प्रवृत्तियों का पूरा प्रभाव था। अपनी प्रतिभा एवं वाक् चातुर्य से आश्रयदाता को रिझाना, विविध उपमानों के माध्यम से नायिका का नख–शिख वर्णन करना, भक्ति, नीति एवं उपदेश विषयक काव्य सृजन ही उनका प्रतिपाद्य था। भक्ति विषयक रचनाओं में 'ब्रह्म' कहीं **'तुमहीं करता तुम ही भरता'** कहकर परमात्मा के प्रति समर्पण भाव व्यक्त करते हैं तो कहीं 'प्राण चढ़ाय के जोग करो, काहे करो व्रत पुंज विशाला' कहकर निर्गुण ईश्वर प्राप्ति की कठिनाइयों का उल्लेख कर **'जाय लखो किन वा नन्दराय के आँगने खेलत नन्द को लाला'** कहकर सगुण भक्ति को सहज सिद्ध करते हैं। कहीं **'जो हरि न्यारो तो न्यारो नहीं जो हरि न्यारो तो बोलत को है'** कहकर ईश्वर की सर्वव्यापकता प्रमाणित करते हैं, तो कहीं पावन पयस्विनी भगीरथी की स्तुति करते हैं। श्रृंगार के संयोग एवं वियोग दोनों पक्षों का बड़ा ही आकर्षक एवं मनोहारी वर्णन उनकी रचनाओं में मिलता है।

मानवती, प्रौढ़ा, खण्डिता, प्रोषित पतिका आदि नायिकाओं के मुग्धकारी वर्णन 'ब्रह्म' की रचनाओं में सहज उपलध हैं। ऋतु वर्णन,

समस्यापूर्ति, शिक्षा तथा उपदेशात्मक कविता के साथ अन्य विविध वर्णनों में उनकी प्रतिभा के दर्शन होते हैं। आचार्य श्रीपति मिश्र ने अपने ग्रन्थों में काव्य के समस्त अंगों काव्य लक्षण, काव्य हेतु, काव्य प्रयोजन, काव्य भेद, काव्य की आत्मा (रस तथा ध्वनि) शब्द शक्ति, गुण दोष, रीति, अलंकार और छन्द का विवेचन कर सर्वागनिरूपक आचार्यों में विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है। विषय की व्यापकता, विस्तृत शास्त्रीय आधार, गंभीर चिंतन, मार्मिक उद्भावना प्रवृत्ति, आलोचक के लिए अपेक्षित आत्मविश्वास और साहस, सुबोध एवं स्पष्ट निरूपण शैली आदि ऐसी विशेषताएँ हैं जो इस काल के इतर वर्गों के रीति निरूपक कवियों की तुलना में इन्हें सहज ही ऊँचे स्थान पर प्रतिष्ठित कर देती हैं।[1]

पं. रामचन्द्र शुक्ल ने इनमें आचार्यत्व के अतिरिक्त कवित्व भी उच्चकोटि का स्वीकार किया है।[2] समीक्षात्मक विवेचन की दृष्टि से बीरबल (ब्रह्म) तथा आचार्य श्रीपति मिश्र का सामान्य परिचय एवं व्यक्तित्व विचारणीय है।

2-1 साहित्यकारों का सामान्य परिचय एवं व्यक्तित्व

2-1-1 बीरबल (महेशदास)

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में बीरबल का जन्म स्थान 'तिकवाँपुर' माना है, जो वर्तमान में कानपुर देहात के सीमान्तर्गत स्थित है। यह स्थान पूर्व में कालपी सरकार के अन्तर्गत आता था। इसीलिए बीरबल को जालौन जनपद में अवतरित माना जा सकता है। शिवसिंह सरोज में इनका नाम महेशदास दुबे तथा जन्म स्थान

1— हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 309

2— हिन्दी साहित्य का इतिहास – पं. रामचन्द्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2004 ई. पृष्ठ 206

हमीरपुर का कोई गाँव बतलाया गया है। मुंशी देवीप्रसाद ने इनका जन्म स्थान कालपी सिद्ध किया है।[1] इस सम्बन्ध में अपने ग्रन्थ शिवराज भूषण में कविवर भूषण ने भी लिखा है–

द्विज कन्नौज कुल कश्यपी, रत्नाकर सुत धीर,

बसत त्रिविक्रमपुर सदा, तरनि तनूजा तीर।

वीर बीरबल से जहाँ, उपजे कंवि अरु भूप,

देव, बिहारीश्वर जहाँ, विश्वेश्वर तद्रूप।।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में 'कवि और भूप' से अकबरी दरबारी के राजा वीरबल का ही संकेत मिलता है।[3] सम्भव है 'तिकवाँपुर' पुर में जन्म लेने के पश्चात् वीरबल कालपी रहने लगे हों। कालपी में वीरबल के रंगमहल के जीर्णावशेष अब भी विद्यमान हैं। राजा वीरबल का बसाया हुआ अकबरपुर गाँव कालपी के समीप ही हैं। उपर्युक्त तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि वीरबल का जन्म स्थान कालपी या कालपी के समीप ही है। आचार्य श्रीपति ने भी अपने 'काव्य सुधाकर' ग्रन्थ में अकबर द्वारा वीरबल को 'महाराजा वीरबल की उपाधि एवं सम्मान देने का संकेत दिया है–

अकबर वरु दिल्लीस तैं, पायो मान अनूप।

ब्यालहिं में तब ह्वै गयो, सुकवि वीरबल भूप।।[4]

वीरबल के जन्मकाल के विषय में विद्वानों में मतभेद है पण्डित रामनरेश त्रिपाठी तथा मिश्र बन्धुओं ने इनका जन्म सम्वत् 1585 माना है, दीवान प्रतिपालसिंह ने 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' ग्रन्थ में वीरबल (महेशदास) का जन्म सन् 1628 ई. में कालपी में होना बतलाया है, किन्तु

1– राजा बीरबल – मुंशी देवीप्रसाद, पृष्ठ 43

2– शिवराज–भूषण, छन्द संख्या 26–27, पृष्ठ 8

3– अकबरी दरबार के हिन्दी कवि – डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, पृष्ठ 80

4– काव्य सुधाकर – छन्द संख्या 5, श्रीपति मिर ग्रंथावली– आचार्य श्रीपति, पृष्ठ 207

ऐतिहासिक ग्रन्थों तथा अन्य दस्तावेजों के आधार पर सम्वत् 1585 ही विश्वसनीय तिथि मानी जाती है।

वीरबल का वास्तविक नाम 'दरबारे अकबरी'[1] में महेशदास मिलता है। मुंशी देवीप्रसाद ने वीरबल का वास्तविक नाम ब्रह्मदास[2] माना है, किन्तु 'आइने अकबरी'[3] फारसी भाषा के ग्रन्थ में वीरबल का वास्तविक नाम महेश और जाति भट्ट ब्राह्मण मिलती है। वीरबल के ब्रह्म भट्ट होने की पुष्टि ऐतिहासिक ग्रन्थों से भी होती है। इनके पिता का नाम गंगादास था। इसका प्रमाण प्रयाग के किले में अशोक स्तम्भ पर अंकित यह लेख है– 'सम्वत् सौलह सौ बासठ शाके 1493 मार्ग वदी 5 सोमार गंगादास सुत महाराजा वीरबल श्री तीरथराज प्रयाग की यात्रा सुफल लिखतम।[4]

उपयुक्त लेख के आधार पर हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों ने वीरबल को ब्रह्म भट्ट माना है तथा उनका वास्तविक नाम महेशदास लिखा है।

सामान्यतः किसी भी कवि का जीवन परिचय उनके अन्तः साक्ष्यों और बाह्य पुष्ट प्रमाणों के आधार को कसौटी मानकर निर्धारित होता है। प्रायः कवि अपने सम्बन्ध में कुछ न कुछ अवश्य लिखते हैं या संकेत मात्र से ही अवगत करा देते हैं, किन्तु वीरबल की कविता में उनके जीवन परिचय से सम्बद्ध कोई अन्तः साक्ष्य नहीं मिलता। कतिपय बहिर्साक्ष्यों के आधार पर ही कुछ जानकारी मिलती है। वीरबल के जीवन का आरम्भिक काल कालपी में ही व्यतीत हुआ। इनका विवाह कालपी के एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण वंश में हुआ था। इनके बड़े पुत्र का नाम लाला था तथा कनिष्ठ पुत्र का नाम हरमराय मिलता है। 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' से ज्ञात होता

1– दरबारे अकबरी, पृष्ठ 295

2– राजा वीरबल, पृष्ठ 296

3– आइने अकबरी भाग–1, पृष्ठ 404

4– हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ठ 243

है कि वीरबल के एक बुद्धिमती पुत्री भी थी, जो श्री गुसाईं विट्ठलनाथ की शिष्या थी।

वीरबल के गुरु छीतस्वामी थे। आप वल्लभ सम्प्रदाय के अनेक भक्तों, कवियों और संतों के सम्पर्क में आये। वीरबल के माध्यम से ही सम्राट अकबर का भी बल्लभ सम्प्रदाय से सम्बन्ध जुड़ गया था। इनके भक्ति सम्बन्धी छन्दों को पढ़कर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वीरबल वैष्णव धर्म की कृष्ण भक्ति शाखा के अनुयायी थे। वे अकबर के नवीन धर्म **'दीने इलाही'** के भी समर्थक थे।[1]

वीरबल उदार मनोवृत्ति एवं प्रत्युत्पन्न बुद्धि के कारण बहुत प्रसिद्ध थे। उनकी कर्तव्य परायणता एवं न्यायप्रियता सराहनीय थी। सम्राट अकबर वीरबल की पहेलियों और चुटकुलों से उनकी ओर अधिक आकृष्ट थे। वीरबल की हास्य-प्रियता एवं वाग्विदग्धता शिष्टता पूर्ण थी। उनमें विदूषक की तरह फूहड़पन नहीं था। वीरबल में दानशीलता का गुण विशिष्ट था। इसकी चर्चा उनके समकालीन कवियों ने की है।

वीरबल अकबर के अत्यन्त घनिष्ट एवं प्रिय थे। वीरबल का अधिकांश समय अकबर के सान्निध्य में ही व्यतीत होता था। युद्ध कला में अनिभज्ञ होने के कारण वीरबल कराकुर घाटी में एक लड़ाई में पठानों द्वारा मार दिए गए थे। यह घटना माघ सुदी 12 शुक्रवार सम्वत् 1642 की है।[2] मृत्यु के बाद पार्थिव शरीर न मिल पाने के कारण उनका अंतिम संस्कार नहीं किया जा सका। अकबर का कहना था कि वीरबल जैसे अप्रतिम व्यक्तित्व के लिए अन्तिम संस्कार की आवश्यकता न थी, भगवान भास्कर के प्रकाश की किरणें उसके लिए काफी थीं।[3]

1— अकबरी दरबार के हिन्दी कवि — डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, पृष्ठ 93

2— अकबर नामा भाग—3, पृष्ठ 730—731

3— अकबरी दरबार के हिन्दी कवि — डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, पृष्ठ 86

2-1-2 आचार्य श्रीपति मिश्र

आचार्य श्रीपति मिश्र का पूरा नाम श्रीपतिराय मिश्र था। पिता श्री अनूपराय थे।[1] हिन्दी साहित्य के सर्वांगनिरूपक आचार्य श्रीपति का जन्म कल–कल निनाद करती परम्पुण्य सलिला यमुना के पावन कूल पर स्थित, बुन्देलखण्ड के प्रवेश द्वार कालपी में सम्वत् 1700, सन् 1643ई. में हुआ था। डॉ.ग्रियर्सन ने भी उनके इसी जन्मकाल की पुष्टि की है। किसी अन्य साक्ष्य के अभाव में इसी जन्मतिथि को प्रामाणिक मानना युक्ति संगत है।

नागरी प्रचारिणी सभा की रिपोर्ट–22 का यह निष्कर्ष कि श्रीपति का जन्म सोलहवीं शताब्दी के चतुर्थांश में हुआ होगा, मात्र अनुमान है।[2] जनपद जालौन के अन्तर्गत कालपी नगर का निवासी होना कवि ने स्वयं स्वीकार किया है।

सुकवि कालपी नगर कौ, द्विज मनि शीपति राय।
जस सम स्वाद जहान कौ, बरनत सुख समुदाय।।[3]

बुन्देल वैभवकार के अनुसार श्रीपति कवि कान्यकुब्ज ब्राह्मण कालपी के रहने वाले थे। आपका जन्म और कवि काल क्रमशः सम्वत् 1730 विक्रमी और सम्वत् 1760 विक्रमी के लगभव माना जाता है।[4] श्रीपति के ग्रन्थों में इनके कवि नाम की वर्तनी में विभिन्नता है। कहीं श्रीपति, शीपति है तो कहीं सीपति भी मिलता है। किन्तु डॉ. किशोरीलाल गुप्त ने 'सीपति' को सर्वत्र 'श्रीपति' संशोधित करने का सुझाव दिया है।[5]

नागरी प्रचारिणी सभा के एक हस्तलेख के अनुसार 'श्रीपति सुजान काशी नगर निवासी हैं किन्तु अयोध्या प्रसद गुप्त 'कुमुद' के

1– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली – संपादक लक्ष्मीधर मालवीय, पृष्ठ 11

2– शोध रिपोर्ट– ना. प्र. सभा (1909–1911) संस्करण 1914, पृष्ठ 18

3– काव्य सरोज–आचार्य श्रीपति मिश्र,(1–5)श्रीपति मिश्र ग्रंथावली,पृष्ठ 121

4– बुन्देल वैभव (भाग–2) गौरी शंकर द्विवेदी 'शंकर' प्रकाशक बुन्देल वैभव ग्रंथमाला टीकमगढ़, सम्वत् 1992 विक्रमी, पृष्ठ 381–82

5– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली – संपादक लक्ष्मीधर मालवीय, पृष्ठ 11

अनुसार वस्तुतः यह काशी निवासी श्रीपति कालपी वाले श्रीपति ही हैं। कालपी वाले श्रीपति ही कालान्तर में कालपी से काशी चले आए थे।[1] श्रीपति ने 'काव्य सुधाकर' में स्पष्ट किया है—

सुकवि कालपी नगर कौ, श्रीपति सुमति आगार।
अब काशी वासी भयौ, जानत सब संसार।।[2]

आचार्य श्रीपति के पिता श्री अनूपराय 'सीताराम' के अनन्य उपासक थे तथा आचार्य स्वयं भगवान शंकर के भक्त थे। एक अन्तर्साक्ष्य से यह बात प्रमाणित होती है—

सेवक सीताराम कौ, राय अनूप प्रवीन।
ताको सुत श्रीपति भयौ, संकर पद जल मीन।।[3]

श्रीपति को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल[4], मिश्र बन्धु[5], रामनरेश त्रिपाठी[6] तथा डॉ. रमाशंकर शुक्ल 'रसाल'[7] ने कान्यकुब्ज ब्राह्मण माना है। किन्तु उनकी स्वीकारोक्ति है कि वे गौड़ वंशीय ब्राह्मण थे—

नागवान कुल कमल रवि, गौड़वंश अवतंश।
श्री गुरु चरण सरोज अलि, नौ रस मानस हंस।।[8]

कालपी से आकर आचार्य श्रीपति ने भगवान विश्वनाथ की

1— आचार्य श्रीपति और इनका आचार्यत्व— शोध पत्र श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद'

2— काव्य सुधाकर, आचार्य श्रीपति मिश्र (1—16) श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृष्ठ 208

3— काव्य सुधाकर—श्रीपति हस्तलेख,हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग पृष्ठ—2

4— हिन्दी साहित्य का इतिहास—रामचन्द्र शुक्ल (संस्क.2022वि.)पृष्ठ 261

5— मिश्र बन्धु विनोद (भाग—2) संस्करण 1984 विक्रमी, पृष्ठ 578

6— कविता कौमुदी— राम नरेश त्रिपाठी, पृष्ठ 452

7— हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ.रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' (सं.1931),पृष्ठ 449

8— काव्य सुधाकर —श्रीपति मिश्र—(1—18) श्रीपति मिश्र ग्रंथावली,पृष्ठ 208

पावन नगरी काशी में काव्य प्रणयन की धारा प्रवाहित की। पुष्टि के लिए निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

विश्वनाथ नगरी विदित, चौदह भुवन मझार।

तहँ बस के श्रीपति सुमति, रच्यौ ग्रंथ विस्तार।।[1]

श्रीपति मिश्र के ग्रंथ 'काव्य सरोज' में उनके आश्रयदाता श्री अबदुल्लह सेष का नाम भूरि–भूरि प्रशंसा के साथ लिया गया है। लक्ष्मीधर मालवीय के अनुसार श्रीपति मिश्र ने उनके बल–वैभव तथा दान आदि का चित्रण अपने समसामयिक अन्य कवियों के समान ही अतिरंजना में किया है। श्रीपति जैसे सुकवि पर अबदुल्लह सेष का सच्चे मन से रीझ जाना सहज स्वाभाविक कहा जायेगा। यह पता नहीं, अबदुल्लह खान के बाद कवि ने किसी अन्य भूपति का आश्रय लिया था या नहीं।

आचार्य श्रीपति ने सं. 1777 में 'काव्य सरोज' की रचना की तथा इसी वर्ष काशी जाकर 'काव्य सुधाकर' को पूर्ण करने में प्रयत्नशील रहे, किन्तु ग्रन्थ पूरा न कर सके। इससे ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि अब्दुल्लह सेष का वरद् हस्त कवि के सिर पर से अचानक हट गया।[2]

निष्कर्ष है कि श्रीपति के आश्रयदाता सेष अबदुल्लह थे। रीतिकालीन परम्परा के अनुसार राजाश्रित काव्य–रचना तत्कालीन कवि–धर्म था। श्रीपति ने 'काव्य सरोज' में **'तह देव धुनी तट भोजपुर, दान स्यान किरवान छम। श्री अबदुल्लह सेष तह राजत ध्रुव मधवान सम'**[3] कहकर सेष अब्दुल्लह को भोजपुर जागीर का स्वामी बताया है। जबकि अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' ने अबदुल्लह खाँ को कालपी का तत्कालीन गवर्नर घोषित किया है तथा प्रमाण स्वरूप प्राचीन इतिहास ग्रन्थ **'मआसिरुलउमरा'** का

1– काव्य सुधाकर –श्रीपति मिश्र–(1–17) श्रीपति मिश्र ग्रंथावली,पृष्ठ 208

2– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, भूमिका– लक्ष्मीधर मालवीय, पृष्ठ 13

3– काव्य सरोज – श्रीपति मिश्र छप्पय संख्या 332, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृष्ठ 195

हवाला भी दिया है।[1] किन्तु लक्ष्मीधर मालवीय की टिप्पणी है – 'मगर मआसिरुलउमरा' को देखने पर निर्दिष्ट स्थल पर और न अन्यत्र, अबदुल्ला खाँ बल्द कासिम खाँ का वर्णन नहीं मिलता है।[2] अतः यह सिद्ध होता है कि अबदुल्लह खाँ भोजपुर जागीर का ही स्वामी था। सम्भव है कवि ने कन्नौज के समीप गंगा तट पर स्थित भोजपुर में आश्रय पाया होगा।

साक्ष्य के अभाव में श्रीपति मिश्र के जीवनान्त का विवरण देना सम्भव नहीं है। हो सकता है काशी में ही उनके जीवन का विसर्जन हुआ हो।

2-2 रचना संसार

2-2-1 वीरबल

वीरबल प्रत्युत्पन्न मति एवं प्रतिभाशाली कवि थे। इनकी उत्कृष्ट रचनाओं के कारण सम्राट अकबर ने इन्हें 'कविराय' की उपाधि से विभूषित किया था। इनके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व से खुश होकर अकबर ने इन्हें सल्तनत का जागीरदार बनाया था। व्यक्तित्व के साथ इनका कवित्व भी कम सराहनीय नहीं है। कल्पना की ऊँची उड़ान, आकर्षक एवं नवीन बिम्बों की सृष्टि इनकी रचनाओं में सर्वसुलभ है। अनुभूति एवं अभिव्यक्ति दोनों में ब्रह्म सहज स्वाभाविक हैं। विषय का निष्पक्ष एवं निर्भय विवेचन इनकी रचनाओं में देखने को मिलता है, किन्तु मध्यकालीन हिन्दी साहित्य का यह दुर्भाग्य ही रहा है कि प्रकाशन एवं उचित देख–रेख के अभाव में 'ब्रह्म' जैसे श्रेष्ठ कवि की कोई स्वतंत्र रचना प्रकाशित नहीं है। अन्य प्रकाशित कृतियों में तथा पुस्तकालयों एवं संग्रहालयों से प्राप्त हस्तलिखित पाण्डुलिपियों में इनके स्फुट छन्द मिलते हैं। सम्भव है कि दरबारी व्यस्तता के कारण इन्होंने कोई प्रबंध काव्य लिखा ही न हो।

1– आचार्य श्रीपति और उनका आचार्यत्व–शोध–पत्र, श्री आयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (मध्यकाली साहित्य संदर्भ में प्रकाशित), पृष्ठ 360

2– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली (भूमिका) – लक्ष्मीधर मालवीय, पृष्ठ 14

डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल ने 'अकबरी दरबार के हिन्दी कवि' नामक शोध ग्रंथ में कुछ हस्तलिखित प्रतियों में प्राप्त 'ब्रह्म' के छन्दों का विवरण दिया है। तद्नुसार 'बीरवल के कवित्त' नामक हस्तलिखित प्रति में 88 छन्द क्रमबद्ध रूप में प्राप्त हैं। एक अन्य संग्रह ग्रन्थ में 42 छन्द संग्रहीत हैं तथा भवानी शंकर याज्ञिक के सौजन्य से प्राप्त प्रतियों में क्रमशः 10,8,7 तथा 4 छन्द उपलब्ध हैं। लगभग 50 छन्द ही प्रकाशित संग्रहों में उपलब्ध हैं।

इस प्रकार कुल 200 छन्द ही प्राप्त हैं। जिनमें सवैये ही सर्वाधिक हैं।[1] ब्रह्म के छन्दों में भक्ति, श्रंगार, पराक्रम तथा उपदेश आदि विषयों को प्रमुखता प्रदान की गयी है। हास्य–व्यंग्योक्तियों में ब्रह्म को महारत हासिल थी, जिनके कारण अकबर विशेष प्रभावित था।

2-2-2 श्रीपति

आचार्य श्रीपति इस जनपद के प्रथम कवि हैं, जिनका इतिवृत्त 'मिश्र बन्धु विनोद' तथा 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' ग्रन्थों में मिलता है। पं. रामचन्द्र शुक्ल ने इनमें आचार्यत्व के अतिरिक्त कवित्व भी उच्चकोटि का माना है।[2] रीतिकाल के प्रमुख आचार्य भिखारीदास पर इनका अत्यधिक प्रभाव पड़ा था। नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्टों में श्रीपति के केवल 4 ग्रन्थों की सूचना मिलती है। 1.काव्य सुधाकर, 2. काव्य सरोज, 3.अनुप्रास लक्षण, 4.विनोदाय काव्य सरोज।[3] 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' में उपरोक्त ग्रंथों की सूची में कुछ नाम जोड़ दिये गये हैं। 5.कवि कल्पद्रुम, 6.रस सागर, 7.विक्रमविलास, 8.सरोज कलिका, 9 अलंकार गंगा।[4] परन्तु इनमें कुछ ग्रंन्थ ही उपलब्ध हैं। शेष का नामोल्लेख मात्र ही है तथा उनकी प्रामाणिकता संदिग्ध है।

1– अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, पृ.153

2– हिन्दी साहित्य काइतिहास– पं.रामचनद्र शुक्ल, पृ.206

3– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली भूमिका– सं. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ.9

4– हिन्दी साहित्यका वृहत इतिहास, भाग–1 पृ.265

'काव्य सुधाकर' में उद्धृत एक छोटे दोहे के अनुसार इसका रचनाकाल सं.1777 है। 'काव्य सरोज का रचनाकाल भी सं.1777 है। लक्ष्मीधर मालवीय का मानना है कि 'काव्य सुधाकर' किन्हीं कासरणों से अन्त तक अधुरा ही रहा। बाद में उसे 'काव्य सरोज' में समाहित कर दिया गया। इसी प्रकार यह अनुमान किया जा सकता है कि 'अनुप्रास लक्षण' जिसका रचनाकाल सं.1780 है, कवि ने उसे भी 'काव्य सरोज' जैसे विशालकाय ग्रंथ में सम्मिलित कर दियाहोगा।[1]

श्रीमति मिश्र के स्फुट छन्द भी विकीर्ण पड़े हैं। संग्रह माला, संग्रह कवित्त, श्रीपति के कवित्त, पावस कवित्त रत्नाकर, विद्वन्मोदतरंगिणी, काव्य प्रभाकर तथा अन्य संग्रहों में बड़े ही आकर्षक तथा मनोहारी छन्द मिलते हैं।

2-3 भाषा और शिल्प

भावाभिव्यक्ति का माध्यम एक मात्र भाषा ही है। भाषा के माध्यम से ही कवि अपने अनुभव, विक्षोभ, भाव तथा पीड़ा से मुक्ति पा सकताहै। यदि यह कहा जाय कि भाषा साहित्य एवं समाज के बीच एक पुल या कड़ी काकाम करती है तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। कवि या कलाकार समाज से अनुभव प्राप्त करता है और अपनी इस तीव्र सामाजिक अनुभूति को भाषा–शैली के माध्यम से अपने साहित्य द्वारा पुनः समाज को प्रदानकरताहै।[2] इस सम्बन्ध में डॉ. प्रतिभा कृष्णबल ने भी जोर देते हुए लिखा है–'साहित्यिक अभिव्यक्ति का एक मात्र माध्यम होने के कारण भाषा काव्यशिल्प का सर्वप्रमुख उपकरण है। काव्य–भाषा के स्वरूप निर्माता

1– श्रीमति मिश्र ग्रंथावली भूमिका' सं. लक्ष्मीधर मालवीय पृ.6

2– छायावादी काव्य में सामाजिक चेतना– डॉ. डी.पी. बरनवाल, जानकी प्रकाशन चौहट्ठा, अशोक राजपथ पटना, पृ.255

प्रमुख तत्वों में से शब्द–समूह पर उसकी रूपरचना निर्भर रहती है तथा व्याकरण उसके परिष्कार एवं परिशुद्धि का साधन है।[1]

उक्त विद्वानों में अपने कथनमें यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि भाषा के माध्यम से ही कवि या कलाकार समाज से जुड़ता है तथा अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है। भाषा के अभाव में साहित्य और समाज में सामंजस्य स्थापित नहीं हो सकता।

2-3-1 **ब्रह्म**

भाषा और शिल्प की दृष्टि से ब्रह्म की रचनाओं पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि उनके काव्य की प्रधान भाषा ब्रज है। ब्रजभाषा का साहित्य और माधुर्य इनकी रचनाओं में सरसता का संचार कर देताहै। इनकी भाषा में कन्नौजी तथा बुन्देली का प्रभावभी दृष्टिगोचर होता है। यह प्रभाव इनकी स्थानीय विशेषता तथा पर्यटन के कारण भी सम्भव है। ब्रजभाषा में 'अकारान्त' संज्ञायें कन्नौजी के प्रभाव से 'उकारान्त' हो जाती हैं। ब्रह्म के छन्दों में जगदीसु, द्योसु, घरू, रसु, तनु, चेटकु, ठगु आदि उकारान्त संज्ञायें सहजता से उपलब्ध हैं। कन्नौजी की भूतकालिक क्रिया हतै तथा हुतौ के प्रयोग इनकी रचनाओं में मिलते हैं। –

'मूओ हुतो मरिबे को हीं आयो है ब्रह्म भनै बहुरो मरिहै।'[2]

'कहाँ लगि कहौं हुतीं आप हीं जु आपु ही सीं।।'[3]

ब्रह्म की कविता में यत्र तत्र अवधी की क्रियाओं का प्रयोग मिलता है। जैसे– **दूसरो आहि न दूसरो देखिये।** दीबो, कीबौ, पीबौ आदि भविष्यकाल के क्रिया–रूप भी मिलते हैं। राजस्थानी के बड्डी, बढ़ी जान्या

1– छायावाद का काव्य शिल्प– डॉ. प्रतिभाकृष्णबल पृ.157

2– ब्रह्म के छन्द, परिशिष्ट– अकबरी दरबारके हिन्दी कवि– छंद संख्या71, पृ.355

3– उपरिवत्, छन्द संख्या 45, पृ.351

आदि शब्द प्रयुक्त हुये हैं। उनकी भाषा में विषयानुकूल शब्द चयन के साथ व्यवस्थित वाक्य–विन्यास भी है। कोमलकान्त पदावली के कारण उनकी भाषा में माधुर्य और प्रसाद गुण बहुलता से उपलब्ध हैं।

रस–प्रवाह की दृष्टि से ब्रह्म की रचनाएँ शान्त एवं श्रंगार रस युक्त हैं। ब्रजभाषा की माधुर्य एवं श्रंगार की सरस पदावली निम्न छन्द में दृष्टव्य है–

एक समै हरि सों रति मानि के प्रात गई सरिता मधि खोरनि।

मंजन लाइ अन्हाई फुलैल सों तीर खरी कच लागि निचोरनि।।

यों कवि ब्रह्म बनी उपमा जल के कनुका चुवैं बार के छोरनि।

मानहु चन्दहिं चूसत नाग अमी निकरयो बहिं पूँछ की ओरनि।।[1]

ब्रह्म के छन्दों में मुहावरों और लोकोक्तियों के स्वाभाविक प्रयोग कटु जीवनानुभव तथा सांसारिक ज्ञान की अभिव्यंजना करते हैं और भाषा को भाव–सम्प्रेषण की तीव्रता तथा प्रभावकारी क्षमता प्रदानकरते हैं। वामन ज्यों यह रैनि बढ़ी है, धूर बघूरे को पात भयो हों, अपने घर को पनियौ पहिचानत, बाहर डारत दूध फुही है, आदि लोकोक्तियाँ भाव– गाम्भीर्य उत्पन्न कर कवि की भाषा को जीवन्त बना देती हैं।

कवि अपने छन्दों में लाक्षणिक प्रयोगों द्वारा निजी अनुभूतियों को जन–जन तक पहुँचाने का प्रयास करता है तथा अपनी सृजनात्मक प्रतिभा के बल पर शिल्प की चारुता एवं भाषा की सहजता का समवेत स्वरूप प्रस्तुत करता है।

'सुन्दरता बरसै बरषा सी', बिलोकि–बिलोकि हँसै परिछाहीं',

'मन तोहि अजीरन नाहीं' तथा 'रात जगै चिनगारी' आदि लाक्षणिक प्रयोग गूढ़ार्थ को भी सहज समवेद्य बना देते हैं।

1– ब्रह्म के छन्द, परिशिष्ट– अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– छंद संख्या 27, पृ.348–349

ब्रह्म की रचनाएँ छन्द–बद्ध एवं तुकान्त हैं। अधिकतर सवैया छन्द का प्रयोग किया गया है। प्रकृति एवं श्रृंगारिक वर्णन में कहीं–कहीं कवित्त छन्द का आश्रय लिया है। रूप सौन्दर्य, संयोग तथा विप्रलम्भ श्रृंगार, उपदेश और शिक्षा, नीति तथा भक्ति आदि के वर्णन सर्वयों में भी उपलब्ध हैं।

ब्रह्म की कविता में अलंकारों के अनूठे प्रयोग उपलब्ध होते हैं। कवि ने अलंकारों का प्रयोग चमत्कार सृष्टि के लिए किया है, इसीलिए भावाभिव्यंजना दुरुह होती जान पड़ती है। सहजता और स्वाभाविकता में बाधक कवि का अलंकार प्रयोग अर्थ गाम्भीर्य उत्पन्न कर भाषा को दुर्बोध बना देता है। यह कवि की अपनी विशिष्टता है, सूझ–बूझ है कि दुरुहता भी भाव बोध में आड़े नहीं आती। उत्प्रेक्षा अलंकार का आकर्षण प्रयोग दृष्टव्य है जिसमें कवि ने नारी की कंचन काया को धनुष और बेणी को प्रत्यंचा वर्णित कर उच्चकोटि की कल्पना का उदाहरण प्रस्तुत किया है–

'सेज तें ठाड़ी भई उठि बाल लई उलटी अंगराय जंभाई।
रोम की राजी विराजी विसाल, मिटी त्रिवली अरु पीठ खिलाई।
बेनी परी पग ऊपर पाछे तें, ब्रह्म यहै उपमा उर लाई।
लोक त्रिलोक के जीतिबे कारन, सोने की काम कमान चढ़ाई।।[1]

यमक अलंकार का बड़ा ही आकर्षक प्रयोग देखिए, जिसमें कवि ने कृष्ण की वात्सल्य लीला के माध्यम से काव्य माधुरी की हृदयहारी अभिव्यंजना प्रस्तुत की है–

ब्रह्म भने मुनि मोन हीं के मन मारत नेक मनो न मनायो।
कितो बड़ो भाग जसोमति को कर तारु दै–दै कर तारु नचायो।[2]

1– ब्रह्म के छन्द, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, छन्द संख्या–29, पृष्ठ 349

2– उपरिवत्, छन्द संख्या 8, पृष्ठ 346

नायिका की देह को कंचन काया बताकर भी कवि का मन जब नहीं भरता तो **'उपमा'** अलंकार के माध्यम से अद्‌भुत कल्पना करते हुए वह नायिका की स्वर्ण देह को झीने दुकूल में झिलमिलाती हुई दीपशिखा कह देता है। कहीं **'प्रतीप'** अलंकार का प्रयोग करके कथन की भंगिमा और पद मैत्री के विलक्षण संयोग द्वारा कृष्ण की बाल्यावस्था एवं आकर्षण रूप माधुर्य का चित्र प्रस्तुत करता है–

ब्रह्म भनै चुचकारि कहे मोहिं लागति है तुतरानन की।

छंगना मंगना अंगना बिहरीं बलि जाइ बबा इन बातन की।।[1]

इस प्रकार ब्रह्म की रचनाओं में अनुप्रास, यमक, संदेह, प्रतीप, व्यतिरेक,रूपक, अनन्वय आदि विविध अलंकारों के प्रयोग मिलते हैं। ये अलंकार उनकी रचनाओं में भाव–विशेष में तीव्रता लाने में सहायक होते हैं तथा पाठक का हार्दिक अनुरंजन भी कराते हैं।

2-3-2 आचार्य श्रीपति

भाषा साहित्यकार की संवेदनाओं को पहचान देती है तथा सर्जना को आकृति प्रदान करती है। मानव मन की सृजनात्मक शक्ति को अनुपम देन के रूप में यह भाषा ही बाह्य जगत और हमारे भाव–बोध के बीच सेतु का काम करती है। आचार्य श्रीपति रीतिकाल के प्रतिष्ठित सर्वांगनिरूपक आचार्य हैं। इनकी भाषा ब्रज है। ब्रज भाषा में रचित दोहे, सवैया, कवित्त, छप्पय आदि रमणीयता की दृष्टि से आकर्षक तो हैं ही, काव्यांग निरूपण की दृष्टि से भी सफलतम हैं। इनके कवित्तों और सवैयों का प्रयोग संगीतात्मक छटा तो बिखेरता ही है, रचनागत बिम्ब के अनुकूल वातावरण भी उत्पन्न करता है। भाषा बिम्बानुरूप इतनी सधी हुई एवं सौष्ठव सम्पन्न है कि प्रत्येक शब्द की योजना देखते ही बनती है। भाषा और छन्द

1– ब्रह्म के छन्द, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, छन्द संख्या–97, पृष्ठ 359

योजना का स्वाभाविक प्रयोग स्थायी प्रभाव छोड़ता है। अभिव्यक्ति की सहजता, स्वच्छन्दता और निश्छलता श्रीपति के आचार्यत्व के अनूरूप है।

पं. रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार— रचना विवेक इनमें बहुत ही जाग्रत और रुचि अत्यन्त परिमार्जित थी। झूठ शब्दाडम्बर के फेर में ये बहुत कम पड़े हैं। अनुप्रास इनकी रचनाओं में बराबर आये हैं पर उन्होंने अर्थ या भाव—व्यंजना में बाधा नहीं डाली है। अधिकतर अनुप्रास रसानुकूल वर्ण विन्यास के रूप में आकर भाषा में ओज, कहीं माधुर्य घटित करते पाये जाते हैं।[1]

तात्पर्य यह है कि श्रीपति की भाषा व्याकरण और सौष्ठव दोनों दृष्टियों से परिमार्जित है। संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों के प्रयोग के साथ फारसी की शब्दावली को निसंकोच ग्रहण किया गया है। नाहिं का नाहँ, माहि का माहँ, होय का होइ, पहिचानि का पहिचान, वषानि का वषान, कविराय का कविराइ, उपाव का उपाउ तथा भाव का भाइ प्रयोग फारसी से प्रभावित हैं। कुछ उदाहरण देखिये—

जा ठाहर के वाच्य की वहुत विवक्षा नाहँ (नाहिं)।[2]
जह प्रतीति नहीं अर्थ की पावै शब्दन माहँ (माहिं)।[3]
सात भगन रुचि नेम से अंत दीह द्वै होइ (होय)।[4]

भले ही इन शब्दों का प्रयोग मूल अर्थ की प्रतीति में बाधक हो किन्तु श्रीपति के साहित्य पर फारसी के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता है।

1— हिन्दी साहित्य का इतिहास—पं. रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ 206

2— काव्य सरोज,पृष्ठ 132

3— उपरिवत्, पृष्ठ 125

4— उपरिवत्, पृष्ठ 125

श्रीपति के काव्य में शब्दों के साधारण प्रयोग सहजता से उपलब्ध हैं, जो कवि की विलक्षण प्रतिभा के परिचायक हैं। में का म, पै का प, को का कह, सो का सु, ताको का तासो आदि कवि की अद्भुत क्षमता के द्योतक हैं। एक दो उदाहरण दृष्टव्य हैं।–

तम पुंज सरोरुह लै विलसै नषतावलि हार गरे म धरे।[1]

ओड़त आली षटोला प वैठत चोली छुए उछरै उर दू दै।[2]

रसिक चकोरन कह बढ़े याते परम हुलास।[3]

श्रीपति ने काव्यांग निरूपण में कवित्तों का सफल और सटीक प्रयोग किया है। पद, मात्रा, लय, वर्ण और यति का नियमानुसार विधान हुआ है। इनके कवित्त पठनीयता की दृष्टि से अधिक सुगम हैं। सवैया छन्द में भी कवि ने लय का पूरा ध्यान रखा है। सवैया के विविध भेदोपभेदों का प्रयोग वर्ण्य–विषय के अनुरूप किया गया है। कवित्त और सवैया छन्दों में केवल यही अन्तर है कि कवित्त की लय सम–विषम पदों के सुनिश्चित नियोजन से बँधी होती है।

सवैया पर सम–विषम पद का कोई बंधन नहीं होता है। श्रीपति मिश्र ने तोमर छन्द का पुरानी लीक से हटकर जो प्रयोग किया है, उसमें संगीतमय लयबद्धता का विशेष आकर्षण है। पूर्व कवियों ने तोमर छन्द को मात्रिक माना था जबकि श्रपति ने उसे वर्णिक माना और उसमें संगीतमय लयबद्धता का सफल आयोजन किया।

कवि ने अलंकारों में उपमा, अनुप्रास, रूपक, श्लेष आदि समस्त शब्दालंकारों एवं अर्थालंकारों का भेद–निरूपण तथा उदाहरण सहित वर्णन किया है। लक्षणों का उल्लेख कहीं–कहीं दोषपूर्ण भी है किन्तु

1– उपरिवत्, पृष्ठ 182

2– काव्य सरोज– पृष्ठ 198

3– काव्य सुधाकर– पृष्ठ 207

अर्थ निष्पादन की दृष्टि से तथा पारिभाषित विधान को दृष्टिगत रखते हुये अलंकारों के प्रयोग सफल एवं सटीक हैं तथा भावाभिव्यंजना में समर्थ हैं।

भाषायी विवेचन के अन्तर्गत यह कहना अनुचित न होगा कि रीतिकालीन ब्रजभाषा कवियों का संस्कृत के शास्त्रीय ग्रंथों के अनुकरण पर काव्यांग विवेचन करना हास्यास्पद ही है। काव्य सौष्ठव की दृष्टि से भले ही इनकी छन्द योजना उच्चकोटि की है किन्तु संस्कृत आचार्यों की काव्य प्रणाली तथा ब्रज की कसौटी में पर्याप्त भिन्नता है। संस्कृत में व्यंजन बाहुल्य की सम्भावना है, तो ब्रजभाषा में स्वर बाहुल्य की। रीतिकालीन कवियों की ब्रजभाषा व्याकरणिक दृष्टि से संस्कृत से पर्याप्त भिन्नता रखती है। 'फिर भी काव्य–लक्षण, काव्य–रूप, काव्य के गुण–दोष आदि का विवेचन रीतिकालीन कवि एवं आचार्यों ने जिस संस्कृत परम्परा के आधार पर किया है, वह सर्वथा सराहनीय है।

2-4 कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन

किसी कृति का साहित्यिक मूल्यांकन करने का तात्पर्य है, उसके अंतरंग एवं बहिरंग दोनों पक्षों में समाहित सौन्दर्य को विश्लेषित करना। इन्हीं दोनों पक्षों को भाव–पक्ष एवं कला–पक्ष नाम से अभिहित किया जाता है। अंतरंग पक्ष में विषय सामग्री तथा भावों का और बाह्य पक्ष में अलंकार, छन्द, भाषा–शिल्प तथा वचनभंगिमा का विवेचन किया जाताहै। जालौन जनपद में उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व के साहित्यिक अनुशीलन से ज्ञात हुआ है कि वीरबल (ब्रह्म) उपनाम तथा आचार्य श्रीपति मिश्र काव्य क्षेत्र की दो प्रतिभायें ही सुनाम धन्य हैं जिन्होंने उस युग में अपनी काव्य धारा प्रवाहित कर आश्रय दाता नरेशों को चमत्कृत करके ख्याति एवं धन दोनों अर्जित किये थे। इन कवियों के बाह्य पक्ष अर्थात् अभिव्यक्ति पक्ष का विवेचन 'भाषा एवं शिल्प' खण्ड में हो चुका है। इब इनके अंतरंग पक्ष का विवेचन ही मुख्य प्रतिपाद्य है।

उस समय साहित्य का रीतिकाल था। रीतिकाल में मुक्तक काव्य परम्परा की प्रधानता रही है। डॉ. सूर्य प्रसाद शुक्ल के अनुसार– मुक्तक काव्य का वह रूप है, जिसमें भाव का सम्पूर्ण उत्कर्ष कुछ पंक्तियों में उस सीमा तकहो जाता है, जिसकी परिधि में कथन के विषय को कथ्य के पैनेपन से गम्भीरतर अभिव्यक्ति मिल जाती है। यह कभी शास्त्रीय या परम्परागत रीतिविधान में सुसंगठित काव्य पंक्तियाँ होती हैं तो कभी कवि की स्वतंत्र निर्मित कला के शिल्प सज्जित रूप।[1] डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल का मत है कि मुक्तक में रस की स्निग्ध फुहारें अवश्य रहतीं हैं, जिनसे पाठक या श्रोता का हृदय खिल उठता है। इसलिए वह सभा–समाजों के विनोद और तात्कालिक प्रभाव के लिये अधिक उपयुक्त होता है।[2]

तात्पर्य यह है कि तत्कालीन कवियों ने आश्रयदाताओं को प्रभावित करने के लिए मुक्तक रचनाओं को प्रमुखता प्रदान की। परन्तु यह कहना अनुचित न होगा कि आश्रयदाताओं की प्रशंसा के अतिरिक्त उस काल की मुक्तक रचनाओं में जीवन के विविध अनुभव एवं समस्याओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

तत्कालीन कवियों की कविता में भावाभिव्यंजना ही प्रमुख थी। भक्ति एवं श्रृंगार वर्णन को प्रधानता दी गई थी। नायिका का रूप–वर्णन, संयोग–वियोग, प्रकृति चित्रण, नीति तथा उपदेशात्मक वर्णन इनके काव्य में सहजता से उपलब्ध हैं। नीति तथा उपदेशात्मक वर्णनों में इनकी लोक रुचि सम्पन्नता तथा लोकहित की धारणा झलकती है। आंतरिक सौन्दर्य वर्णन इनके काव्य को रसात्मकता प्रदान करता है।

1– गीतीतिहास में ये गीत– डॉ. सूर्यप्रसाद शुक्ल, विहान प्रकाशन 119 /501, सी–3, दर्शन पुरवा, कानपुर पृष्ठ 341

2. अकबरी दरवार के हिन्दी कवि– डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, पृष्ठ 174

2-4-1 ब्रह्म

ब्रह्म के काव्य का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत है–

2-4-1-1 रूप सौन्दर्य

हिन्दी साहित्य के उत्तर मध्य काल में अवतरित ब्रह्म की कविता में भक्ति तथा रीतिकाल का समवेत प्रभाव दृष्टिगत होता है। आध्यात्मिक सौन्दर्य तथा भौतिक रूप–सौन्दर्य का मिलाजुला स्वरूप इनकी कविता में मिलता है। जब हम इनकी कविता पर रीतिकालीन प्रभाव का परीक्षण करते हैं, तो ज्ञात होता है कि ब्रह्म जैसे सूक्ष्मदर्शी कवि की दृष्टि सौन्दर्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म संकेतों को पकड़ने में समर्थ थी। इनकी सम्पूर्ण चेतना ही मानों रूप के पर्व में ऐन्द्रिय आनन्द का पान करके उत्सव सा मनाने लगती है। इनकी कविता में विलास की रसिकता ही अधिक मिलती है। विलास का केन्द्र बिन्दु थी नारी, जिसके चारों ओर सौन्दर्य के अनेक कृत्रिम उपकरण एकत्र थे। ऐन्द्रिय लोलुपता, रसिकता और यौवन वादी उछलकूद इनकी कविता का विशेष आकर्षण है।

हिन्दी साहित्य के प्राचीन इतिहास में यही युग ऐसा था, जब कला को शुद्ध कला के रूप में ग्रहण किया गया था। उस समय की कविता जीवन की कविता न होकर कविता की कविता था। कवि की रसिक दृष्टि प्रायः आंगिक सौन्दर्य पर ही अटकी रहती थी। नायिका प्रातःकाल ही कंचुकी तथा हार उतारकर अपने हृदय–मध्य की कोमलता निरखती है। इसी समय नायक का अचानक आगमन होता है। नायिका घबड़ाकर कंचन कुम्भ के समान स्तनों को मुख रुपी चन्द्रमा से ढकने का प्रयास करती है। ब्रह्म की उच्चकोटि की अकथनीय कल्पना का मार्मिक उदाहरण प्रस्तुत है–

एक समय वृषभान सुता सुख सेजहुँ ते उठि बाहर आई।

कंचुकी हार उतारि धर्‌यौ निरखे हिय मध्य की कोमलताई।

तिहि औसर लालन आइ गए उपमा कवि ब्रह्म कही नहिं जाई।

कंचन कुम्भ के झंपन को झुकि झंपत चंद झलक्कत झाईं।।[1]

कवि की दृष्टि कभी सर्प के समान नायिका की चिकनी अलकों को निरखती है, तो कभी ललाट पर जड़ी बेंदी को कभी नायिका को अंगड़ाई लेकर जम्हाते देखती है, तो कभी मोतियों की माला और त्रिवली पर टिक जाती है। नायिका के रूप चित्रण में कवि ने सारंग, मीन, कोकिला, बिम्बाफल, कदली, कमल, पून्यो का ससि, खंजन और भ्रमर आदि जितने उपमानों को लिया है वे सभी रति को उद्दीप्त करने वाले हैं–

आज एक ऐसो अचरज को तमासो देख्यौ,

पन्नग के माथे उयौ पूरन पून्यो को ससि।

सारंग है मीन कीर कोकिला के कलरव,

सुपक सुरंग बिम्ब सुन्दर सरस असि।

तिन पर बिम्ब संभु कनक की आभा धरें,

तिन पर बिन्दला बनेहैं यों घने हैं मसि।

गिरिजा को बाहन सो कदली, विरख पर,

कदली कमल पर ब्रह्म कवि यह कसि।[2]

उपयुक्त उद्धरण में 'पन्नग के माथे उयौ पूरन पून्यौ को ससि' देखकर कवि को अचरज होता है। नायिका की लहराती वेणी रूपी सर्प के ऊपर मुख रूपी चन्द्रमा की स्थिति का वर्णन कितनी उच्चकोटि की कलात्मक कल्पना है। एक और चित्र देखिए जिसमें गोर गाल पर लगा हुआ फुलेल, केसर के रंग में डूबी हुई अंगिया, बड़ी वेणी, गोरे मुख पर

1– ब्रह्म के छन्द (परिशिष्ट छन्द संख्या 32) अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल, पृष्ठ 349

2– उपरिवत्, छन्द संख्या 26, पृष्ठ 348

गुदना, नेत्रों की अरुणिमा तथा खंजन के समान चंचल नेत्रों वाली तथा अंग मरोर कर आँगन से गुजरने वाली नायिका को देखकर कवि आश्चर्य करता है कि यह सुन्दरी कौन है—

गोरे सा गात फुलेल चुचात भरी अंगियारंग केसरि बोरे।
बेनीं बढ़ी अरु छोटी सीं आपु छई छबि सो गुदना मुख गोरे।
नैननि कीं अरुनाई कहाँ—कहाँ अंजन दे दृग खंजन जोरे।
ब्रह्म भनै यह को हीं तिया जु चलीं गई आँगन आंग मरोरे।।[1]

नायिका का स्वाभाविक सौन्दर्य एवं उसके बल खाकर चलने का आकर्षण वर्णन है। सद्यः स्नाता नायिका की सौन्दर्य प्रभा, जिसे कवि ने द्युतिमान दीपशिखा की उपमा देते हुएवर्णन किया है—

बैठीं अन्हाय बनाइ विरंचि सु सुन्दरता बरषे बरषा सीं।
कंज से आनन खंजन लोचन कोउ कहै कटि आहि मृषा सीं।
ब्रह्म भनै नन्दलाल विलोकति लागि रहीं लट लागि तृषा सीं।
झीने दुकूल में झाईं झलामलै देह दिपै दुति दीप सिषा सीं।।[2]

उपरोक्त छन्द में ब्रह्म ने सद्यः स्नाता नायिका का मुख कमल के समान तथा नेत्र खंजन के समान कहकर उपमालंकार का सुष्ठु निर्वाह किया है। कटि का वर्णन तो हिन्दी साहित्य के विविध वर्णनों से अनूठा है। कटि को मृषा सी कहकर उसके अस्तित्व को नकारा भी नहीं है तथा मृषा कहकर उसके अस्तित्व की क्षीणता भी बतलायी है।

2-4-1-2 संयोग वर्णन

संयोग वर्णन में रीतिकालीन कवियों ने विभिन्न कामचेष्टाओं रतिक्रीड़ाओं के साथ नायिका का रूप चित्रण,दूत—दूती प्रकरण, हास—परिहास विविध क्रीड़ाओं आदि का चित्रण प्रस्तुत किया है। काम क्रीड़ा में आलिंगन, परिरम्भण तथा चुम्बन आदि के चित्र उकेरे गए हैं। ब्रह्म की कविता में अन्य

1— ब्रह्म के छन्द परिशिष्ट— अकबरी दरबार के हिन्दी कवि— डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, छन्द संख्या 35, पृष्ठ 350

2— उपरिवत्, छन्द संख्या 43, पृष्ठ 351

रीतिकालीन श्रृंगारिक कवियों जैसा उच्चकोटि का श्रृंगार तो नहीं मिलता किन्तु प्रेमोन्माद में चाह भरे नयनों को मन मोहते अंगों में जो काव्यात्मक सौन्दर्य दिखलाई देता है, उसका सटीक वर्णन उनके काव्य में मिलता है–

नन्द के लालन सौ विपरीति करै ललना पिय रंग रिझावै।
काम कलोल ते लोल कपोलनि चूमत श्याम महा सचु पावै।
ब्रह्म सुवेसरि को मुक्ता पिय लोचन के ढिंग यों छबि पावै।
मनो सरद्दिु अमी लिए बिन्दु चकोर की चोंच में चारो चुगावै।[1]

उपर्युक्त छन्द में विपरीति रति में विह्वल नायिका प्रिय का चुम्बन करती है। चुम्बन के समय नायिका की बेसर का मोती नायक के नेत्रों के समीप ऐसा लगता है, मानों शरदेन्दु अमृत की बूँद रूपी चारा चकोर की चोंच में चुगा रहा है। अनुप्रास की अतीव सुन्दर छटा के साथ विपरीति रति का अद्वितीय मनोहारी वर्णन ब्रह्म की श्रृंगारिकता का चमत्कार है। दृष्टि व्यापार की विलक्षणता का मर्मस्पर्शी चित्र देखिए–

जहीं सुनै कान्हहि धावै तहीं अनुराग रहे नहिं रोकत हीं।
उड़ि जाहि जिते तित साथ रहै सखि हाथ न आवत मो कत हीं।।
क्यों रहै धीरज ब्रह्म भनै हरि लोचन बान विलोकत हीं।
अरी मार की मूरति नन्द कुमार सुमार करी अवलोकत हीं।।[2]

ब्रह्म ने नायिका की अभिलाषा, उन्माद, व्याधि और गुण कथन का आश्रय लेकर नेत्र व्यथा का सहज, स्वाभाविक तथा रागात्मक वर्णन प्रस्तुत किया है। **'लाज लगाम न मानहीं, नैना मो बस नाहिं'** की तरह ब्रह्म की नायिका के अनुरागपूरित नेत्र कामदेव की साक्षात् मूर्ति नन्दकुमार के पीछे–पीछे दौड़ते हैं, उन्हें देखने की आदत पड़ गई है। वे उसके बस में नहीं हैं। नायिका किस भाँति धैर्य धारण करे।

1– ब्रह्म के छन्द परिशिष्ट– अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– छन्द संख्या 46 पृष्ठ 46

2– उपरिवत्, छन्द संख्या 40, पृष्ठ 350

2-4-1-3 वियोग वर्णन

प्रिय के संयोग का अभाव ही वियोग है। संयोग, श्रृंगार का स्थूल और लौकिक पक्ष है, तो वियोग, प्रेम की निष्ठा, तीव्रता और दृढ़ता का परिचायक होता है। विरह में ही नायक–नायिका आन्तरिक स्तर पर अपने प्रेम की धड़कनों को सुन सकते हैं। विरह वर्णन में आन्तरिक वेदना, विरह की विविध दशाओं का चित्रण, उपालम्भ औरं व्यंग्य का उत्कृष्ट रूप मिलता है। ब्रह्म की कविता में विरहजन्य वेदना की एक स्थिति का अवलोकन कीजिए, जिसमें नायिका के नेत्रों से बादलों की भाँति अनवरत् अश्रुधारा प्रवाहित हो रही है–

कालि के कान्ह गए मथुरा मनो बीत गए जुग बासर से।
विरहागिन काम लगाय दई है दसों दिसि देखि वही दर से।।
कवि ब्रह्म भनै मोहिं जानि पड़े सखि श्याम घटानल सो परसे।
विरही वर बार हीं बार उठे दृग नीर किधौं धन धौं बरसे।।[1]

उपर्युक्त छन्द में विरहानुभूति जन्य पीड़ा का सफल निदर्शन है। नायक के वियोग में नायिका का एक दिवस युग के समान व्यतीत हो रहा है। काम ने विरहाग्नि प्रज्ज्वलित कर दी है। सर्वत्र प्रिय ही दिखायी देता है। नेत्र श्यामल मेघ घटा की भाँति अश्रु प्रवाहित कर रहे हैं। यहाँ कवि ने नायिका की अन्तर्वृत्ति का सफल निरूपण किया है, जो कुछ हलचल है, वह भीतर ही है। नायिका का मौन रहकर अश्रु बहाना उसकी सम्पूर्ण वेदना का व्यंजक है। प्रवासजन्य विरह–वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति है। प्रोषित–पतिका नायिका का अश्रु विगलिति चित्रांकन है।

ब्रह्म की नायिका एक ओर **'ज्यों नंदलाल चितै चलिगे संगही चलि चेटक सो कछु कींनो'** कहकर नंदलाल की दृष्टि में अतीव आकर्षण अनुभव करती है, तो दूसरी ओर **'गई गड़ि आँखिनि में सजनी बड़ी अँखियान बड़ो**

1– ब्रह्म के छन्द परिशिष्ट– अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, छन्द संख्या 51, पृष्ठ 352

दुख दीनों' कहकर नायक की बड़ी–बड़ी आँखों से उत्पन्न हार्दिक वेदना का वर्णन करती हैं कहीं–कहीं ब्रह्म ने विरह वर्णन में अत्युक्ति तथा अतिशयोक्ति को अपना साध्य बनाया है। विरह व्यथित नायिका का एक ऊहात्मक दृश्य देखिए–

तन में न सुधि विधु बदनी विरह मई,
मानो मन भावन विछुरि दिन द्वै गयो।
अंगन की आगि ते अंगीठी डीठी मीठी भयीं,
मानो रवि किरन करेननि ते छ्वै गयो।
ननद के डर गई गोरस चढ़ाइवे को,
बिनु बारे चूल्हे वारि ईंधन सबै गयो।
जो लौं दूध करते कराही में करन लागी,
तो लों सब दोहनी में ओठि खोवा ह्वै गयो।[1]

विरह का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन चमत्कृत तो करता है किन्तु हृदय की संवेदना को छू नहीं पाता। विरहजन्य ताप औचित्य की सीमा का अतिक्रमण कर गया है। अंगों की तपन से अंगीठी का शीतल लगना, 'बिना जलाये चूल्हे का सारा ईंधन जल जाना तथा 'हाथ से कढ़ाही में दूध डालने से पूर्व ही दूध का खोवा बन जाना' ऐसे अस्वाभाविक वर्णन हैं। जिनसे ब्रह्म की कविता खिलवाड़ सी लगती है। बिहारी ने भी **'चढ़ी हिंडोरें सी रहै चली उसासनि साथ'** तथा **'बिच ही सूखि गुलाब को छींटो छुओ न गात'** जैसे ऊहात्मक वर्णन किए हैं। इनसे उक्ति चमत्कार तो व्यंजित होता है किन्तु काव्य की सहज सम्प्रेषणीयता अदृश्य हो जाती है।

2-4-1-4 मान वर्णन

रीति काव्य में मान–मनुहार अर्थात् रूठना और मनाना, प्रेम–प्रसंग की एक स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में वर्णित हुआ है। यदि रूठा हुआ पात्र अनुनय–विनय से संतुष्ट हो जाता है तो ऐसा मान संयोगवस्था

1– ब्रह्म के छन्द परिशिष्ट– अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, छन्द संख्या 57, पृष्ठ 353

में समाहित होता है और यदि अनुनय–विनय के पश्चात् भी मान रहता है तो वह वियोगावस्था के अन्तर्गत आता है। साहित्य दर्पणकार ने मान के दो भेद किए हैं, प्रणयमान और ईर्ष्यामान।[1] ब्रह्म की रचनाओं में मानवर्णन के अत्यन्त सटीक उदाहरण उपलब्ध है। प्रणयमान का एक उदाहरण–

मानवती वृषभानु सुता मुख मौन न माने मनावे हरी।
ब्रह्म भनै मन मोहन को मनु मोहति:यों मनो चित्तधरी।।
गल हाथ दिए सिर नाइ निरख्खति दृष्टि चकोर ज्यों कान्हकरी।
अरविन्द विछाय विरुद्धहिं निंदत मानहुँ इंदुहि निंदपरी।।[2]

उपुर्यक्त छन्द में कृष्ण–राधिका से अनेक अनुनय–विनय करते हैं। गले में हाथ डालकर सिर झुकाते हैं। चकोर की भाँति ललचाई दृष्टि से राधा के मुख–मण्डल को निहारते हैं। फिर भी राधा का मन उत्फुल्ल नहीं होता, किन्तु प्रेम प्राबल्य के कारण वह मौन धारण किए रहती हैं। कवि ने प्रणयाधिक्य में भी मान दर्शाकर एक अद्भुत् किन्तु स्वाभाविक चित्रांकन किया है। नायक, नायिका के अतिरिक्त अन्य स्त्री में जब प्रमासक्त होता है, तब नायिका अनुमान लगाकर ईर्ष्या के कारण मान कर बैठती है। उसे ईर्ष्या मान कहा गया है। ब्रह्म की रचनाओं में विशेषतः खण्डिता नायिका के उद्धरण में ईर्ष्या मान की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुयी है–

भली भई भोरहूँ आये हो मेरे भलो हो जानीं भली है भलाई।
ब्रह्म भनै चलि देखो धों चालिये हे हरिजू उहि चाल चलाई।।
याहीं ते फूलत फूल गिरैं सिर फूलनि फूलिये डार हिलाई।
को ललना जिहिं लाल किये दृग लाल कहाँ गई ओठ ललाई।।[3]

उपर्युक्त छंद में कवि ने ईर्ष्यामान–वर्णन का औपचारिक निर्वाह सा कर दिया है। अन्य रीतिकालीन कवियों जैसी मान–वर्णन की

1– साहित्य दर्पण, तृतीय परिच्छेद, पृष्ठ 151–152

2– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट छन्द सं. 58 अकबरी दरबार में हिन्दी कवि–पृष्ठ 353

3– उपरिवत्, छन्द सं. 58 पृष्ठ 355

उच्चता यहाँ उपलब्ध नहीं होती। कवि ने आलंकारिक चमत्कार के बल पर गहरी भावात्मक व्यंजना का प्रयास किया है। अनुप्रास और श्लेष की छटा उत्तम बन पड़ी है।

2-4-1-5 नायिका भेद

रीति कालीन कवियो ने नायिकाओं के अनेकशः भेद किए हैं। जैसे–मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा, कनिष्ठा, मुदिता, प्रेमगर्विता, प्रोषित पतिका, नवोढ़ा, वासक सज्जा, प्रवत्स्यत्पतिका ऊढ़ा, अनुढ़ा, स्वकीया, परकीया तथा स्वाधीन पतिका आदि। श्रृंगार वर्णन के सरस प्रसंगों की अवतारणा में तथा संयोग एवं वियोग की समस्त प्रवृत्तियों एवं दशाओं के निरूपण में रीतिकालीन कवियों ने नायिका भेद करते हुये सौन्दर्य के मादक चित्र अंकित कर अपने अद्वितीय काव्य–कौशल का परिचय दिया है। इस आधार पर ब्रह्म के काव्य का परीक्षण करने पर ज्ञात होता है कि उनकी रचनाओं में नायिका भेद का श्रृंखलाबद्ध स्वरूप तो अप्राप्य है किन्तु श्रृंगारिक भावाभिव्यक्ति में प्रसंगवस कतिपय नायिकाओं के आकर्षक और मर्मस्पर्शी चित्र अवतरित हुये हैं। एक मुग्धा नायिका, जिसे यौवनागम की अनुभूति हो चुकी है, उसकी मानसिक और आंगिक दशा का सहज रेखांकन प्रस्तुत है–

खेलत संग कुमारिन के सुकुमारि कहू सकुची मन माहीं।
काम कला प्रगटी अंग–अंग विलोकि–विलोकि हँसै परिछाहीं।।
ब्रह्म भनै न रहे उर अंचल के छिनहीं छिन चंपति वाहीं।
डारति है शिव के सिर अम्बर मानो दिगम्बर राखत नाहीं।।[1]

यहाँ यौवनामुग्धा नायिका की मानसिक स्थिति का स्वाभाविक चित्रण हुआ है। **'डारति है शिव के सिर अम्बर मानौ दिगम्बर राखत नाहीं'** में कवि की उच्चकोटि की कल्पना सराहनीय है। नायिका के अंग– प्रत्यंगान्तर्गत काम कलाओं का प्राकट्य होने पर वक्ष की शोभा का वर्णन कवि की असाधारण प्रतिभा का परिचायक है।

3– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट, अकबरी दरबार में हिन्दी कवि, छंद सं. 73 पृ.359

प्रवत्स्यत्पतिका नायिका– उसे कहा जाता है जिसका पति परदेश जाने वाला होता है। यह नायिका प्रिय के परदेश गमन का समाचार सुनकर अत्यंत विह्वल हो जाती है। उसकी कारुणिक स्थिति का चित्र उकेरा है ब्रह्म कवि ने अपने निम्न छंद में–

जब मेरो दाहिनो नयन फरकि उठ्यो, उठि अकुलाई करि तबहीं तेनूक सी।
बात के सुनत गात अति राते भये,तातो भयो तनु मानो आगि दीनी फूँकसी।।
ब्रज भयो वारिधि सो वास भयो बड़वा सो, ब्रह्म के वियोग ते विधी सी उठी हूकि सी।
हाय–हाय हायरे बलाय कहूँ कहा कहूँ, कूर अकरूर ते तो छाती दीनी छोंकि सी।।[1]

उपर्युक्त छन्द में नायक के परदेश गमन का संकल्प श्रवण कर नायिका विरहाग्नि से दग्ध हो उठी है, उसे ब्रज अगाध समुद्र सा तथा उसका निवास बड़वाग्नि सा प्रतीत हो रहा है। अक्रूर का क्रूरतम व्यवहार उसकी छाती में छोंक सा अनुभव होता है। अचानक विपत्ति के आगमन का पूर्वाभास दाहिना नेत्र फड़कने से दर्शाया गया है। ब्रह्म ने अप्रत्याशित आपत्ति की सूचना से उत्पन्न क्लेश का संवेदनात्मक वर्णन प्रस्तुत किया है–

एक समय वृषभानु–सुता परभात ही काम की केलि बनाई।
नैननि की लखि आरति कीरति कीरति मोतिन माल सुहाई।।
बेंदी जराव लिलाट दिए गहि डोरी दोऊ पटिया पहिराई।
ब्रह्म भनै रिपु जानि गह्यो रवि की मुसके जनु राह चढ़ाई।।[2]

प्रिय के आगमन की आशा होने पर जो हर्ष के साथ अपने को सजाती है, वह वासक सज्जा नायिका कहलाती है। उक्त छंद में नायिका प्रभातकाल में काम–केलि की कामना से वस्त्रालंकारों से विभूषित होकर नायक को जाकर घेर लेती है। ब्रह्म कवि कहते हैं कि– **ऐसा प्रतीत होता है,मानो राहु ने शत्रु जानकर सूर्य को मुसके चढ़ा दिया हो** अर्थात् बंधन में बाँध लिया हो।

1– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– छंद सं.96, पृ. 359

2– उपरिवत्, छंद सं.32, पृ. 349

नायक के रूप सौन्दर्य पर मुग्ध, पूर्णतः आकर्षित नायिका प्रियमिलन में बाधक परिजनों से बैर करने को भी तत्पर रहती है वह अनूढ़ा कहलाती है। वह परिजनों के समक्ष लज्जा और घूँघट भी स्वीकार नहीं करती। नायिका की विचित्र मानसिक स्थिति का वर्णन निम्न छंदों में प्रस्तुत है–

मेरी सी आँखिन मेरो सो ज्यों करि जोतु विलोके हियो गहि गाढ़ौ।
आयो री आयौ चितै किन देखे वहै चिंत चोर चितौत है ठाढ़ौ।।
ब्रह्म भनै मन लाल को भे घर बाहर बैरि को वारिधि बाढ़ौ।
यहौ मुख देखि कहै धरिहाई लाज करी अरु घूँघट काढ़ौ।।[1]

ब्रह्म कवि कहते हैं कि नायिका का मन नायक को पूर्णतः समर्पित है। सखी से कहती है कि यदि तू मेरी आँखों से, हार्दिक प्रेम की प्रगाढ़ता से उसे देखे तब मेरी स्थिति का आभास हो सकेगा। प्रिय के घर आने पर भी नायिका लज्जापूर्वक घूँघट निकाले, ऐसा सम्भव नहीं।

अतिशय प्रेमोन्माद् में नायिका पर विक्षिप्त स्थिति का आविर्भाव स्वाभाविक होता है, ऐसी नायिका **'ऊढ़ा'** कहलाती है। ऊढ़ा परकीया नायिका की उक्ति दृष्टव्य है–

मात पिता पति देखत ही अहो को प्रति लोभ नहीं पुलकी।
नंदलला यहि मैंन मलाकनि कोने धों काम कला तुलकी।।
ब्रह्म भनै कहि केहि न लागी ठगो री हो मूरति मंजुल की।
सखि मोही न मोहन को मुख देखि जु ऐसी धों गोकुल के कुलकी।।[2]

उपर्युक्त छंद में कवि ने नायिका की रीझि का अत्यन्त आकर्षक वर्णन प्रस्तुत किया है। नायिका कहती है कि ऐसा कौन है जो अपने माता–पिता और पति को देखकर पुलकित न हो। नंदलाल की कामकला युक्त मंजुल मूरत को देखकर कौन है जो ठग न जाय। हे सखी वह गोकुल के कुल की नायिका ही नहीं है जो मोहन के मुख को देखकर मोहित न हो जाय। 'ऊढ़ा' नायिका की अतिशय प्रेम विह्लता का मनोहारी चित्र अंकित किया गया है।

1– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– छंद सं.37, पृ. 350

2– उपरिवत्, छंद सं.41, पृ. 351

2-4-1-6 भक्ति

भक्तिकाल के कृष्ण भक्त कवियों ने भक्ति की धारा पर जिस आलौकिक प्रेम को अवतीर्ण किया था, रीतिकालीन कवियों नें उसे भौतिक विलास पर आधारित कर दिया। ऐसा तत्कालीन परिस्थितियों के कारण हुआ था। डॉ. नगेन्द्र ने इस स्थिति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करते हुये लिखा है कि **'वास्तव में यह भक्ति भी उनकी श्रृंगारिकता का ही एक अंग थी। जीवन की अतिशय रसिकता से जब ये लोग घबरा उठे होंगे तो राधा—कृष्ण का यही अनुराग उनके धर्म भीरू मन को आश्वासन देता होगा।** ठीक इसी तरह रीतिकालीन आचार्य भिखारीदास ने **'आगे के सुकवि मानि हैं तो कविताई न तु राधा कन्हाई सुमिरन को बहानो है'** कहकर राधा—कृष्ण की भक्ति की गम्भीरता को कम कर दिया है। किन्तु जब हम ब्रह्म के काव्य का अनुशीलन करते हैं तो ज्ञात होता है कि इनके काव्य में रीतिकालीन भक्ति जैसी उच्छृंखल मानसिकता तथा थोथी आस्था न होकर ईश्वर के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों की भक्ति—भावना का व्यापक स्वरूप अभिव्यंज्जित हुआ है।

कवि ने निर्गुण निराकार ईश्वर प्राप्ति को दुर्लभ बताकर सगुण साकार ईश्वर—प्राप्ति का सारल्य व्यंज्जित किया है। एक उदाहरण देखिये—

प्राण चढ़ाय के जोग करो कहा काहे करो व्रत पुंज विसाला।
देह तपाय तपाय पचागिन काहे सहो वन बैठि कसाला।।
ब्रह्म विचारत जो हिय में सोइ रूप धरै नर को इहिं काला।
जाय लखो किन वा नन्दराय के आंगने खेलत नंद को लाला।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने योग की प्राणायाम साधना एवं कठिन व्रत धारण करना त्याज्य बताकर निर्देशित किया है कि नंद के आँगन में खेलते हुये मनुष्य रूप में अवतरित अपने साकार आराध्य के दर्शन क्यों नहीं करते। तात्पर्य यह है कि ज्ञान की दुष्कर साधना की अपेक्षा सहज साकारोपासना सर्व ग्राह्य है।

1— ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट—अकबरी दरबार के हिन्दी कवि— छंद सं.11, पृ. 346

दीनता का प्रकाशन भक्ति का प्रमुख अंग है। इसका कारण यह है कि अपने अवगुणों, दोषों तथा दुर्बलताओं की व्याख्या करने से मन निर्मल होता है, साथ ही परमात्मा द्रवीभूत हो जाते हैं। इसी कारण दैन्य भक्तों का बहुत बड़ा बल कहा गया है। भक्त के लिये भगवान की कृपा ही सर्वोपरि साध्य एवं लक्ष्य है। ईश्वर की कृपा से मनुष्य कर्मबंधन से छूटकर ब्रह्म रूप बन जाता है। निम्नलिखित छन्दों में कवि ने भक्ति के अन्तर्गत दैन्य–भाव को व्यक्त किया है–

जो तुम छत्र की छांह चलावत तो न कहूँ कछु में रिधि पाई।
जो तू धराधर भीख मंगावत तो न कहूँ कछु आप दपाई।।
ब्रह्म भनै विनती इतनी अब छोरूँ नहीं हरि तो सरनाई।
दीनदयाल दया करि माधव मोहिं कहाँ सब तोहि बड़ाई।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने आत्म समर्पण का भाव व्यक्त करते हुये कहा है कि, हे परमात्मा मैं आपकी शरण का त्याग नहीं कर सकता। आपकी कृपा है, चाहे छत्रपति बनावें अथवा भिखारी। हे दीनों पर दया करने वाले,इसमें मेरी नहीं आपकी ही बड़ाई है। आत्म–समर्पण में अपेक्षित दैन्य–प्रदर्शन उक्त छन्द में अनन्य भाव से वर्णित है। इतना ही नहीं कवि सुख–दुःख दोनों को प्रभू का प्रसाद समझकर उन्हें समान रूप से ग्रहण करने की बात कहता है, इष्टदेव के प्रति अपनी गहरी आस्था व्यक्त करता है।

निर्गुण ब्रह्म की उपासना में कवि की उदारता, एक्य भावना तथा हार्दिक विशालता दृष्टिगोचर होती है। परब्रह्म परमेश्वर की सर्वव्यापकता का अद्भुत् उदाहरण निम्न छन्द में देखने योग्य है–

दूरि रहै सब ही सब कोऊ नहीं परसे ऐसो भेखु बनायो।
जलहूँ, थलहूँ, तलहूँ, नभहूँ, तुम एक हो एक भलो घर छायो।।
एतो बड़ो सुकहाय के नाथ जु है सु कहाँ जहाँ आप छपायो।
देख्यो सबै सब देखे तुम्हे नहिं ब्रह्म लुके जनु है कित पायो।।[2]

2– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, छन्द सं. 12, पृ.346

1– उपरिवत्, छंद सं.11, पृ. 346

इसी धारणा के अनुसार कविगण विरहियों तथा विरहिणियों का वर्णन करते हुये प्रकृति का वर्णन उद्दीपक तत्व के रूप में सदा से करते चले आए हैं।

कवियों ने विरहाभिव्यक्ति के लिये प्रकृति को प्रभावी साधन स्वीकार किया है। इसके माध्यम से हार्दिक व्यथा को प्रकट करने के अधिक अवसर सम्भावित हैं। ब्रह्म की रचनाओं पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि इनके काव्य में प्रकृति के आलम्बनः रूप का अभाव सा है। कतिपय स्थलों पर ही प्रकृति का स्वतंत्र रूप से चित्रण उपलब्ध होता है। यहाँ पर ग्रीष्म ऋतु की भयंकरता तथा उसके व्यापक प्रभाव का दृश्य प्रस्तुत है–

उछरि–उछरि भेकी झपटे उरग पर उरग पे केकिन के लपटे लहकि है।

केकिन के सुरति हिये की न कछू है भये एकी करी केहरि न बोलत बहकि है।

कहें कवि ब्रह्म बारि हेरत हरनि फिरैं बेहर बहत बढ़े जोर सो जहकि है।

तरनि के तावनि तवा सी भई भूमि रही दसहु दिसान में दवारि सी दहकि है।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ग्रीष्म ऋतु में गर्मी की भयंकरता से त्रस्त विरोधी स्वभाव वाले जीवों की बेचैनी का वर्णन करता हुआ कहता है कि मेढक और सर्प, सर्प और मोर, हाथी और सिंह एक–दूसरे के शत्रु होते हुए भी निकट हैं। उन्हें स्वयं अपना भी होश नहीं है। धरती तवा की तरह तप रही है। हिरन प्यास से व्याकुल पानी की खोज में भटक रहे हैं। तूफानी हवायें बह रहीं हैं। दशों दिशाओं में दावाग्नि सी प्रज्ज्वलित है। यही भाव बिहारी के **'कहलाने एकत बसत अहिं–मयूर–मृग–बाघ'** दोहे में मिलता है। प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षण का अनुपम उदाहरण है–

सीतलता सुत अंग पियूष–पियूष में अंग समुज्जल कातो।

राधिका कान्ह वियोग अगिन्न गगन्न वर्‌यो सुभयो रंग रातो।।

ब्रह्म भनैं यो जलन्निधि जात जुपैनहिं हो तो ततो बरिजातो।

तो तनु तेज तप्यो तरुनी ताते लागतु तोहिं तमी पति तातो।।[2]

1– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि, छंद सं.72, पृ. 355

2– उपरिवत्, छन्द सं. 55, पृ.353

उक्त छन्द में कवि ने कृष्ण के विरह में राधा के हृदय में प्रज्ज्वलित वियोगाग्नि से जलते हुये आकाश का रंग लाल होना बताया है। यदि जलनिधि का सानिध्य न होता तो सम्भवतः जल गया होता। नायिका के शरीर के ताप से तपकर चन्द्रमा भी लाल हो गया है। इस दृश्य में प्रकृति के उद्दीपक वर्णन के साथ अत्युक्ति पूर्ण कल्पना का समावेश है।

कहीं ब्रह्म शीतल पवनरूपी तीर से नायिका की छाती में घाव होना दर्शाते हैं, तो कहीं कलहंस, कोकिला, कोक और केकी के कोलाहल से हृदय की पीड़ा में अभिवृद्धि का वर्णन करते हैं। तात्पर्य यह है कि प्रकृति के पदार्थों से नायक–नायिका का विरह उद्दीप्त होकर चरमसीमा को प्राप्त करता है। प्रकृति के उद्दीपक वर्णन का लक्ष्य भी यही है।

2-4-1-8 नीति और उपदेश

प्राचीन संस्कृत साहित्य में नीति निर्धारण कर उपदेश देने का कार्य वरिष्ठ आचार्यों का रहा है। चाणक्य नीति, विदुरनीति, पाराशर नीति इसके ज्वलंत प्रमाण हैं। उसी परम्परा में हिन्दी कवियों ने समुचित सामाजिक व्यवस्था, धर्मभीरुता एवं न्यायप्रियता बनाये रखने के उद्देश्य से नीतिपूर्वक उपदेशात्मक काव्य–रचना की है। रीतिकाल में अपने आश्रयदाताओं को पथभ्रष्ट होने से बचाने का कार्य तत्कालीन कवियों ने समयानुकूल काव्य–रचना करके किया है। इस तरह की रचनायें यद्यपि श्रोताओं को आल्हादित करके आत्मविभोर करने की क्षमता नहीं रखतीं, फिर भी उनमें मानवीय सहजानुभूति अदृश्य रूप में विद्यमान रहती है, प्रभावकारी गुण सम्पन्नता भी रहती है।

आलोच्य कवि ब्रह्म की रचनाओं में परमात्मा के प्रति अखण्ड विश्वास, भक्ति की प्रेरणा, लौकिक अनुभूतियों का सारग्राही स्वरूप एवं नीति निर्धारक प्रेरणात्मक तत्व सहजता से उपलब्ध होते हैं। जीवन की सारहीनता एवं क्षणभंगुरता का उदाहरण दृष्टव्य है–

बीच ही मिल्यो है साथ हाथ ही भयो, असाथ दारा सुत मीतबंधु दीन भलो भाखिये।

हाटकरू हाथी येहि कौन के भए हैं साथी, लाख बेर लाष पाए तऊ अभिलाषिये।।

ब्रह्म भनै नाथ ही को नीको नातो नीकी, विधि विषया बिरंचि के पियूष रस चाखिये।

साथ ही रहत साथ छाड़े न छुट्त साथ, साथ आवे साथि जाइ सोई साथ राखिये।।[1]

कवि ने खिन्न मन को सांत्वना देने के अभिप्राय से परमात्मा के प्रति अगाध श्रृद्धा एवं अटल विश्वास व्यक्त: करते हुये प्रेरणा दी है कि हे मूर्ख मन चिन्ता करने से कोई लाभ नहीं है। जिसने जन्म दिया है, वह भरण पोषण भी करेगा। कितनी तन्मयता से, कितने गहरे आत्मविश्वास से कवि ने विचलित मना लोंगों को धैर्य रखने का प्रेरणात्मक सुझाव दिया है।

यद्यपि नीति निर्देशक तत्व सहज रूप से बोधगम्य नहीं होते, क्योंकि मनुष्य स्वभाव से स्वार्थी होता है तथा स्वार्थ की भाषा ही उसे प्रिय प्रतीत होती है। नीति विषयक अवधारणा स्वभाव के विपरीत होने के कारण अरुचिकर लगती है, फिर भी कवि ने अपने वर्णन–कौशल से नीति के दुर्बोध तथ्यों को उपदेशात्मक बनाकर प्रस्तुत किया है। निम्न उदाहरण देखिये–

नमैं तुरी बहु तेज नमैं दाता धन दे तो,
नमैं अंब बहु फल्यो नमै जलधर बरसे तो।
नमै सुकवि जन शुद्ध नमै कुलवन्ती नारी,
नमै सिंह गज हनत नमै गज बैल सम्हारी।
कुंदन इमि कसियो नमै वचन ब्रह्म सच्चा भने,
पर सूखा काठ अजान नर टूट पड़े पर नहिं नमै।[2]

उक्त उद्धरणों से प्रतीत होता है कि ब्रह्म की रचनाओं में नीति निर्देशक तत्वों की तुलना में उपदेशात्मक सुझाव ही अधिक हैं। कवि की रुझान नीति–प्रेरक कम थी, उपदेश–प्रेरक अधिक।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अकबर के दरबारी कवि होने के नाते ब्रह्म को, आश्रयदाता को प्रभावित करने के उद्देश्य से यदि

1– ब्रह्म के छंद, परिशिष्ट–अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– छंद सं.62, पृ. 354

2– उपरिवत्, छंद सं.66, पृ. 354

भक्तिपरक रचनाएँ आवश्यक थीं, तो श्रृंगार के संयोग तथा वियोग वर्णन की रचनाएँ भी। यदि मान–मनुहार आश्रयदाता को प्रसन्न कर सकता था, तो प्रकृति चित्रण पर भी आश्रयदाता रीझ सकता था। तात्पर्य यह है कि परिस्थिति एवं राज्येच्छा को दृष्टिगत रखते हुये काव्य–रचना ही कवि–धर्म था। इन सभी दृष्टियों से ब्रह्म की रचनाओं का साहित्यिक मूल्यांकन करने पर कहा जा सकता है कि ब्रह्म राजनीतिः पटु, प्रत्युत्पन्नमति, वाक्चातुर्य सम्पन्न एवं प्रतिभाशाली कवि थे। अपने अद्भुत ज्ञान एवं विलक्षण प्रतिभा के फलस्वरूप ही ब्रह्म राजदरबार में उच्च पद के अधिकारी बने एवं सम्राट अकबर के नवरत्नों में स्थान प्राप्त कर सके।

2-4-2 श्रीपति मिश्र

रीतिकाल के मूर्धन्य आचार्य श्रीपति मिश्र ने लक्षण ग्रंथ परम्परा का निर्वाह करते हुये जिन ग्रंथों का प्रणयन किया, रीतिकालीन साहित्य में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। अपने ग्रंथों में विभिन्न कवियों की रचनाओं के उद्धरण देते हुये काव्यांगों का निरूपण करना उनके विशिष्ट व्यक्तित्व की पहचान है। इसी सृजनात्मक प्रतिभा के बल पर उन्हें साहित्यिक गौरव प्राप्त हुआ है। उनका वर्चस्वी कवि अपने छन्दों में पदलालित्य, ध्वनिसाम्य तथा विन्यास–वैचित्र प्रस्तुत करने में पूर्ण सफल रहा। वे वैयक्तिक प्रेमानुभूतियों के पक्षधर थे। उनके छन्दों में सौन्दर्यानुभूति की स्निग्धता, शिल्प की चारुता तथा भाषा की सहजता एक साथ दिखायी देती है।

श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' के अनुसार– आचार्य श्रीपति ने संस्कृत के आचार्यों से सामग्री लेकर अपनी मौलिकता से हिन्दी के आचार्यों में विशिष्ट स्थान बनाया। वे दशांग कविता के अधिकारी आचार्यों में गिने जाते हैं। सर्वांगनिरूपक आचार्य के रूप में उनका नाम सम्मान पूर्वक लिया जाता है।[1]

1– आचार्य श्रीपति और उनका आचार्यत्व–शोध आलेख, श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त'कुमुद'

श्रीपति मिश्र की कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न प्रकार प्रस्तुत है–

2-4-2-1 काव्य सरोज

काव्य सरोज श्रीपति का बहुत ही प्रौढ़ग्रंथ है। 'काव्यांगों का निरूपण जिस स्पष्टता के साथ इन्होंने किया है, उससे उनकी स्वच्छ बुद्धि का परिचय मिलता है।'[1] श्रीपति के **'काव्य सरोज'** का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य है, उसका दोष निरूपण। अपने पूर्ववर्ती ज्ञात और अज्ञात कवियों के काव्य से उदाहरण लेकर उनमें दोष बताकर श्रीपति ने हिन्दी काव्य शास्त्र में एक नई परम्परा का सूत्रपात किया है। शुक्लजी ने श्रीपति के इस वैशिष्ट्य को स्वीकार करते हुये लिखा है कि **''श्रीपति ने दोषों के उदाहरण में केशवदास के बहुत से पद्य रखे हैं। इससे इनके साहित्यिक विषयों का सम्यक् और स्पष्ट बोध तथा विचार–स्वातंत्र्य प्रकट होता है।''**[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि काव्य रीति के क्षेत्र में श्रीपति ने मौलिक योगदान दिया है।

अ- 'काव्य सरोज' का प्रथम दल **'काव्य लक्षण'** नाम से अभिहित है। इसके प्रारंभ में गणेश वंदना प्रस्तुत है। तत्पश्चात् दो दोहों में ग्रंथ का रचनाकाल, कवि का स्थान, जाति तथा नाम का उल्लेख है–

1. **संवत मुनि मुनि मुनि ससी, सावन सुभ बुधवार।**
   असित पंचमी को लियो, ललित ग्रंथ अवतार।।[3]

मुनि से तात्पर्य– सात ऋषि

चन्द्र – एक

'अंकानां वामतो गतिः' उल्टी ओर से गणना करने पर ग्रंथ का रचना काल सं. 1777 कृष्णपक्ष की पंचमी बुधवार को ठहरता है।

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास– पं.रामचन्द्र शुक्ल, पृ.181

2– उपरिवत्, पृ. 206

3– काव्य सरोज– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, संपा. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ.121

2. **सुकवि कालपी नगर को, द्विजमनि सीपति राइ।**

जस सम स्वाद जहान को, वरनत सुष समुदाइ।।[1]

स्पष्ट है कि ग्रंथकार का पूरा नाम श्रीपति राइ, जाति ब्राह्मण तथा स्थान कालपी है।

तदुरान्त श्रीपति ने काव्यलक्षण के अन्तर्गत उत्तम, मध्यम काव्यों के लक्षण प्रस्तुत किये हैं। वाच्यचित्र तथा शुद्ध चित्र की परिभाषा उदाहरण सहित दी गयी है।

ब. द्वितीय दल में शब्द - निरूपण है।[2] शब्द की परिभाषा तथा शब्द के भेदों का विवरण है। रूढ़ शब्द, योग शब्द तथा योग रूढ़ – तीनों शब्दों के लक्षण तथा उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं।

स. तृतीय दल में अर्थ- लक्षण[3] पर विचार किया गया है। वाच्यार्थ तथा लक्ष्यार्थ लक्षणों के उदाहरण भी दिये गये हैं। लक्षणा के साध्यवसाना, सारोपा, शुद्धा आदि छः प्रकार के भेदों का सोदाहरण परिचय प्रस्तुत किया गया है। गूढ़ व्यंग्य तथा अगूढ़ व्यंग्य के सभी भेदोपभेद– सयोगता, विप्रयोगता, साहचर्या, विरोधता, अर्थांतरा, कारणांत, चिह्नांत, समर्थात् आदि लक्षण एवं उदाहरण आचार्य श्रीपति ने स्पष्ट किये हैं।

द. चतुर्थ दल में दोष- लक्षण,[4] पर विचार किया गया है। शब्द–दोष तथा अर्थ–दोष में से इस दल में केवल शब्द–दोष के भेदों का निरूपण है। श्रुतिकटु लक्षण एवं गनागन विचार भी किया गया है। व्याहतार्थ लक्षण, जाति भंग लक्षण, अप्रयुक्ति लक्षण, असमर्थ लक्षण, शिथिल बंध लक्षण, उपहति लक्षण, लघु महा, अति, असंगत लक्षण, भाषाच्युत लक्षण, (लघु भाषाच्युत, मध्या भाषाच्युत, गुरू भाषाच्युत) वरन् प्रतिकूल लक्षण, युक्त वरन्,

---

1– काव्य सरोज– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, संपा. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ.121

2– उपरिवत्, पृ.123

3– उपरिवत्, पृ.124

4– उपरिवत्, पृ. 136

प्रतिकूल अश्लील दोष–लक्षण–जुगुप्सा, लज्जा आदि शब्द दोष के भेदोपभेदों का उल्लेख किया गया है। रसिक प्रिया, काव्यप्रिया तथा विक्रमविलास के उपयुक्त उदाहरण लेकर आचार्य श्रीपति ने शब्दों–दोषों का विस्तार पूर्वक प्रतिपादन किया है।

य- आचार्य श्रीपति ने 'पंचम दल' में अर्थदोष लक्षणों[1] की विवेचना की है। इसके अन्तर्गत दुःक्रम खंडित, असम्मित, वस्तु सम्बंध, संदिग्ध तथा दुष्टवाक्य के लक्षण तथा उदाहरण दिये गये हैं। 1.शिथिल बंध 2. उपहृत 3. ग्रामभेद 4.भाषाच्युत 5.संकेतार्थ 6.दुष्टवाक्य, इस प्रकार इन दोषों की परिकल्पना करके उन्होंने भारतीय काव्यशास्त्र के इतिहास में नये प्रतिमान स्थापित किये हैं।

क- छटवें दल में- आचार्य ने अर्थदोष निवारण के भेदों को[2] विस्तार से विश्लेषित किया है। इसमें श्रुति कटुदोष, व्याहतार्थ दोष, जातिभंग दोष, अप्रयुक्त दोष, असमर्थ दोष, सिथिल बंध दोष, उपहति दोष, ग्रामदोष, महाग्राम दोष, असंमत दोष, लघुभाषाच्युत दोष, व्यस्त दोष, संदिग्ध दोष तथा पुनरूक्ति दोष आदि दोषों के निवारण के विधान को प्रधानता प्रदान की है।

दोष निवारण के क्षेत्र में श्रीपति की मौलिकता सर्वमान्य है। श्रीपति का दोष–परिहार प्रसंग अधिक विस्तृत एवं व्यवस्थित है। वे इस क्षेत्र में रीतिकाल के आचार्यों में अग्रगण्य हैं।

ख- ग्रंथ के सप्तम् दल में काव्यगुण कथन[3] के अन्तर्गत शब्द गुण भेद एवं उदाहरण सहित वर्णित हैं। शब्द–गुण के दस भेद– औदार्य, प्रसाद, समता, सांति, समाधि, उक्ति, मोद, माधुर्य, सुकुमारता तथा असुर दीप्ति आदि लक्षण एवं उदाहरण सहित विवेचित हैं।

1– काव्य सरोज– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, संपा. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ. 146

2– उपरिवत्, पृ. 150

3– उपरिवत्, पृ. 160

ग- अष्टम् दल में- अलंकार के अर्थ गुण[1]— भव्य कल्प, परजायोक्ति सुधर्मिता, स्वशब्दगुण, अर्थव्यक्ति, अश्लेष, प्रसन्नता तथा ओज लक्षण एवं उदाहरण सहित वर्णित हैं। गुण–निरूपण में श्रीपति ने मौलिकता प्रदर्शित की है। उन्होंने भव्यकल्प, अश्लेष और प्रसन्नता जैसे सर्वथा नवीन काव्यगुणों की कल्पना की है।

घ, ड.- नवम् एवं दशम् दल में- अलंकार निरूपण[2] करते समय परम्परागत भेदोपभेदों के अतिरिक्त श्रीपति ने शब्दालंकारों[3] के अन्तर्गत तत्पर और अतत्पर विधानचित्र नामक नवीन अलंकारों का वर्णन करके उनके लक्षण भी गिनाए हैं। अर्थालंकारों[4] के विवेचन में 'चालिस विधि उपमा कही कवि कल्पद्रुम माह' कहकर श्रीपति कहते हैं कि मैने 'कवि कल्पद्रुम' में चालीस तरह की उपमाओं का वर्णन किया है। यहाँ पर उनकी मात्र सोलह प्रकार की उपमाओं का लक्षण एवं उदाहरण सहित विवेचन किया गया है।

च- ग्रंथ के ग्यारहवें दल में- उभयालंकारों[5] के सरूप तथा विरूप दो भेद करते हुये अनुप्रास–रूपक तथा अनुप्रास–उत्प्रेक्षा–दृष्टाँत अलंकारों के मिश्रित प्रयोगों के लक्षण एवं उदाहरण प्रस्तुत किए गये हैं।

छ– बारहवें दल में आचार्य श्रीपति ने भाव लक्षण[6] के अन्तर्गत नौ प्रकार के– रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय तथा निर्वेद स्थायी भाव गिनाये हैं तथा उनकी उदाहरण सहित परिभाषा प्रस्तुत की है।

1– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृ.163

2– उपरिवत्, पृष्ठ 166

3– उपरिवत्, पृष्ठ 167

4– उपरिवत्, पृष्ठ 176

5– उपरिवत्, पृष्ठ 196

6– उपरिवत्, पृष्ठ 199

ज- तेरहवें दल में- विभाव–वर्णन[1] में आचार्य श्रीपति ने विभाव के आलंम्बन और उद्दीपन दो भेद किए हैं तथा उनका सोदाहरण विवेचन प्रस्तुत किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आचार्य श्रीपति की काव्यांग निरूपण प्रणाली अत्यन्त सुलझी हुयी है। काव्य के विभिन्न अंगो पर उनका चिंतन मौलिक एवं सर्वथा नवीन है। उनके ग्रंथों का सम्यक् अनुशीलन अपेक्षित है।

2-4-2-2 काव्य सुधाकर

आचार्य श्रीपति मिश्र विरचित काव्य सुधाकर का रचनाकाल उनकी प्रौढ़कृति काव्य सरोज से मिलता–जुलता है। दोंनों ग्रंथों में संवत् 1777 वि. निर्माण तिथि अंकित है। **'काव्य सुधाकर'** के 19 छन्द काव्य सरोज में समानरूप में उपलब्ध हैं। काव्य सुधाकर ग्रंथ का शुभारम्भ जिस विषय विस्तार के साथ किया गया था, उससे ग्रंथ के स्वरूप की व्यापकता कई हजार छन्दों तक पहुँच जाती है। शायद इसी कारण ग्रंथ अधुरा बना रहा तथा दूसरा कारण लक्ष्मीधर मालवीय ने यह दिया है कि श्रीपति के आश्रयदाता अब्दुल्ला शेख का वरदहस्त उनके सिर से अचानक हट गया। संभव है उक्त दोनों कारणों से कवि ने काव्य सुधाकर को काव्य–सरोज में समाहित कर लिया हो। मात्र 91 छन्दो वाले काव्य सुधाकर में किसी आश्रयदाता का उल्लेख नहीं है। काव्य सरोज में पदे–पदे कवि उसका प्रशस्ति गान करता चलता है।[2]

तात्पर्य यह है कि कवि की कोई न कोई विवशता अवश्य रही होगी, जिस कारण **'काव्य सुधाकर'** ग्रंथ अधूरा बना रहा तथा काव्यांग निरूपक प्रौढ़तम ग्रंथ **'काव्य सरोज'** का सृजन सम्भव हो सका। **'काव्य सुधाकर'** का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न प्रकार प्रस्तुत है–

1– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृष्ठ 203

2– उपरिवत्, पृष्ठ13

अ - ग्रंथ के प्रारम्भ में कवि ने 'स्यामा स्याम अमर विटप, श्री गुरू पद जलजात[1], दोहे में इष्ट वंदना करते हुये निर्मल–बुद्धि के वरदान की याचना की है। माँ वाणी की स्तुति तथा सृष्टि निर्माता विरंचि को शीश झुकाकर प्रणाम करना वर्णित है।

ब- आचार्य श्रीपति ने तत्कालीन प्रसिद्ध कवियों– केशव, गंग, रहीम तथा ब्रह्म (बीरबल) आदि के काव्य की महिमा का बखान करते हुये शब्द की प्रधानता को महत्व प्रदान किया है। पिता का नाम, वंश, काशीवासी होने की सूचना देकर विविध रस–ग्रंथों का निर्माण तथा दृष्ट और अदृष्ट वर्णन के प्रमाण प्रस्तुत किए हैं।[2]

स- 'काव्य लक्षण' प्रकरण में उत्तम, मध्यम तथा अधम, श्रेष्ठ काव्य के तीन प्रकार गिनाये हैं[3] तथा उनका सोदाहरण परिचय प्रस्तुत किया है। तत्पश्चात् अनुप्रास–लक्षण उसके छेक, लाट तथा मिश्रित तीनों भेदों का उदाहरण सहित विवेचन किया गया है।

द- चित्रलक्षण वर्णन[4] में शब्द चित्र के चार प्रकार गिनाये हैं– एकाक्षरी, जुगाक्षरी, ह्रस्वक्षरम् तथा अतत्पर।

अतत्पर के पुनः दो भेद– एक उक्ति तथा पुनरुक्ति किये गये हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि **'काव्य सुधाकर'** ग्रंथ की शेष सामग्री **'काव्य सरोज'** में समाहित कर कवि ने **'काव्य सुधाकर'** ग्रंथ को अपूर्ण ही रहने दिया है। **'काव्य सुधाकर'** में काव्य लक्षणों को सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है। अनुप्रास एवं चित्रवर्णन में कवि ने मार्मिक उदाहरण देकर अपने पुष्ट एवं अनुभूत ज्ञान को दर्शाया है।

1– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली– सं. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ. 207

2– उपरिवत्, पृ. 207

3– उपरिवत्, पृ. 209

4– उपरिवत्, पृ. 215

2-4-2-3 अनुप्रास

'काव्य सुधाकर' के काव्य लक्षण प्रकरण में अनुप्रास के छेक, लाट तथा मिश्रित तीनों भेदों तथा उपभेदों का परिचय प्रस्तुत किया गया है। ***अ- छेक, लाट मिश्रित कहै तीन भाँति कवि लोय***[1] कहकर श्रीपति ने अनुप्रास के तीन भेद गिनाये हैं। उनमें छेकानुप्रास के– खण्डछेक, पदछेक तथा समस्त छेक तीन भेद किए हैं।

ब- लटानुप्रास के खण्डलाट, पदलाट, सुपदलाट, समस्त लाट तथा असमस्त लाट,सभी उपभेदों को उदाहरण सहित व्याख्यायित किया गया है।

स- इसी प्रकार मिश्रित के छेक- लाटानुमिश्रित, लाटछेक मिश्रित, पद–सुपद मिश्रित तथा सुपद–पद मिश्रित भेद करके उदाहरण सहित लक्षण प्रस्तुत किये गये हैं।

2-4-2-4 श्रीपति के कवित्त

काव्य सरोज तथा काव्य सुधाकर जैसे श्रेष्ठ लक्षण ग्रंथों के अतिरिक्त साठ छन्दों वाली छोटी सी रचना 'श्रीपति के कवित्त' अपने में विविध विषयों पर अनूठा सौन्दर्य समेटे हुये है। इसमें कहीं प्रकृति के मनोरम दृश्य कवि के अन्तर को अभिभूत करते हैं तो कहीं भक्ति की पावन, सरस स्रोतस्विनी में कवि आकण्ठ निमग्न हो जाता है। कहीं नीति और उपदेश जीवन को अनुशासित करते हैं, तो कहीं सांसारिक ज्ञान अपनी व्यापकता से स्तम्भित कर देता है। श्रीपति की विविध रूपिणी कविता की झलक इस कृति में सहज सौन्दर्य बिखेरती है। इसमें कवि का बहुआयामी व्यक्तित्व प्रतिभासित होता है।

इस कृति का साहित्यिक अनुशीलन करने से ज्ञात होता है कि निम्न विन्दुओं पर कवि ने अपनी लेखनी को गतिशील बनाया है।

1– श्रीपति मिश्र ग्रंथावली– सं. लक्ष्मीधर मालवीय, पृष्ठ 220

अ- लौकिक ज्ञान

श्रीपति के काव्य पर गम्भीरता से विचार करें तो उनके विस्तृत लौकिक ज्ञान तथा व्यापक अनुभूतियों को देखकर आश्चर्य चकित होना आश्चर्य की बात नहीं है। जागतिक अनुभव के बल पर यदि वे तिल का तेल, अजमेर का फुलेल, विद्या का विवाद, राम का गुणगान, जेठमास की सीत, गाय का नवनीत तथा बिना फेरफन्द का मीत अच्छा बताते हैं, तो बकरी का दूध, अहेरी का धर्म, चेरी का भेष, यामिनी का जलजात, भील का भवन, ऊँट की सवारी को बुरा कहने में भी उन्हें कोई संकोच नहीं होता। सांसारिक ज्ञान के साथ भक्ति–भावना का संस्पर्श उनके काव्य की विशेषता है। उदाहरण देखिये–

तेल नीकौ तिल अजमेर को फुलेल नीकौ,
साहब दलेल नीकौ सील नीकौ चन्द कौ।
विद्या को विवाद नीकौ राम गुन गान नीकौ,
कोमल मधुर सदा स्वाद नीकौ कंद कौ।।
सीत नीकौ जेठ को गऊ को नवनीत नीकौ,
श्रीपति जू मीत नीकौ बिना फेर फन्द कौ।।
रेसम को पट नीकौ जात रूप घट नीकौ,
वट नीकौ वंशीवट नट नीकौ नंद कौ।।[1]

X X X X

दूध झूठौ छेरी को अहेरी को धरम झूठौ,
वेस झूठो चेरी को छदाम के न काम कौ।
श्रीपति सुजान जलजात झूठो जामिनी कौ,
जामि निस झूठौ बिन जामिनी के जाम कौ।।
वेद विन जाग झूठौ भेद विन राम झूठौ,
सघन सु पेड़ झूठौ बाग बिन आम कौ।
सुख झूठौ स्वान को वपुष झूठौ दल विन,
मुख झूठौ सोई जामें नाम नहीं राम कौ।।[2]

1– श्रीपति मिश्र के कवित्त, छन्द संख्या 30,श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृष्ठ 233

2– उपरिवत्, छन्द संख्या 32, पृष्ठ 233

उक्त छन्दों में श्रीपति ने यदि कुछ औचित्यपूर्ण कहा है तो उनमें 'राम गुनगान' भी सम्मिलित है और यदि कुछ भी मिथ्या कहा है तो बिना रामनाम के मुख भी झूठा बतलाया है। तात्पर्य यह है कि ज्ञान के साथ भक्ति–भावना का पुट उनकी कविता में सर्वत्र विद्यमान है।

ब- भक्ति भावना :

यद्यपि रीतिकालीन कवियों में भक्ति वर्णन नाममात्र का ही मिलता है, श्रृंगार वर्णन का ही प्राधान्य रहा है, किन्तु श्रीपति के काव्यानुशीलन से उपलब्ध तथ्यों के आधार पर उनकी साकारोपासना को किसी भी दृष्टिकोंण से कम नहीं कहा जा सकता है। राम–कृष्ण के प्रति अतिशय–अनुराग, अनन्यता एवं एकनिष्ठता के प्रभूत प्रमाण उनकी कविता में यत्र–तत्र बिखरे पड़े हैं। तुलसी की तरह **'एक भरोसो एक बल, एक आश विश्वास'** मानकर तथा राम घनश्याम के अनन्य उपासक चातक की तरह स्वयं कवि कह उठता है– **'श्रीपति भरोसौ मोहिं और न भरौसो वाहीं स्याम रंग वारे कौ।**[1] यही नहीं, हरिनाम स्मरण की महत्ता प्रतिपादित करते हुये वे कहते हैं– **'तातहू की जीत नीकी निगम प्रतीत नीकी श्रीपति सुजान प्रीति नीकी हरिनाम की'**।[2]

भगवान कृष्ण के प्रति उनकी अभूतपूर्व लगन तथा अनुराग जन्य भावात्मकता का अनूठा उदाहरण देखिये–

छूटे गढ़ी छूटे गढ़ मढ़ी छूटें मढ़ छूटे, छूटें कोटि पल में कमानन के जाल सों।
छूटें अमरावती को राज पाक सासन को, छूटे कमलासन को आसन मराल सौं।।
श्रीपति सुजान छूटे चन्द की कला सो जोन्ह, छूटे चन्दकला चंदभालहू के भाल सौं।
छूटे लाष लोगन ते लोक परलोक छूटे, मन ते न छूटे लागी लगन गुपाल सौं।।[3]

1– श्रीपति मिश्र के कवित्त, छन्द संख्या 24, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृष्ठ 232

2– उपरिवत्, छन्द संख्या 29, पृष्ठ 233

3– उपरिवत्, छन्द संख्या 38, पृष्ठ 234

उक्त छन्द में कृष्ण भक्ति की रसमग्नता असंदिग्ध रूप से स्पृहणीय है। इष्ट के प्रति एकलय, एकतान होना उनकी भक्ति की पराकाष्ठा है। 'काव्य सुधाकर' में कवि ने **'सेवक सीताराम को राय अनूप प्रवीन। ताको सुत श्रीपति भयो संकर पद जल मीन'**[1] कहकर स्वयं को भगवान शंकर का भक्त स्वीकार किया है। शिवभक्त का राम–कृष्ण उपासक होना स्वाभाविक है।

स- प्रकृति वर्णन

श्रीपति ने अपने काव्य में प्रकृति का उद्दीपन रूप में वर्णन किया है। प्रकृति का उन्मुक्त वर्णन भी जहाँ–तहाँ मिलता है। प्रकृति मानवीय हर्ष से हर्षित एवं शोक से शोकाकुल दृष्टिगत होती है। ऐसे वर्णनों में प्रकृति के नैसर्गिक स्वरूप का प्रायः लोप सा हो गया है। हिन्दी साहित्य के अधिकतम प्रकृति वर्णन मानवीय भावनाओं से ही परिप्लावित हैं। श्रीपति ने अपने कवित्तों में बादलों का एक चित्र खींचा है, जिसमें विरहिणी नायिका नायक की अनुपस्थिति में बादलों के उत्तेजक रूप से व्यथित होकर कहती है–

जल भरे झूमै मनो भूमै परसत पाय, दसहू दिसान घूमै दामिनी लए लए।
धूमधार धूसरित धूम से धुधारे कारे, धुरवान धारे धावै छवि सों छए छए।।
श्रीपति सुजान कहै घेरि घेरि घहराहि, तावत अतन तन तान ते तए तए।
लाल विन कैसे लाज चादर रहेगी मोहि, कादर करत आइ बादर नए नए।।[2]

यहाँ कवि ने बादलों के उद्दीपक रूप का वर्णन किया है। बादलों के दामिनी युक्त तथा छवि सम्पन्न स्वरूप को देखकर नायिका भयातुर हो जाती है। सोचती है नायक के न रहने पर भी काम उद्दीप्त हो गया तो लाजरूपी चादर कैसे रहेगी।

निम्न छन्द में कवि ने शरद् ऋतु की मनोहर चाँदनी का चित्र उकेरते हुये विरहिणी की वेदना का वर्णन किया है, जिसमें नायिका को शरद ऋतु की चाँदनी दाहक प्रतीत हो रही है–

1– काव्य सुधाकर, छन्द संख्या 15, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृ. 208

2– श्रीपति मिश्र के कवित्त, छन्द संख्या 15, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृ.231

फूले आस–पास कास विमल अकास भयो,

रहीं न निसानी कहूँ महीं में गरद कीं।

राजत कमल–दल ऊपर मधुप मैन,

झाईं सी दिषाई ब्रज विरह फरद की।।

श्रीपति रसिक लाल आली वनमाली विन,

कछु न उपाउ मेरे मन के दरद कीं।

हरद समान तन जरद भयो है अब,

करद सी लगे यह चाँदनी सरद् की।।[1]

यहाँ पर कवि ने विरहिणी नायिका की वेदना में अभिवृद्धि करने वाली शरद् ऋतु का उद्दीपक रूप प्रस्तुत किया है, जिसमें नायिका का शरीर पीला पड़ गया है। नायक के संयोग के बिना नायिका के मन के दर्द का कोई उपचार नहीं है।

द- रूप वर्णन

रीतिकालीन श्रृंगार वर्णन में अधिकतर नायिका के रूप वर्णन की परम्परा प्रचलन में थी। सौन्दर्य पर आकर्षित होना मन का विशेष गुण है। यहाँ श्रीपति ने श्रीकृष्ण की रूपमाधुरी का वर्णन करते हुये कहा है कि गिरधारी की भोरी छवि हृदय में समा गयी है, निकालने पर भी नहीं निकलती है, भुलाने पर भी नहीं भूलती। नायिका पूर्णतः नायक के रूप पर मुग्ध है। एक चित्र देखिए–

नीकी कें समारी जरकस वारी पाग, रंगी केयों पेचवारी सिरपेच है किनारी की।

जोर वारी भोहें सोहें वरुनी मरोर वारी, छोरवारी चपल चितौन वनवारी की।।

श्रीपति जू चित ते निकारी नहीं जात न विसारी, जात भोरी छवि लाल गिरधारी की।

काजरतें कारी देह दृग की दुलारी वही, बाँके नैन वारी मैन मूरति बिहारी की।।[2]

1– श्रीपति मिश्र के कवित्त, छन्द संख्या 19, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, पृ.231

2– उपरिवत्, छन्द संख्या–46, पृ.235

उक्त छन्द में नायक के रूप का अद्भुत आकर्षण वर्णित है। एक ओर नायिका कृष्ण की **'जोर वारी भौहों'** तथा **'मरोर वारी वरुनी'** पर मुग्ध है तो दूसरी ओर **'वनवारी की चपल चितौन'** उसका मन मोह लेती है। **'काजल के समान काली देह भी दृग की दुलारी'** बन जाती है तथा **'बिहारी की बाँके नैन वारी मूरत'** नायिका के ह्रदय से निकालने पर भी नहीं निकलती।

य- नीति और उपदेश

श्रीपति की कविता में नीति और उपदेश का विशिष्ट स्थान है। इनके नीति और उपदेश व्यंजक तथा केवल जनश्रुति पर आश्रित नहीं हैं वरन् जीवन की मार्मिक अनुभूतियों पर आधारित हैं। आश्रयदाताओं को समय–समय पर सावधान और सचेत करके कर्तव्याभिमुख होने का संदेश देना दरबारी विद्वान कवियों का दायित्व रहा है। श्रीपति भी चूँकि राजाश्रित थे, इसलिये उनकी कविता में नीति–उपदेश का वर्णन स्वाभाविक है। यमुना स्नान की महिमा का वर्णन करते हुए कवि कहता है–

जा जमुना में अन्हात जो प्रात ही विप्र बनाइ बनी बिगरैगी।
श्रीपति भामरि दैं हैं उठाइ के पामरी चारु हिये की करैगी।[1]

इतना ही नहीं, **' नादन के वादन कों स्वाद न वधिर जाने, आँधरो न जानै कछु रूप रंग दाइ कौ'** कहकर श्रीपति अंधे और वधिर की विवशता व्यक्त करते हैं। एक स्थान पर श्रीपति ने कहा है–

चोरी नीकी चोर की सुकवि की लवारी नीकी,
गारी नीकी लागति ससुर पुर धाम की।
नाहीं नीकी मान की सयान की जवान नीकी,
तान नीकी तिरछी कमान नीकी काम की।।[2]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने कतिपय औचित्य निर्धारित किए हैं, साथ ही उनके अनुपालन का विशिष्ट आग्रह किया है।

1– श्रीपति के कवित्त, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, छन्द संख्या–2, पृष्ठ 229

2– उपरिवत्, छन्द संख्या–29, पृष्ठ 232

2-4-2-5 पावस कवित्त रत्नाकर

यह ग्रंथ कवि सुहाने द्वारा सम्पादित संस्करण है, जिसमें आचार्य श्रीपति के पावस ऋतु से सम्बद्ध सात छन्द उपलब्ध हैं। इन छन्दों में कवि ने पावस ऋतु के अषाढ़ एवं श्रावण मास की प्राकृतिक छटा को दर्शाया है। आषाढ़ के शुभागमन पर होने वाले नैसर्गिक परिवर्तन का आकर्षक दृश्य प्रस्तुत है—

श्रीपति सुहावन है झिल्ली झलकावन है,

विरही सतावन है चिंता चित बाढ़ की।

लगन लगावन है मदन जगावन है,

चातिक को गावन है, आवन अषाढ़ की।[1]

अषाढ़ मास में तेज हवायें प्रवाहित होती हैं, मयूर हर्षित होते हैं, दादुर ध्वनि करते हैं, विरहियों को कष्ट होता है और जब बादल उमड़—घुमड़ आकाश को आच्छादित करते हैं तो नायिकाओं की मनःस्थिति 'कंत बिन भावत सदन ना सजनि मो पै विरह प्रबल मैनमंत कोप्यो बाढ़ में।' हो जाती है—

हहरि हहरि हिय कहरि कहरि करि,

थहरि थहरि दिन बीते जिय माढ़ के।

लहरि लहरि बीज फहरि फहरि आवे,

घहरि घहरि उठे बादर अषाढ़ के।।[2]

यहाँ कवि की भाषा में पदलालित्य और गत्यात्मक सौन्दर्य सहज रूप से आकर्षित करता है। शब्द—चयन की सुरुचि—सम्पन्नता भावात्मक सौन्दर्य में अभिवृद्धि करती है। पदमैत्री के साथ अनुप्रास की छटा दर्शनीय है।

1— पावस कवित्त रत्नाकर, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, छन्द संख्या 91, पृष्ठ 238

2— उपरिवत्, छन्द संख्या 91, पृष्ठ 238

श्रावण मास में अनुपम सज्जा युक्त तथा नख शिख सौन्दर्य सम्पन्न नायिका हिंडोरे पर झूलती हुयी गाती है। उसकी 'गुमान भरी गावन' भुलाये नहीं भूलती। एक सौन्दर्य चित्र देखिए—

घाँघरे की उमड़ि घुमड़ि चारू चूंदरी की,

पांयन मलूक मषमल वारे जोरे की।

भृकुटी विकट छूटी अलकैं कपोलन पै,

बड़ी—बड़ी आँखिन में छबि लाल डोरे की।।

तरिवन तरल जराऊ जरवीली जोर स्वेदक,

न ललित वलित मुख मोरे की।

भूलत न भामिनि की गावन गुमान भरी,

सावन में श्रीपति मचावन हिंडोरे की।।[1]

उक्त छन्द में कवि ने नायिका का घाँघरा, चूनर, भृकुटी, अलकें, कपोल, आँखें, आँखों के लाल डोरे, स्वेद कन तथा हिंडोरे पर झूला—गीतों का गर्व के साथ गायन सबका समवेत सौन्दर्य—चित्र उकेरा है। सावन में पूर्ण यौवना, गर्वीली नायिका जड़ित आभूषणों से सज्जित, हिंडोरे पर धूम मचाती हुयी गाती है। कवि का वर्णन —कौशल एक सजीव चित्र आँखो के सामने उपस्थित कर देता है।

2-4-2-6 विद्वन्मोदतरंगिणी

विद्वानों के हृदय क्षेत्र को मोद से तरंगित करने वाला यह ग्रंथ हिन्दी साहित्य सम्मेलन से प्रकाशित, डॉ. किशोरीलाल गुप्त द्वारा सम्पादित संस्करण है। ग्रंथ के अन्तर्गत श्रीपति विरचित ग्यारह मुक्तक छन्द हैं। इन छन्दों में विषय वैविध्य झलकता है। कहीं नायिका के अप्रतिम रूप सौन्दर्य को रूपायित करते हुये उसे **'छवि जाल सी'** कहते हैं, तो कहीं **'कंजनाल सी'** तथा **'कपूर की मसाल सी'** भी कह देते हैं। नायिका के रूप

1— पावस कवित्त रत्नाकर, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, छन्द संख्या—93, पृ.238

सौन्दर्य को निम्न छन्द में कितनी सहजता से अंकित किया गया है देखिये—

सहज सुवास वारिजात पारिजातक सी,

रूप रस नीर को महा गंभीर ताल सी।

श्रीपति घुराई तरें गांव की गुराई मेरे,

मोहन के मानस में विहरै मराल सी।

ग्रीष्म नरम नवनीत मषमल सम सिसिर में,

परम् गरम मृदु साल सी।

छिन छबि जाल सी कनक कंज नाल सी,

कपूर के मसाल सी सलोनी वाल मालसी।[1]

उपर्युक्त छन्द में विविध उपमानों द्वारा नायिका के सौन्दर्य को पुष्ट किया गया है। यदि वह ग्रीष्म ऋतु में मखमल के समान नर्म नवनीत है तो शिशिर में मृदुशाल की तरह गर्म भी है। उसका शरीर स्वभावतः सुगन्धि युक्त है तथा वह रूप—रस रूपी जल से परिपूर्ण गम्भीर तालाब के समान है।

यहाँ पर कवि की सौन्दर्य—निरूपण की क्षमता, समता तथा व्यंजक प्रतीकों का सामंजस्य सराहनीय है।

एक छन्द में श्रीपति ने महारनधीर भगवान श्रीराम के पराक्रम के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण जगती तल पर यश की कामना की है—

श्रीपति हौ रघुवीर महारनधीर महीतल में जस लैहो।

रावन को जय पत्र छड़ाय विभीषन के सिर छत्र फिरै हो।।[2]

कवि कल्पना करता है कि अद्‌भुत पराक्रम से श्रीराम पृथ्वी पर तो यशार्जन करेंगे ही साथ ही रावण का विजय पत्र छुड़ाकर विभीषण को लंका का छत्रपति बनायेंगे।

1— बिद्वन्मोद तरंगिणी—श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, छन्द संख्या—42, पृष्ठ 240

2— उपरिवत्, छन्द संख्या—667, पृष्ठ 240

श्रीपति भक्ति भावना से प्रेरित होकर अपने मूढ़मन को चेतना प्रदान करते हुये हरिनाम स्मरण की महत्ता प्रतिपादित करते हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

चारों वेद माँह चारों मुष ते बषानौ विधि,
सब को अधार करतार एक राम है।
दूसरो न कोऊ दीनबंधु के दयाल एरे,
दयानिधि जग में विदित जाको नाम है।
चेतुरे अचेत मन श्रीपति कहत तोसों,
हिए ही कलपतरू राम सुषधाम है।
तजु परनाम हौ कहत परनाम तजु,
तोहिं परनाम एक राम ही सों काम है।[1]

आचार्य श्रीपति ने अपने कुचाली मन को कुचालों से दूर रहकर विपत्ति–विदारक भगवान के नाम स्मरण की प्रेरणा दी है तथा मानव जीवन व्यर्थ न जाने देने का परामर्श भी दिया है–

सुमिरे न श्रीपति विपति सठ हरे कौन,
सम्पत्ति विपति हू न भूषे मुष धाली तैं।
पहिरे अधर्म वर्म लरे धर्म कर्मन सों,
मर्म वेधी बात उर कौन के न साली तैं।
ए मन कुचाली कुच कंचन की बात चाली,
दे दे करताली न रिझायो वनमाली तैं।
झूठी झलमल की झलक ही मे भूल्यो,
जल–मल की पषार बल षाली षाल पाली तैं।[2]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने अपने मन को शान्त्वना प्रदान करते हुये कहा है कि तू संसार की भौतिक चकाचौंध में भूला रहा। अपने सद्गुणों से इष्ट को नहीं रिझा पाया। इस शरीर की खाली खाल का पोषण करता रहा। लक्ष्मी पति भगवान का स्मरण नहीं किया। अरे कुचाली मन, तू अब भी सम्हल जा।

1– बिद्वन्मोद तरंगिणी, श्रीपति मिश्र ग्रंथावली, छन्द संख्या–686, पृष्ठ 240

2– उपरिवत्, छन्द संख्या 1064, पृ. 241

तृतीय अध्याय :

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में साहित्य सर्जना
(1801-1850)

- साहित्यकारों का सामान्य परिचय एवं व्यक्तित्व
- प्रमुख कृतियाँ- प्रकाशित तथा अप्रकाशित
- भाषा और शिल्प
- कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में साहित्य सर्जना (1801–1850 ई.)

जनपद जालौन में साहित्य सर्जना की परम्परा सदियों पुरानी है। इस परम्परा को आधार मानते हुए उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की साहित्य–सर्जना के सम्बन्ध मेंसाहित्यानुशीलन एवं वैचारिक मंथन से ज्ञात होता है कि प्रस्तावित कालखण्ड में जो साहित्य–सृजन हुआ, उसकी प्रवृत्तियों को विवेचित करते हुए इतिहासकारों ने उसे रीतिकाल की संज्ञा से अभिहित किया है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार 'जिस प्रकार भक्तिकाल में ब्रह्मज्ञान विषयक चर्चा जन–सामान्य के लिए गौरव की बात थी, उसी प्रकार इस कालखण्ड में कवि काव्यांग चर्चा में गौरव की अनुभूति किया करते थे।[1] साहित्य संरचना श्रृंगारिक प्रवृत्ति प्रधान थी। विलासी आश्रयदाताओं को प्रसन्न करने और उनकी वासना को गुद–गुदाने के लिए श्रृंगारिकता को वर्ण्य विषय के रूप प्राथमिकता दी गई थी।

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. नगेन्द्र, मयूर पेपर बैक्स, सेक्टर,–5, नोएडा, पृष्ठ 278

डॉ. नलिन विलोचन शर्मा ने जनपद के साहित्येतिहास लेखन में महान लेखकों की अपेक्षा उन छोटे तथा नवोदित किन्तु प्रतिभाशाली कवियों और लेखकों का महत्व दर्शाते हुए लिखा है कि ''साहित्यक इतिहास का विषय भी यदि विस्तार है तो महान लेखकों से अधिक महत्व उन गौणों का है, जिनसे विस्तार निर्मित होता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में इन महान गौणों की उपेक्षा हुयीः और इसका कारण यह है कि शोध ने अपने वास्तविक कर्तव्य का पालन नहीं किया है। वह उन पथ–चिह्नों तक ही सीमित रहा, जो वस्तुतः आलोचना के विषय हैं।'' तात्पर्य यह है कि ग्रामीण अंचल में जन्मे विभिन्न प्रतिभाशाली छोटे कवि मूल्यांकन की सीमा से बाहर रहकर उपेक्षित हो जाते हैं और जनपद की साहित्य सर्जना का कार्य अधूरा रह जाता है। प्रस्तुत शोधकार्य में इस बात को सर्तकता से अनुपालित किया गया है कि कोई भी छोटा रचनाकार सर्वेक्षण में सम्मिलित होने से वंचित न रह जाये।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जनपद जालौन में हुई साहित्य–सर्जना के सम्यक पर्यवेक्षण से विवित हुआ कि वंशगोपाल बन्दीजन अत्यन्त प्रतिभाशाली कवि, इसी जनपद में अवतरित हुए थे। इनका **'भाषा सिद्धान्त''** नामक ग्रन्थ उच्चकोटि का था। तदुपरान्त कालपी में सन् 1842 में मथुराप्रसाद निगम **'लंकेश'** अवतरित हुए। रावण दिग्विजय, रावण वृन्दावन यात्रा, रावण शिवस्वरोदय आदि रचनाओं का उल्लेख मिश्र बन्धु विनोद तथा बुन्देल वैभव में उपलब्ध है। खेद इस बात का है कि वंशगोपाल बन्दीजन तथा मथुराप्रसाद **'लंकेश'** की रचनाएँ अनुपलब्ध हैं अतः उनकी कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन सम्भव नहीं है।

विवेच्य कालखण्ड में उरई में अवतरित पं. कालीदत्त नागर (काली कवि) का नाम मूर्धन्य कवियों में परिगणित किया जाता है। आप प्रौढ़ काव्य कला, उच्चकोटि की प्रतिभा एवं प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व के परिचायक थे। मिश्रबन्धु ने उन्हें कालीप्रसाद उरई तथा **'बुन्देलखण्ड का इतिहास'** में

दीवान प्रतिपाल सिंह ने उन्हें कालीप्रसाद छबिनाथ उरई लिखा है। श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त **'कुमुद'** के अनुसार उनका सही नाम कालीदत्त नागर था। पिता छबिनाथ, पत्नी अन्नपूर्णा तथा पुत्र छन्नूलाल थे। वे गुजराती ब्राह्मण थे।[1]

कालीदत्त नागर के पश्चात् नदीगाँव में जन्में लछमन ढीमर **'लाख'** का नाम विशिष्ट है। **''लाख''** अपनी काव्य प्रतिभा के कारण दतिया दरबार में राजा भवानीसिंह के सुराहीबरदार नियुक्त थे। राज्याश्रय में ही इनकी कविता पुष्पित और पल्लवित हुई। रीतिकालीन काव्य सर्जना के क्रम में इनकी भक्ति और श्रृंगारिक प्रवृत्ति के कारण इनके **'गंगाशतक'** नामक अप्रकाशित ग्रन्थ में बड़ी ही आकर्षक घनाक्षरियाँ एवं कवित्त उपलब्ध हैं, जिनका मूल्यांकन आगे किया जावेगा।

क- साहित्यकारों सामान्य परिचय एवं व्यक्तित्व

पं. कालीदत्त नागर :- जनपद जालौन के मुख्यालय उरई में गुजराती ब्राह्मण पं. छबिनाथ के यहाँ आपका जन्म सन् 1832 ई. में हुआ। इनके पूर्वज गुजरात से आकर उरई में बस गए थे। आपकी शिक्षा घर पर हीपूर्ण हुई। पं. कालीदत्त नागर प्रसिद्ध तांत्रिक, ज्योतिष मर्मज्ञ, पहलवान एवं रीतिकालीन परम्परा के सिद्धहस्त कवि थे। भाल पर त्रिपुण्ड, त्रिपुण्ड पर सिन्दूर, कण्ठ में रुद्राक्ष माला आपके तेजोमय व्यक्तित्व का निर्माण कर जन–मानस को अपनी ओर सहज ही आकर्षित कर लेने में समर्थ थे। इनका तांत्रिक नाम भैरवनाथ था। कहा जाता है कि **''पचनदा''** नामक स्थान पर आपको सिद्धि प्राप्त हुई थी। यहाँ पाँच नदियों के संगम स्थल पर मंजुवन तथा मुकुन्दवन उच्चकोटि के संतों का सिद्ध स्थान है।

काली कवि के विषय में प्रोफेसर कृष्णदत्त बाजपेयी ने इनके **'छबिरत्नम'** ग्रन्थ की भूमिका में लिखा है–

1– सारस्वत (2000–2001) जालौन जनपद का साहित्यिक इतिहास, श्री अयोध्या प्रसाद गुप्त "कुमुद", पृष्ठ 85

मातु कालिका के पाये भूरि–भूरि वरदान,

शंकर की प्रीति पाई साधना के स्वर में।

काव्य–शास्त्र, तंत्र–मंत्र ज्योतिष में भे प्रवीण।

रचना रुचिर रची उरई नगर में।।

देव भाषा, ब्रज और बुन्देली को सँवारयो,

सुधी रसिक विनोद किये कलि के कहर में।

विन्ध्य के विवेकी रस सिद्ध कवि काली भए,

कीर्ति की पताका फहराई देशभर में।[1]

उपर्युक्त छन्द में बाजपेयी जी ने लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार कवि कालीदत्त नागर की भूरि–भूरि प्रशंसा की है। उन्हें काव्य शास्त्र, तंत्र–मंत्र तथा ज्योतिष का प्रकाण्ड पण्डित बताया है। देवभाषा संस्कृत, ब्रज और बुन्देली में पारंगत काली कवि ने रसिक विनोद ग्रन्थ लिखकर इस कलिकाल में रस की अजस्र धारा प्रवाहित की थी तथा अपनी विद्वत्ता और प्रकाण्ड पाण्डित्य से देशभर में प्रसिद्ध अर्जित की थी।

काली कवि को छोटी–बड़ी रियासतों में विशिष्ट सम्मान प्राप्त था। राजे–महाराजे सम्मान तथा श्रद्धापूर्वक उन्हें पूर्ण राजाश्रय देने को तत्पर थे, किन्तु कालीकवि जैसे मस्त, प्रवृत्ति के व्यक्तित्व ने कभी स्वीकार नहीं किया। वे स्वच्छन्द विचरण एवं स्वतंत्र साधना में विश्वास रखते थे। उरई के प्रसिद्ध शायर गोविन्ददयाल श्रीवास्त **'नश्तर'** तथा कालपी के प्रसिद्ध कवि **'रसिकेन्द्र जी'** उनके प्रिय शिष्य थे। वैसे उनकी शिष्य परम्परा बुन्देलखण्ड ही नहीं अपितु देश के सुदूर प्रान्तों तक फैली हुयी थी।

वे मल्ल विद्या में निष्णात होकर भी उसे अपना व्यवसाय नहीं बनाते थे। अच्छे–अच्छे पहलवान उनके चरण स्पर्श कर आशीर्वाद लेने आया करते थे। आप आजीवन तांत्रिक–साधना में व्यस्त रहे और काव्य साधना भी उनकी जीवन सहचरी के रूप में सदैव साथ रही। आपने अपनी

1– भूमिका छवि रत्नम् – प्रो0 कृष्णदत्त बाजपेयी, पृष्ठ 2

रचनाओं में भक्ति एवं श्रृंगार को प्रमुखता देने के साथ–साथ वीररस का उत्कृष्ट वर्णन प्रस्तुत किया है। डॉ. हरिनारायणसिंह उनकी प्रशस्ति में निम्न छन्द प्रस्तुत करते हैं–

कर गयो कमाल ई कराल कल कालहू में,

कुसुम खिलाय गयो कुशल एक माली सौ।

कवियन को राजा महाराजा तंत्र विद्या को,

महको गुलाब जैसे दहको दुनाली सौ।

दुर्गा, गनेश अरु शंभु जैसे अंग जाके,

फहरै पताका बीच अरुण गुलाली सौ।

धन्य ये उरई अरु धन्य ये भारत देश,

धन्य–धन्य धरती जहाँ जन्मों कवि काली सौ।[1]

काली कवि के बहुआयामी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर डॉ. श्यामसुन्दर बादल ने उन्हें बुन्देलखण्ड का कालिदास कहा है– 'साधक अगर कवि हो तो सोने में सुगंध, अगर इनकी साधना में ओझाओं की कठिन वृत्ति स्थान न पाती तो निश्चय ही काली महाराज कवि–कुल–कुमुद कलाधर कालीदास होते पर उन्होंने जितना लिखा, बेजोड़ लिखा। उसके आधार पर हम उन्हें बुन्देली धरा का कालिदास तो कह ही सकते है।[2] श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त **'कुमुद'** के शब्दों में – **''काली कवि का नाम आते ही एक प्रदीप्त एवं तेजोमय व्यक्तित्व आँखों में उभरता है। उन्नत भाल ऐंठधार मूँछें, मल्लविद्या में निष्णात् देहयष्टि, गेहूँआवर्ण तथा चमकते हुए विशाल नेत्र यह कुल मिलाकर उनके व्यक्तित्व का बिम्ब बनता है।**[3] डॉ. दिनेशचन्द्र द्विवेदी को उरई नगर की

1– हनुमत्पताका की भूमिका– समीक्षकों की दृष्टि में – डॉ. हरिनारायण सिंह, आजमगढ़, पृष्ठ 2

2– हनुमत्पताका की भूमिका–समीक्षकों की दृष्टि में– डॉ.श्यामसुन्दर बादल, पृ.1

3– सारस्वत–उरई विशेषांक–1999–2000 काली कवि और उनका काव्य–श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद', पृ.61–62

अत्युच्च साहित्यिक प्रतिभा के दर्शन रीतिकालीन परम्परा के अंतिम आचार्य कालीकवि के रूप में होते हैं।[1]

उपर्युक्त वक्तव्यों के निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है। कि जालौन जनपद की महानतम् विभूति बहुआयामी व्यक्तित्व तथा काव्य प्रतिभा सम्पन्न उच्चकोटि के कवि के रूप में काली कवि सदैव स्मरण किए जाते रहेंगे। एक ओर डॉ. बादल उन्हें बुन्देलखण्ड का कालीदास कहते हैं, श्री 'कुमुद' उनके आकर्षक व्यक्तित्व के प्रति आकर्षित दिखाई देते हैं, तो दूसरी ओर डॉ. द्विवेदी उन्हें जनपद जालौन की अत्युच्च साहित्यिक प्रतिभा स्वीकार करते हैं। कुल मिलाकर काली कवि अपने युग के जनपद जालौन के श्रेष्ठतम कवि के रूप में स्थापित हैं और रहेंगे भी। जनपद के प्रतिभाशाली काली कवि ने जीवन के अन्तिम चरण को पूरा करते हुये अपने महाप्रयाण की यात्रा संवत 1966 (सन् 1909) में की और उनकी आत्मा सदा—सदा के लिए विश्वात्मा में समाहित हो गयी।

लछमन ढीमर 'लाख'

जनपद जालौन की पश्चिमी सीमा निर्धारित करती पहूजनदी के किनारे स्थित नदीगाँव नामक ग्राम **'लाख'** कवि का जन्म स्थान है। इनकी जन्मतिथि अनुमानतः सन् 1835 है। बचपन में ही माता—पिता का अचानक देहान्त हो जाने के कारण आपको बाल्यावस्था में उचित पोषण एवं संरक्षण नहीं मिल सका। पेट की खातिर इधर—उधर भटकने में कहीं किसी सन्त से भेंट होने की बात इनके सम्बन्ध में कही जाती है, जिससे भक्ति भावना का उद्रेक इनके जीवन में हुआ। सम्भव है, ढीमर जाति में जन्म होने से नदी के इस पार से उस पार यात्रियों को निकालने में ही किसी सन्त प्रवर से भेंट हुई हो।

1— सारस्वत, उरई विशेषांक—1999—2000, हिन्दी साहित्य के विकास में उरई नगर योगदान—डॉ.दिनेशचन्द्र द्विवेदी, पृ.62

'लाख' कवि को वाक्‌चातुर्य ईश्वरीय वरदान के रूप में प्राप्त था। उच्चवर्ग के लोग भी इनके संसर्ग में आकर अपने को भाग्यशाली समझते थे, तथा उचित सम्मान देते थे। बाल्यावस्था में माता–पिता के कालकवलित हो जाने से शिक्षार्जन नहीं के बराबर था, किन्तु माँ वाणी की कृपा एवं संतचरण–रज के प्रभाव से इन्हें पौराणिक प्रसंगों का पर्याप्त ज्ञान था। **'लाख'** कवि स्वभाव से विनम्र एवं व्यवहारिक कुशलता में निपुण थे। किसी की बात सुनकर वाक् चातुरी से उत्तर देना इनकी विशिष्ट प्रतिभा का सूचक था। अपनी बात से श्रोता को निरुत्तर कर देने की कला में वे निष्णात थे।

बाल्यावस्था से युवा होने तक जब भी समय मिलता आप भ्रमण के लिये निकल जाते थे, जिससे अनेक तरह के लोंगों से आपकी भेंट होना सम्भव है। परिणामतः आपके ज्ञान में अनवरत वृद्धि होती रही। **'लाख'** कवि सहज और सरल व्यक्तित्व के धनी तथा गम्भीर प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। निरर्थक वार्तालाप के प्रति उन्हें अरुचि थी।

उस समय नदीगाँव दतिया राज्य में सम्मिलित था। दतिया के तत्कालीन नरेश भवानीसिंह ने जब इनके वाक्‌चातुर्य की प्रशंसा सुनी, तो इन्हें अपना सुराही वरदार नियुक्त करके इनके जीवन को उन्होंने एक समुचित व्यवस्था प्रदान की। **'लाख'** कवि स्वतंत्र काव्य सृजन करते थे। अपने राजा के प्रति समस्त उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर्मठता से किया करते थे। इस तरह महाराजा भवानी सिंह के अधिक प्रिय और निकट भी हो गए थे। भवानी सिंह का विशिष्ट स्नेह और कृपा आपको प्राप्त थी।

वर्तमान में इनके खानदान का कोई भी जीवित न होने के कारण इनके माता–पिता के नाम की कोई जानकारी नहीं मिल सकी। इनकी मात्र एक रचना **'गंगा शतक'** जीर्ण–शीर्ण रूप में उपलब्ध हो सकी है, जिसका साहित्यिक अनुशीलन आगे किया जावेगा।

ख-प्रमुख कृतियाँ-(प्रकाशित तथा अप्रकाशित)

पं. काली दत्त नागर-

काली कवि की रचनाओं के वर्ण्य–विषय मुख्यतः भक्ति, श्रंगार एवं वीर हैं। आपने अपनी रचनाओं में वर्ण्य–विषय का समायोजन भली भाँति किया है। आपके तीन ग्रन्थ प्रकाशित हैं– हनुमत्पताका, गंगा गुण मंजरी तथा छबि रत्नम्। ऋतु राजीव, रसिक विनोद, कवि– कल्पद्रुम, जुगलसहस्रनाम, स्फुट दोहावली तथा गणपति रहस्य– इस प्रकार 6 ग्रंथ अप्रकाशित हैं। इनमें हनुमत्पताका प्रबंध काव्य है, शेष मुक्तक काव्य।

कवि ने अपनी प्रमुख प्रबंध रचना 'हनुमत्पताका' में बाल्मीकि रामायण के कथानक को आधार बनाया है। रावण द्वारा सीताहरण के उपरान्त हनुमान उनकी खोज में लंका पहुँचते हैं। वे राजमार्ग में इधर उधर स्थित गगनचुम्बी विशाल भवनों में नायक–नायिकाओं की विविध क्रीडाएँ देखते हैं। यहाँ पर लंका की कामिनियों द्वारा पुरुषों को आकर्षित करने के अनूठे प्रसंगों का समायोजन किया गया है। यह मान–मनुहार वर्णन रीतिकालीन परम्परानुसार प्रतीत होता है। पर भक्त शिरोमणि हनुमान उन आकर्षणों से सर्वथा अछूते एवं निष्प्रभावी रहकर सीता की खोज में उद्यत रहते हुये भक्त विभीषण से भेंट करते हैं। तत्पश्चात् अशोक वाटिका जाकर, माँ जानकी के दर्शन एवं आशीष प्राप्त कर अशोक वाटिका का विध्वंश करते हैं। अक्षयकुमार के बधोपरान्त मेघनाद के ब्रह्मपाश में आवद्ध होकर उसकी मर्यादा अक्षुण्ण रखते हैं। लंका दहन करके पुनः रामादल में उपस्थित होते हैं।

'हनुमत्पताका' प्रबन्ध काव्य है। इसमें कवि ने दोहा, सवैया तथा घनाक्षरी– कुल मिलाकर 135 छन्दों में कथानक को संजोया है। काव्य में घटनाओं का श्रंखलाबद्ध संयोजन और स्वाभाविक क्रम का यथोचित निर्वाह हुआ है। प्रसंग हृदय स्पर्शी हैं, जो विभिन्न रसों की अनुभूति

कराने में सक्षम हैं। कथानक विस्तार और संकोच दोनों दोषों से मुक्त हैं। कथा—क्रम का कुशलता पूर्वक निर्वाह किया गया है।

कवि की द्वितीय प्रकाशित कृति है **'गंगा गुण मंजरी'**। इस रचना में कवि ने अट्ठावन छन्दों में कलि—कलुष नसावनी पावन गंगा के गुणों का गायन किया है। कलियुग के पतित प्राणियों के उद्धार के लिये निर्मल गंगा कभी विद्युत प्रभा की तरह जगमगाती, बलखाती तथा कभी हंस—गामिनी की भाँति भारत के अधिकांश भू—भाग को अभिसिंचित करती प्रवाहित होती है। दोआब की मिट्टी को सोना बनाने वाली गंगा की महिमा गायन **पं. राज जगन्नाथदास 'रत्नाकर'** तथा **पद्माकर** आदि कवियों ने मुक्त कंठ से किया है।

काली कवि की **'गंगा गुण मंजरी'** पढ़कर डॉ. मिथलेश कुमार द्विवेदी प्रभावित हुये बिना नहीं रहे। उनके विचार से —गंगा की महिमा गायन में कवि की प्रतिभा का आभास तो अनायास ही मिल रहा है साथ ही रीतिकालीन प्रचलित धर्म तथा चमत्कार पूर्ण अभिव्यक्ति का सामन्जस्य सुन्दर बन पड़ा है। गंगा की लहरों से उठने वाले संगीत ने कवि के भाव—लोक को संगीतमय बना दिया। ऐसी उत्कृष्ट साधना और उनकी कविता सचमुच भावलोक की रश्मियाँ भर हैं।[1]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि गंगा गुण मंजरी में कवि ने पौराणिक आख्यान का अवलम्ब लेकर उच्चकोटि की कवि कल्पना का सामन्जस्य किया है। कवि की इस विशिष्ट कृति में मिथ, पुराण तथा लोक भावना का सुन्दर संगुम्फन है, काव्य शास्त्रीय परम्परा का सफल निर्वाह है।

काली कवि की तृतीय कृति **'छबि रत्नम्'** है। इसमें 89 दोहों में अपना कथ्य प्रस्तुत करने में कवि ने उत्कृष्ट कल्पना का प्रयोग किया है। रचना में पारम्परिक उपमानों को नूतन रूप में देखने का प्रयास स्तुत्य

1— भूमिका गंगा गुणमंजरी—डॉ. मिथिलेशकुमार द्विवेदी।

है। कवि की नवोन्मेष शालिनी प्रतिभा के बल पर रचना में प्रस्तुत दोहे जैसे छोटे छन्द में रमणीय बिम्बों एवं कल्पनाओं का प्रयोग विशिष्ट आकर्षक बन पड़ा है। डॉ. रामानन्द शर्मा के शब्दों में– महाकवि काली की यह लघु मगर मौलिक कृति अपनी रम्य कल्पना–विधान, सहज अलंकृति, भाषा एवं भाव की एकता एवं मार्मिकता के कारण आद्योपांत सहृदय को बाँधे रखने में पूर्ण सफल है। चित्रात्मकता एवं नूतन कल्पनाओं के कारण सहृदय पाठक काव्य का ही नहीं, वरन् वस्तु–जगत का भी रसास्वादन सा करता है, मानो आदर्श उसके समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया हो।[1] भागीरथ सिंह **'तकदीर'**, **'छबि रत्नम्'** को महाकवि काली की रुचिर – रचना मानते हैं, जिसमें नायिका के अंग–प्रत्यंग का वर्णन सांगरूपक एवं पूर्णोपमाओं से अलंकृत कर दिया गया है।[2] पं. बालकराम चतुर्वेदी का अभिमत है कि– रचनायें इतनी जटिल, गम्भीर व गूढ़ हैं कि उनका सहज अर्थ लगाना दुष्कर है। वस्तुतः रचनाओं का सटीक अर्थ शोध का विषय है। कवि की अन्य रचनाओं का सहारा लिए बिना तथा बुन्देलखण्डी व ब्रजभाषा का गम्भीर अध्ययन किये बिना कवि भाव का स्पर्शकारी अर्थ देना कठिन कार्य हैं।[3]

काली कवि की 'छवि रत्नम्' डॉ. रामानन्द शर्मा पूर्ण सफल एवं आदर्श प्रस्तुत करने वाली कृति घोषित करते हैं तथा भागीरथ सिंह **'तकदीर'** उसे रुचिर रचना नाम से अभिहित करते हैं तो दूसरी तरफ पं. बालकराम चतुर्वेदी उसे जटिल, गंभीर, गूढ़ तथा सहज अर्थ लगाने में दुष्कर बतलाते हैं। उपर्युक्त तीनों अभिमतों के आधार पर कहा जा सकता है कि **'छबि रत्नम्'** काली कवि की काव्यगरिमा के अनुकूल उत्कृष्ट एवं सराहनीय रचना है।

1– भूमिका– छबिरत्नम्– डॉ. रामानन्द शर्मा

2– छबि रत्नम– भागीरथसिंह 'तकदीर'

3– छबि रत्नम–समर्थ कवि कसौटी –पं.बालकराम चतुर्वेदी–अध्यक्ष महाकवि काली कलाशोध केन्द्र, उरई

आपकी अप्रकाशित रचनाओं में रसिक विनोद सात अध्यायों में विभक्त श्रेष्ठ रचना है। अध्यायों को कवि ने **'आनन्द'** नाम दिया है। प्रथम तथा द्वितीय अध्यायों में आलम्बन विभाव के अन्तर्गत नायक एवं नायिकाओं के लक्षणों का विस्तृत वर्णन हैं। तृतीय और चतुर्थ अध्यायों में उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत सभी ऋतुओं का तथा सखी के मण्डन कार्यों, दूतियों एवं दर्शन का मार्मिक वर्णन है। पंचम अध्याय में वर्णित अनुभावों में स्तम्भ, स्वेद, रोमान्च, स्वरभंग, कम्प, बेवशी, अश्रु तथा प्रलय आदि लक्षणों का सार्थक एवं सटीक नियोजन है। छठवें अध्याय में संयोग वर्णन की दशाओं एवं स्थितियों का चित्रण है तथा सातवें अध्याय में श्रृंगार की अवस्थाओं का उद्घाटन किया गया है।

काली कवि की अनुपम कृति 'कविकल्पद्रुम' दस अध्यायों में विभक्त अप्रकाशित रचना है। काव्य की गरिमा, वर्णन कौशल तथा सशक्त अभिव्यक्ति की दृष्टि से यह रचना अनूठी है। रचना में मंगल लक्षण, अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना के भेदोपभेद तथा उदाहरण उपलब्ध हैं। व्यंग्य, रस, ध्वनि तथा अलंकारों का वर्णन काव्यशास्त्रीय परम्परा के आधार पर किया गया है। चित्र वर्णन तथा चित्रकाव्य, प्रहेलिका, अर्थदोष, रसदोष आदि परिभाषा तथा भेद सहित वर्णित हैं।

काली कवि की अन्य अप्रकाशित रचनाएँ गणपति रहस्य जुगल सहस्रनाम तथा स्फुट दोहावली अनुपलब्ध हैं।

लछमन ढीमर 'लाख'

लाख कवि की एक सौ छन्दों में रचित **'गंगा शतक'** भक्ति भाव सम्पन्न उत्कृष्ट रचना ही उपलब्ध हो सकी है। यह अप्रकाशित रचना कवि की महान कवित्व शक्ति का परिचय प्रस्तुत करती है। कवि ने इस रचना के माध्यम से भक्ति के प्रति विरत एवं उदासीन व्यक्तियों को सचेत तो किया ही है, विभिन्न उद्बोधन भी दिये हैं। जनसामान्य की नैतिक एवं

सामाजिक धरोहर को सुरक्षित रखने की प्रेरणा ही नहीं दी, वरन् सांस्कृतिक गौरव को अक्षुण्ण बनाये रखने की रूपरेखा भी प्रस्तुत की है। गंगा के प्रति भावनात्मक भक्ति का जो उत्स उनकी सरस वाणी से निःसृत हुआ वह लोगों के पाप–पंकिल मन के प्रक्षालनार्थ अनुपम वरदान सिद्ध हुआ है। **'लाख'** ने इस रचना के माध्यम से भक्ति–भाव की सरस स्रोतस्विनी प्रवाहित कर लोगों के जीवनोद्धार का विधान किया है तथा सांसारिक व्याधियों से मुक्ति दिलाकर कल्याण का मार्ग प्रशस्त कियाहै।

'लाख' कवि की अन्य कोई रचना उपलब्ध नहीं है। किन्तु **'गंगा शतक'** जैसी श्रेष्ठ रचना के पूर्व या पश्चात् कवि ने काव्य–सृजन न किया हो, असम्भव है। प्रतिभावान कवि अपनी प्रतिभा को कभी गुप्त नहीं रख सकता।

ग- भाषा और शिल्प

समाज और साहित्य एक सिक्के के दो पहलू हैं। इन्हीं दो पहलुओं के अन्योन्याश्रित सम्बन्धों को भाषा के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। भाषा जिस तरह वक्ता के भावों को श्रोता तक वहन करती है, उसी तरह कवि या कलाकार भी अपने कृतित्व में भाषा की प्राणवायु स्पंदित कर उसे सम्प्रेषणीय बनाता है। सम्प्रेषणीयता भाषा की अनिवार्यता है। अपने विचार दूसरों तक पहुँचाने और दूसरों के विचार ग्रहण करने के उद्देश्य को भाषा ही पूरा करती है। इस तरह भाषा मनुष्य के लिये ही नहीं किन्तु सम्पूर्ण समाज के लिये महत्वपूर्ण है।

समाज के विकास के साथ भाषा भी विकसित हुयी तथा अभिव्यक्ति के तरीके भी बदले। शब्द की शक्तियों का भरपूर प्रयोग साहित्यकारों ने किया। अलंकारों, समासों, बिम्बों तथा प्रतीकों के माध्यम से भाषायी शिल्प में विभिन्न परिवर्तन हुये। चमत्कारिता का भी समावेश हुआ। साहित्यकारों ने भाषा और शिल्प के माध्यम से साहित्य का चरम विकास किया। गद्य एवं

पद्य दोंनों क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य करते हुये तथा हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं में प्रचुर साहित्य की रचना हुयी।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जनपद जालौनमें अवतरित काली दत्त नागर (काली कवि) तथा लक्ष्मन ढीमर की रचनाओं की भाषा और शिल्प सौन्दर्य निम्न प्रकार है–

काली कवि

आपकी भाषा भावानुगामिनी है। विषयानुकूल है। यदि कहीं ओज गुण की प्रधानता है तो अन्यत्र माधुर्य और प्रसादगुण भी मौजूद हैं। काली कवि के काव्य में अलंकृत, प्रवाहपूर्ण, ओजमयी, प्रौढ़भाषा, अनूठा शब्दविन्यास, लालित्यपूर्ण प्रवाह, भावानुकूल नाद व्यंजना तथा वाग्वैदग्ध की अनुपम छटा है। ओज, भक्ति तथा श्रृंगार की त्रिवेणी में स्नात उनके काव्य में गंगा का अमरत्व है। वे सचमुच शब्दों के जादूगर, अद्भुत भावशिल्पी, काव्यशास्त्र के पारंगत आचार्य और रस सिद्ध कवि थे।[1]

काली कवि के घनाक्षरी छन्द के शिल्प से प्रभावित होकर द्वारिका प्रसाद गुप्त **'रसिकेन्द्र'** मुक्त कंठ से सराहना करते हुये कहते हैं कि **'काली कवि जैसी घनाक्षरी लिखने में हिन्दी का अन्य कवि इतना सफल नहीं हुआ। रस–परिपाक, अलंकारों का निरूपण और चमत्कार, उपमाओं का चयन, भाषा की लोच, सरसता और प्रवाह जैसी उनकी रचनाओं में पायी जातीं हैं, वह अन्यत्र हिन्दी के कवियों में बहुत कम पाई जाती है।'**[2] ऐसा उल्लेख है कि काली कवि कोयले से पत्थर के चबूतरे पर कवित्त लिखा करते थे। उनके रसिक भक्तों द्वारा रसास्वादन तथा अनुलेखन भी होता था। यह सब काली कवि की विलक्षण प्रतिभा का परिचायक है।

1– सारस्वत–1999–2000, काली कवि और उनका काव्य–अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' पृ.62

2– काली कवि समीक्षकों की दृष्टि में– हनुमत्पताका की भूमिका–द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र' पृ.3

काली कवि ने पारम्परिक विषयों को अपनी लेखनी का विषय बनाया तथा भक्ति, श्रृंगार एवं वीर काव्य की प्रवृत्तियों का समायोजन कर अद्‌भुत साम्य उपस्थित कियाहै। इनके काव्य का अनुशीलन करते हुये पाठक वीर, भक्ति एवं श्रृंगार के विशिष्ट भावों से अभिभूत होता हुआ युगीन परिस्थितियों के दर्शन कर सकता है। अपनी रचनाओं के कथानक को कवि ने दोहा, सवैया तथा घनाक्षरी छन्द के माध्यम से प्रस्तुत किया है। छन्दों की आवृत्ति कथानक को गतिशीलता प्रदान करती है। भावानुकूल भाषा–प्रयोग एवं प्रस्तुतीकरण अनूठा है। बुन्देली, ब्रज, संस्कृत तथा खड़ी बोली का आकर्षक प्रयोग आपकी कृतियों में मिलता है। अरबी के शब्द भी प्रसंगानुसार आ गये हैं, किन्तु इनका प्रयोग यथारूप में न होकर देशजीकरण के साथ हुआ है। जैसे– सिरताज, सौं, दराज, वे सुमार, चुनिन्दा तथा परदा आदि।

डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र **'निशंक'** के मतानुसार **काली कवि की उद्‌भावनाएँ मार्मिक, मौलिक एवं चमत्कारपूर्ण हैं। भाषा में गंगा सा प्रवाह और शैली प्रसंगानुकूल है।**[1] डॉ. बलभद्र तिवारी काली कवि की भाषा ठेठ बुन्देली मानते हैं, किन्तु उनका अभिमत है कि **ब्रज और संस्कृत के तत्सम शब्दों की अपेक्षा कवि ने तद्‌भव शब्दों का सुन्दर प्रयोग किया है।**[2] अयोध्या प्रसाद गुप्त **'कुमुद'** काली कवि का **ब्रजभाषा पर अचूक अधिकार मानते हैं। मधुर शब्दों का चयन उनकी विशेषता है। कोमलकान्त पदावलियों को ढूंढ़– ढूंढ़कर उन्होंने काव्यमाला में पिरोकर अपनी विशिष्ट शैली का प्रवर्तन किया है।**[3]

काली कवि की भाषा–शिल्प विषयक प्रस्तुत टिप्पणियों से यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि उनका भाषा पर अनूठा अधिकार था तथा अपनी शिल्पकला के बलपर वे भाषा के रूपों में परिवर्तन करके चमत्कार उत्पन्न करने की सामर्थ्य भी रखते थे। कहीं ब्रजभाषा का लालित्य झलकता

1– भूमिका 'हनुमत्पताका' डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' पृ.4

2– उपरिवत्– डॉ. बलभद्र तिवारी, पृ.10

3– सारस्वत, 1999–2000 श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त'कुमुद' पृ.64

है तो कहीं बुन्देली की सरसता तथा सहजता अपना प्रभाव छोड़ती है। कहीं कोमल एवं मधुर शब्दों के प्रयोग शब्द–चयन के नैपुण्य को दर्शाते हैं, तो कहीं तद्भव शब्दों के मार्मिक प्रयोग उनके गहन अध्ययन एवं अनुभव को प्रकट करते हैं।

काली कवि के काव्य में अलंकारों के अनूठे प्रयोग उनके शिल्प सौन्दर्य को द्विगुणित कर देते हैं। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, श्लेष तथा अनुप्रास के विविध उदाहरण उनके काव्य में बिखरे पड़े हैं। अनुप्रास की आकर्षक छटा निम्न पंक्तियों में देखने योग्य हैं–

लरम लफीले लफ लोलहे लबींदन कीं,

लतन लदाऊ लौद लदल तरी फिरै।[1]

इसी तरह श्लेष अलंकार का प्रयोग भी दृष्टव्य है–

बाली पर तारा गया पर तारा के गेह,

परदा राखत है कहूँ परदारा को नेह।[2]

काली कवि की प्रौढ़कृति '**हनुमत्पताका**' को पढ़कर ऐसा ज्ञात होता है कि वर्ण्य–विषय के श्रेष्ठ प्रतिपादन के साथ कवि की दृष्टि उक्ति वैचित्र्य एवं अलंकार निरूपण पर अधिक रही है। कवि के अनुपम अप्रस्तुत विधान का उदाहरण निम्न पंक्तियों में द्रष्टव्य है–

चाँदनी को चन्दन चढ़ाय सब अंगन पै,

तारन से हारन सम्हार सुकुमारी को।

दाव कर अंबर अशंक परयंक पर,

अंक भर भेंटत मयंक निशि नारी को।[3]

काली कवि की लघु मगर मौलिक कृति '**छबि रत्नम्**' को डॉ. रामानन्द शर्मा नूतन कल्पनाओं की उजागरी कृति बतलाते हुये कहते हैं

4– हनुमत्पताका–पृ.12

5– उपरिवत्, पृ.23

1– उपरिवत्, पृ.5

कि–यह कृति अपनी रम्य कल्पना–विधान, सहज अलंकृति, भाषा एवं भाव की एकता एवं मार्मिकता के कारण आद्योपांत सहृदय को बाँधे रखने में पूर्ण सफल है। चित्रात्मकता एवं नूतन कल्पनाओं के कारण सहृदय पाठक काव्य का ही नहीं वरन् वस्तु जगत का भी रसास्वादन सा करता है, मानो आदर्श उसके समक्ष प्रस्तुत कर दिया है।[1] कवि ने 'छबिरत्नम्' में दोहे जैसे छोटे छन्द का प्रयोग किया है तथा उत्प्रेक्षा, विभावना, उपमा, यमक, प्रतीप, अपन्हुति, व्यतिरेक तथा काव्यलिंग आदि अलंकारों के माध्यम से नायिका के अंग–प्रत्यंग का अलंकृत वर्णन प्रस्तुत किया है।

'छबिरत्नम्' में कवि की दृष्टि नायिका के आंगिक सौन्दर्य निरूपण से अधिक अलंकार–चमत्कार की ओर रही है। नायिका का रूप वर्णन तो एक माध्यम है। यमक अलंकार का उदाहरण प्रस्तुत है जिसमें विरह–व्यथिता सखी के पास नायिका को जाने के लिये अन्य सखी द्वारा मना किया जाता है क्योंकि नायिका का भाल अर्द्धचन्द्र के समान है, उसे देखकर विरहिणी और भी दुःखी हो जायेगी।

हौं ही सुधि लावत इतै, तू न चले बलि बाल।
ह्वै है विरहिन अधससी, देख अधससी भाल।।[2]

इसी तरह अपन्हुति अलंकार का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

मन रंजन अंजन दियो, दृगन दिठोना आज।
खंजन कंज कुरंग की, दीठि चलावन काज।।[3]

यहाँ स्पष्ट है कि नायिका ने खंजन, कमल तथा मृगों की नजर बचाने के लिए अंजन नहीं लगाया है, वरन् आँखों में दिठौना लगाया है।

'छबिरत्नम्' में अलंकारों के विविध उदाहरणों को देखकर यदि इस कृति को अलंकार मंजूषा कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। ऐसा

1– छबि रत्नम् की भूमिका–डॉ. रामानन्द शर्मा, पृष्ठ 2

2– छबि रत्नम्– पृष्ठ 2

3– उपरिवत्, पृष्ठ 3

प्रतीत होता है कि कवि ने अलंकार निरूपण के उद्देश्य से ही इस कृति को काव्य का स्वरूप प्रदान किया है। पारम्परिक उपमानों के संदर्भों को कवि अपनी नवोन्मेष–शालिनी प्रतिभा से नूतनरूप में देखता है।

निष्कलंक जग होन हित, तो मुख भयो मयंक।

कस्तूरी मिस देत क्यों, ऐ री ताहि कलंक।।[1]

कलभ कुम्भ तिय कुच भये, अंकुश के भय भाग।

भाग लिखी न मिटी तऊ, सहन परे नख दाग।।[2]

यहाँ कवि ने मुख के लिए चन्द्रमा, कस्तूरी तिलक के लिए कलंक और स्तनों के लिये कुम्भ स्थल प्रख्यात उपमानों का अभूतपूर्व प्रयोग किया है।

भाषा–शिल्प की दृष्टि से काली कवि की **'गंगा गुण मंजरी'** श्रेष्ठ रचना है। अलंकार सौन्दर्य एवं उक्ति वैचित्र्य इस कृति की प्रमुख विशेषताएँ हैं। अनुप्रास का सौन्दर्य दर्शाते हुये कवि ने निम्न कवित्त में गंगा के यश का मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया है–

मौतिन की माल सौं मराल सो मुनी मन सौ,

मुकुर मनी सौ मालती के मंजु मुद सौ।

काली कवि शरद् सुधा सौ शारदा सौ शुद्ध,

शिव सौ शिवा सौ सूत संदल समुद सौ।।[3]

रीतिकालीन काव्य परम्परा से प्रभावित काली कवि की रचनाओं में भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष पर विशेष ध्यान दिया गया है। रचनाओं से पाठकों को चमत्कृत करना कवि का उद्देश्य रहा है। पद–मैत्री के एक उदाहरण से स्पष्ट होता है, जैसे कवि ने शब्दों को ढूंढ़– ढूंढ़कर संयोजित किया हो–

1– छबिरत्नम्–पृ.6

2– उपरिवत्, पृ.8

3– गंगा गुण मंजरी, पृ.1

बोलत न बोल है न डोलत न डोल है,

न खोलत न खोल है दिशान जल–जल है।

X X X

सेद तल तल है तन होत हल हल है,

न चैन पल पल है चित अखल बखल है।[1]

उक्त उदाहरण में बोलत, डोलत, खोलत, बोल, डोल तथा खोल और तलतल, हलहल, जल जल, पल पल तथा अखल बखल पद–मैत्री के आकर्षक प्रयोग बन पड़े हैं। इसी प्रकार सम्पूर्ण रचना में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के विविध प्रयोग दृष्टव्य हैं।

'गंगा गुण मंजरी' की भाषा बुन्देली है। तद्‌भव शब्दों की प्रचुरता होते हुये यत्र–तत्र तत्सम शब्दों के अनूठे प्रयोग भी उपलब्ध हैं। शैली प्रांजल है, शब्द विन्यास सुगठित होकर अर्थ–गाम्भीर्य को समावेशित कियेहुये हैं। काली कवि की अन्य रचनाओं ऋतुराजीव, काव्यकल्पद्रुम तथा रसिक विनोद की भाषा भी परिष्कृत एवं तत्सम शब्दावली युक्त है। वाग्वैदग्ध एवं लालित्य पूर्ण प्रवाह इनकी भाषा के विशिष्ट आकर्षण हैं। कुल मिलाकर भाषा शिल्प की दृष्टि से काली कवि का काव्य अनूठा एवं आकर्षक है, प्रभावशाली है तथा काव्यानुशीलन और विवेचन में खरा उतरता है।

लक्ष्मन ढीमर 'लाख'

'लाख' कवि की एकमात्र अप्रकाशित प्रौढ़तम कृति **'गंगाशतक'** उपलब्ध है। **'गंगाशतक'** की भाषा ठेठ बुन्देली भाषा के शब्दों में शिल्प की दृष्टि से यह रचना उत्कृष्ट है, इसमें बुन्देली भाषा के शब्दों में समाहित भावों को व्यापक रूप में दर्शाया गया है। अनुभूति को ध्वनि और बिम्बों के माध्यम से प्रस्तुत करने की कलात्मकता है तथा संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करने के लिये उत्तम शब्दों का चयन किया गया है। कवि की भाषा भावों

1– गंगा गुण मंजरी, पृष्ठ 18

के साथ नर्तन करती है। कथनों में जो कथ्य झलकते हैं उनमें नवीन बिम्बध र्मी प्रतिच्छवियाँ अनायास उपस्थित हो जाती हैं। एक उदाहरण देखिये–

जाके तट पौंचत हीं झटपट पाप जरै,
पावक जराइ देत जैंसे गंज चारा है।
भनै कवि लाख भारे तारे जे अधम अैन,
भूतल पै रैनु जितीं नभ बिचं तारा है।[1]

यहाँ कवि ने गंगा के तट पर पहुँचते ही घास के ढेर की भाँति पापों के जलजाने का चित्र उपस्थित किया है तथा गंगा के पुण्य दर्शन एवं मज्जन से अगणित अधम पापियों की बहुलता को पृथ्वी पर रज–कणों तथा आकाश में तारों के माध्यम से व्यक्त किया है। एक अन्य चित्र देखिये–

तारे बड़े पापिन कौ हारे नहीं लाख कवि,
गंग जमराजन सों गाड़ी रार माड़ी है।
हातन पै हात धरे बैठे चित्रगुप्त रहैं,
नरक निमित्त करै कल गंग चाड़ी है।।[2]

यहाँ पापियों के उद्धार के लिए गंगा का यमराज से संघर्ष तथा चित्रगुप्त का हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहने का बिम्ब प्रस्तुत है।

'लाख' कवि की यह रचना मुक्तक छन्दों में आबद्ध है। कवि के मुक्तक छन्दों में शिल्प–सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिए जिन शब्दों के प्रयोग हुये हैं, उनमें कोमलता है, मृदुता है तथा बुन्देली की सहजता और सरसता भी है। मुक्तक के लिये आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मन्तव्य है कि **इसमें तो रस के ऐसे छींटे पड़ते हैं जिनसे हृदय कलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है। यदि प्रबन्ध–काव्य एक विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ**

1– गंगा शतक–लक्ष्मन ढीमर 'लाख', पृष्ठ 6

2– उपरिवत्, पृष्ठ 13

गुलदस्ता है।[1] **'लाख'** कवि के **'गंगा शतक'** में तद्‌भव शब्दों के प्रचुर प्रयोग उपलब्ध हैं। जैसे– किवार, सुछ्छ, पिछौरी, जग्य, रिन, गराज, पिराग, पछ्छी, भौंर, मंडिल, पहार, परभाव, पातिक, जंत्र, दुक्ख, सुक्ख, कपल, अत्र, करोर तथा औतार आदि।

इसी तरह कवि ने अपनी अर्थाभिव्यक्ति को सहज वोधगम्य बनाने के लिये देशज शब्दों के अविरल प्रय़ोग किये हैं। जैसे– सपेलुआ, भगेलुआ, हेलुआ, झेलुआ, रिगौहों, नसेट, कुगत, कैयक, नामना, करौंटा, गंजं, धौरा, बौरा तथा छौंटा आदि। आवश्यकतानुसार शब्दों के रूप–परिवर्तन भी किए हैं जैसे– विचार का विचारा, चित्रगुप्त का चित्रहू गुपित्र, दवात का दोत, तथा युक्ति का जुक्त आदि।

प्रस्तुत रचना में अलंकारिक सौन्दर्य अत्यन्त आकर्षक एवं सह्रदय को गुदगुदाने वाला है। यों तो उपमा, रूपक, यमक, उत्प्रेक्षा, अन्योक्ति तथा अतिशयोक्ति सभी अलंकारों के रुचिर प्रयोग उपलब्ध हैं किन्तु अनुप्रास का सौन्दर्य देखते ही बनता है। कुछ उदाहरण देखिये–

कुटिल, कुराही, कूर, कलही, कलंकी भूर,
करकै कुकाम काम, कुगतन भरे हैं।[2]

X X X

कठिन कठोर घोर रिंन रिंज जोरदार,
जोर जोर धरे दीह उर मै समार मै।
भर भर शब्द होत चटपट बारू लगै,
भूँजत भुंजैना भरभूंजा जिम भार पै।।[3]

X X X

अधम अजान अध औगुन की षाँन कोऊ,
जानै बिन जानै जब गंगा जू के तीर जात।[4]

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.249

2– गंगा शतक, पृ.30

3– उपरिवत्, पृष्ठ 28

4– उपरिवत्, पृष्ठ18

'लाख' कवि की इस रचना में जीवन और काव्य के तत्व परस्पर संगुम्फित हैं। छन्दों में प्रतीकात्मकता का आग्रह भी यत्र–तत्र उपलब्ध होता है तथा वक्रोक्ति की अभिव्यंजना का आधार भी। इससे कवि को अर्थ सम्प्रेषण करने में सफलता मिली है।–

चार षट अष्टादस चौबिस हजार औतार कहौ,
तब ही तैं चित्त नित्त चाहत सुनन कौ।
वदन हजार दो हजार जींव हू सौं सेस,
पावत न पार कहिं गंगा के गुनन कौ।[1]

उक्त छन्द में चार, षट तथा अष्टादस वेद, शास्त्र तथा पुराणों के प्रतीक है। एक अन्य छन्द में कवि ने **'पाप रुज पन्नग गंगधार भरनी'** कहकर प्रतीकात्मकता का आश्रय लिया है। कवि के छन्दों में अनुभूति की तीव्रता को अभिव्यक्ति की तन्मयता प्राप्त है। अपने मन्तव्य को वक्रोक्ति के माध्यम से पद्य बद्ध करने में कवि के काव्य कौशल को देखें–

हारौ उर चित्रगुप्त द्वार हो पुकारौ भारौ,
ऐ हो जमराज तेरी साहिबी में खाद है।
लग लग अंग गंग तरल तरंगन नैं,
भंग कर दई सबै तेरी मरजाद है।।[2]

'लाख' कवि के छन्दों में पद मैत्री का अनूठा सौन्दर्य उनके भाषा शिल्प का अद्भुत उदाहरण है–

पाप रुज भंगा करै गंगा के तरंगा तेज,
अंगा लग नंगा होत दंगा लाख छाड़ दे।[3]

X X X

सुमत निकेती मिटै दुरमत ऐती केती,
चार फल देती मात गंग जल रेती है।[4]

1– गंगा शतक, पृष्ठ 30

2– उपरिवत्, पृष्ठ 11

3– उपरिवत्, पृष्ठ 2

4– उपरिवत्, पृष्ठ 10

X X X

दौर कौन और ठौर संभु सिर मौर,

सुन गंगा कर गौर मेरी मेट दै नसैट कौ।[1]

उक्त उदाहरणों के अतिरिक्त पद—मैत्री के अनगिनत प्रयोग 'लाख' के छन्दों में भरे पड़े हैं। उनका प्रत्येक छन्द अनुप्रास और पदमैत्री का अनुपम उदाहरण है। इस प्रकार कवि **'लाख'** की भाषा मार्मिक शब्दों तथा शब्दों के अनूठे प्रयोगों से सुसज्जित है और अर्थवान सम्प्रेषणीय सृजन का उत्कृष्ट नमूना है। शिल्प की दृष्टि से **'लाख'** का काव्य लयात्मकता से युक्त, सम्प्रेषणीयता के गुण से समृद्ध तथा जनसामान्य के मन में कथ्य और कथन की पैठ कराने की क्षमता से परिपूर्ण है।

कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन

आलोच्य युग में जनपद जालौन के मनस्वी एवं मूर्धन्य रचनाकारों में काली कवि एवं लछमन ढीमर 'लाख' का नाम ही विशेष रूप से उल्लेखनीय है। साहित्य क्षेत्र की इन दो स्वनामधन्य प्रतिभाओं ने अपनी कृतियों के माध्यम से भक्ति एवं रीतिविषयक परम्परा का निर्वहन करते हुये साहित्य साधना को गति प्रदान की तथा युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियों जैसे— वीर, ज्ञान भक्ति तथा प्रेम आदि को लेखनी का विषय बनाया। सर्व प्रथम काली कवि की कृतियों का साहित्य की दृष्टि से मूल्यांकन प्रस्तुत है।

काली कवि की कृतियाँ

अ- गंगा गुण मंजरी

गंगा गुण मंजरी के 58 कवित्तों में गंगा के पावन गुणों का मुक्तकंठ से गायन है। इससे काली कवि की गंगा के प्रति भक्ति भावना उजागरहुयी है। पं. राजजगन्नाथ की गंगा लहरी, रत्नाकर का गंगावतरण,

---

1— गंगा शतक, पृष्ठ 32

पद्माकर की गंगा लहरी तथा महामना गोस्वामी तुलसीदास के गंगा वर्णन आदि कवियों द्वारा पावन नदियों की कीर्ति गान परम्परा में काली कवि की **'गंगा गुण मंजरी'** एक उत्कृष्ट रचना है। भाव सबलता एवं वर्णन कौशल दोंनो दृष्टियों से प्रभावोत्पादक **'गंगा गुण मंजरी'** काव्यानुशीलन एवं समीक्षात्मक विवेचन के लिये महत्वपूर्ण है। डॉ. मिथिलेशकुमार द्विवेदी के अनुसार– **कवि की यह विशिष्ट कृति मिथ, पुराण तथा लोकभाव की त्रिवेणी है। मुक्ति प्रदायिनी गंगा कलियुग के जीवों का उद्धार करने के लिये किस तरह तत्पर है–कभी वह विधुत प्रभा की भाँति चमकती, इठलाती, बलखाती हहराती तो कभी हँस गामिनी बनी भारत के विशाल भू–भाग को हरा–भरा करती प्रवहमान है।**[1]

उक्त कथन से यह भाव प्रकट है कि रचना में यदि पौराणिक संदर्भो को आधार माना गया है तो लोक भावना को भी प्रश्रय मिला है। यदि गंगा कलि–कलुष–नसावनी तथा मुक्तिप्रदायिनी है तो भूमि को अभिसिंचन से उर्वरा बनाकर जीवन–संचेतना का मूलाधार भी है। पौराणिक संदर्भ का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

बैनतेय विंहग बिहारी चक्रधारी सबै,
यतन निहारी सौंरि सरबस हरण कौ।
कमला बिचारी कौन जानै कंत को तौ,
आज ह्रदय न हो तौ चिह्न भृगु के चरण कौ।।[2]

उक्त छन्द में विष्णु के वक्ष में भुगु–चरण अंकित होने का आख्यान पौराणिक है। कवि ने दर्शाया है कि यदि विष्णु के वक्ष में भुगु–ऋषि के चरण चिह्न अंकित न होते तो बेचारी लक्ष्मी, पति को पहिचान ही न पाती। इसी तरह राजा भगीरथ ने अपने पूर्वजों के उद्धार के लिए इस धरा धाम पर जाह्न्वी का आह्वान किया था– यह पौराणिक प्रसंग निम्न पंक्तियों में उद्घृत है–

1– भूमिका–गंगा गुण मंजरी– डॉ. मिथिलेश कुमार द्विवेदी, पृष्ठ 5

2– गंगा गुण मंजरी– पृष्ठ 8

तेरे तीर जोगी कन्दमूल फल भोगी होत,

बिबुध संजोगी सौ सुधादि रस चाखैरी।

शंभु की विरंचि की भगीरथ की कीरति की,

खुली डरी जाहिर जहांन सब साखैरी।।[1]

यहाँ स्पष्ट है कि पृथ्वी पर गंगा की प्रवाहित अजस्र धारा के रूप में शंकर की, ब्रह्मा की तथा भगीरथ क़ी यशोगाथा का ही प्रसार है। सम्पूर्ण संसार इसका साक्षी है।

'गंगा गुण मंजरी' में आद्योपान्त कवि की भक्ति–भावना समावेशित है। कवि ह्रदय पूर्णतः अनुरक्त एवं आश्वस्त है कि काम, क्रोध, लोभ तथा मोह से आक्रान्त जन को, जिन्हें नर्क भी अलभ्य है, गंगा ही भवसागर के पार उतार सकती है। जिनमें समस्त दुर्गुण विद्यमान हैं, जो श्रुतियों का अनादर करते हैं तथा जो सद्गुणों से परे हैं, उनका गंगा ही उद्धार कर सकती है।

काली कवि अैसे अपकीरति करैयन की,

ऊँच नीच ताई हूँ न मन में विचारतीं।

साज है न और धरैं पापन के मौर जिनै,

नर्क हूँ न ठौर तिन्हैं गंगा तुम तारतीं।[2]

भक्ति का अनिवार्य अंग आत्मनिवेदन है। भक्त आराध्य के सान्निध्य की याचना करता है। भक्ति का शुभारम्भ याचना या निवेदन से होता है तथा समर्पण तक इसकी पराकाष्ठा है। जिस तरह रसखान ने 'जो खग हों तो बसेरो करौं बसि कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन' तथा 'पाहन हों तो वही गिरि को जो धर्यो कर छत्र पुरन्दर कारन' कहकर आत्म निवेदन एवं हार्दिक याचना की है, ठीक उसी तरह काली कवि भी गंगा मैया से याचना करते हैं–

1– गंगा गुण मंजरी– पृष्ठ 26

2– उपिरवत्– पृष्ठ 24

कांजे कच्छ कुंजन की गुलम लता को तरू,

सुखित लिबैया जल परसत समीर कौ।

काली कवि क्रशित शरीर मुनि कीजे अति,

निकट बसैया तृन परण कुटीर कौ।

कीजै चक्रवाक कै बलाक बर बारिज कै,

सरद सिवार गुल गदक गंभीर कौ।

अधिक अधीर नीर नित कौ पिवैया कै,

कीजे मोहि मैया निज पाहन प्रतीर कौ।।[1]

काली कवि गंगा के पावन जल के पुण्य प्रभाव को व्यक्त करते हुये कहते हैं कि जल में प्रवेश करते ही रोग, दोष, शोक, ताप, शाप तथा समस्त कुकर्म निर्जीव से होकर प्रभावहीन हो जाते हैं। हृदय निर्मल निष्कलुष तथा निष्पाप हो जाता है। उदाहरण देखें–

झांकत सी झूठ मन माखत सी मूढ़ताई,

कांखत कुकर्म चरम चुगली चबात सी।

रोवत से रोग दोष दसन दिखौवत से,

सोवत से शोक पाप पंगत पिरात सी।

काली कवि गंग पय पैठत हीं आज भाज,

बैठी दूर बध की बरात पछितात सी।

सापत सी साप ताप तापत सी आप रही,

कांपत सी आपत अघात अकुलात सी।।[2]

उक्त छन्द में गंगाजल का असीम प्रभाव अभिव्यक्त हुआ है। कवि के भावों में व्यापक अनुभव का यथार्थ चित्रण है। आत्माभिव्यंजना मधुर भावापन्न छन्दों में स्वाभाविक बन पड़ी है। एक अन्य छन्द में गंगाजल पीने का प्रभाव कवि ने यह कहकर –**'गंग नीर तेरे जिन कीन्हें जलपान है तो,**

1– गंगा गुण मंजरी– पृष्ठ 29

2– उपरिवत्, पृष्ठ 26

पापिन के वृन्द इन्द्र आसन रचे फिरैं' घोषित किया है। कथन का तात्पर्य है कि जिन भक्तों ने गंगाजल का पान किया है वे पापी होते हुए भी इंद्रासन के अधिकारी हैं।

'गंगा गुण मंजरी' में कवि के जीवन के परिचित संदर्भों को रागात्मक तरलता से संजोकर प्रस्तुत किया गया है। गंगा की पावनता निर्मलता, निष्कलुषता तथा पापियों को उद्धार करने की तत्परता स्थान–स्थान पर उदारता के साथ अभिव्यंजित है। कवि कहीं गंगाजल तो कहीं गंगा की लहरें, कहीं गंगा की रेत तो कहीं गंगा के पवित्र किनारों के वर्णन में भावुकता के साथ संलग्न दिखाई देता है। गंगा की लहरों का एक चित्र देखिये–

छहरैं छरीली छाम किरनैं कलानिधि कीं,
कहरैं करैं वे भौंर भहरैं भरी उमंग।
फहरैं फनीले नाग जहरी जटा लौं घोर,
घहरैं घटा लौं लैहिं लहरैं तिहारी गंग।[1]

यहाँ गंगा की लहरों की समानता चन्द्रमा की छहराती हुयी छबीली किरणों से, उमंगित–भहराती हुयी भंवरों से, जहरीले फन फहराते हुये नागों से तथा घहराती हुयी घटाओं से की गई है। विविध उपमानों से गंगा की लहरों का साम्य उपस्थित करना कवि की पैनी दृष्टि का परिचायक है। यहाँ कवि का वर्णन कौशल चमत्काराश्रित सा प्रतीत होता है।

कवि ने लहरों की भाँति गंगा की रेणुका का भक्तिभावेन वर्णन प्रस्तुत किया है, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि कवि की रुचि अतिश्योक्ति की ओर अधिक है। पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

मान सनमान सैं बैठ है विमानन में, पायन सैं पदवीं पुरन्दर की ठेल है।
हूहै देवतान की सभान में महान भाव, आन अम्बुजासन की आसन पछेल है।।
काली कवि अैसे पद पाय है विशेष्य जो पै, गंग तीर एक रेणुका कौं मुखमेल है।
पापन कौं पेल है पहेल है सरापन कों, आनंद सकेल है रमा की गोद खेल है।।[2]

1– गंगा गुण मंजरी, पृष्ठ 1

2– उपरिवत्, पृष्ठ 10

यहाँ कवि का आशय यह है कि गंगा के किनारे रेणुका का एक कण मुख में डालने वाला समस्त पापों एवं अभिशापों से मुक्ति पाकर आनन्दित रहेगा तथा लक्ष्मी की गोद में खेलने का अधिकारी बनेगा। सम्मान पूर्वक विमान में बैठकर इन्द्रलोक से ऊपर स्वर्गलोक तक जावेगा। यह वर्णन कवि की अतिशय भावुकता का उदाहरण प्रतीत होता है।

'गंगा गुण मंजरी' में कवि ने चमत्कार प्रदर्शन के लिए यदि अतिश्योक्ति का आश्रय लिया है तो कहीं–कहीं काल्पनिक प्रसंगों को भी माध्यम बनाया है। कल्पना की उड़ान का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत है–

कोऊ चार पापीं महा गंग तट त्यागे प्राण,
लागी न बिलम्ब एक इन्द्रपद लै रहौ।
एक भयो शम्भु एक आन अम्बुशायी भयो,
एक ब्रह्म आसन पर आनंद हिंतै रहौ।
काली कवि देख यह महिमा महान तेरी,
भूल भ्रम भोरौ इन्द्र शम्भु हर है रहौ।
चोर सौ चपौं सों चुपकौ सो चिमकाई साध,
चौंक चकवानो चतुरानन चितै रहौ।[1]

उक्त छन्द में कवि की उच्चकोटि की कल्पना का अद्‌भुत उदाहरण प्रस्तुत है। गंगा के किनारे प्राणों का विसर्जन करने वाले प्राणियों को सहज ही उच्च पद की प्राप्ति हो जाती है। कैसा भी महापापी हो इन्द्र का पद भी ग्रहण कर सकता है। इतने चरम आत्मविश्वास के साथ अपना मन्तव्य प्रकट करने वाले काली कवि की यह रचना **'गंगा गुण मंजरी'** धार्मिक धरातल पर खरी उतरती है। उक्त छन्द में चपौ सौ, चुपकौ सौ चिमकाई, तथा चकवानो आदि शब्द–प्रयोगों से अभिव्यक्ति की सौन्दर्य भंगिमा बढ़ी है, कम नहीं हुयी। साहित्येतर क्षेत्रों के शब्द सदैव से श्रेष्ठ कवियों की अभिव्यक्ति में सहयोगी रहे हैं। इनसे कवि के व्यापक ज्ञान का आभास मिलता है।

1– गंगा गुण मंजरी– पृष्ठ 13

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि काली कवि की **'गंगा गुण मंजरी'** कलापक्ष एवं भावपक्ष की दृष्टि से अनूठी रचना है। भाषा, शिल्प, छन्द, अलंकार, शब्दमैत्री, पदमैत्री आदि दृष्टियों से तो रचना प्रशंसनीय है ही, भावसबलता, उच्चकोटि की कल्पना की उड़ान, रसमयता, रागात्मकता तथा धार्मिक विश्वासों आदि दृष्टियों से भी श्रेष्ठतम् है। गंगा के पवित्र एवं श्रद्धा संवलित स्वरूप की महिमा गायन में कवि की उच्चकोटि की प्रतिभा का आभास तो अनायास ही मिल जाता है। 'गंगा गुण मंजरी' में रीतिकालीन प्रचलित धर्म तथा चमत्कार पूर्ण अभिव्यक्ति का सामंजस्य सुन्दर बन पड़ा है। गंगा की लहरों से उठने वाले संगीत ने कवि के भाव–लोक को संगीतमय बना दिया है।[1]

ब- हनुमत्पताका

रीतिकालीन परम्परावादी कवियों में विशिष्ट स्थान के अधिकारी काली कवि की दोहा, सवैया तथा घनाक्षरी–कुल एकसौ पैंतीस छन्दों में आबद्ध प्रौढ़तम कृति **'हनुमत्पताका'** प्रबंध काव्य की कसौटी पर खरी उतरती है। काली कवि की इस प्रतिनिधि रचना का कथानकीय आधार बाल्मीकि रामायण है। रचना में छन्दों की आवृत्ति कथानक को गतिमयता प्रदान करती है। डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' के अनुसार– **हिन्दी के हृदय महाकवि काली द्वारा रचित हनुमत्पताका एक चमत्कार पूर्ण भक्ति काव्य है, कवि की उद्भावनायें मार्मिक–मौलिक व चमत्कार पूर्ण हैं।**[2] डॉ. बलभद्र तिवारी मानते हैं कि **इनके काव्य का अनुशीलन करते हुये पाठक वीर, भक्ति एवं श्रंगार के विशिष्ट भावों से अभिभूत होता हुआ युगीन परिस्थितियों के दर्शन कर सकता है।**[3]

1– भूमिका–गंगा गुण मंजरी, डॉ. मिथिलेशकुमार द्विवेदी, पृष्ठ 3

2– काली कवि समीक्षकों की दृष्टि में– हनुमत्पताका, डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' पृ.4

3– भूमिका– हनुमत्पताका, डॉ. बलभद्र तिवारी–सचिव, बुन्देली पीठ, सागर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) पृष्ठ.5

उपर्युक्त दोनों अभिमतों के अनुसार रचना में यदि चमत्कृत करने वाली अभिव्यक्तियाँ हैं तो वीर, भक्ति एवं श्रृंगार का अनूठा वर्णन भी है। इन्हीं तथ्यों को आधार मानकर '**हनुमत्पताका**' का साहित्यिक मूल्यांकन किया जा सकता है। कलापक्ष की दृष्टि से कृति का साहित्यिक मूल्यांकन भाषा एवं शिल्प शीर्षक के अन्तर्गत किया जा चुका है। अतः यहाँ भावपक्ष की दृष्टि से मूल्यांकन प्रस्तुत है।

हनुमान जी सीताजी की खोज में समुद्र पार–लंका के राज–पथ से गुजरते हुये विशाल भवनों में नायकों को रिझाती हुयी सुन्दरी नायिकाओं को देखते हैं। नायक–नायिका के सुखद श्रृंगारिक वर्णन को काली कवि ने कितना सटीक चित्रित किया है। एक चित्र प्रस्तुत है–

भाल महावर लींक लसै, विलसै अधरान में अंजन छौहैं।
त्यों कवि काली किये अंखियान के नींद झलान पला झपको हैं।
सौहें न हेरत सौहें करै कहूँ, किंकणीं से बंधे कंत सिसौ हैं।
मान भरी गजरान उनै रहीं, कामिनी तान कमान सीं भौहें।[1]

उक्त छन्द में नायक–नायिका के मादक सम्मिलन का मोहक एवं आकर्षक वर्णन है, जिसमें नायिका के पैरों का महावर नायक के माथे पर तथा नायिका की आँख का अंजन नायक के अधरों पर अंकित है। नायिका ने किंकणीं से कंत को बाँध लिया है तथा कामिनी नायिका कमान के समान भौहें तानकर अपने मतवालेपन में नायक के गले में गजरा डाल रही है। नायक–नायिका का संयोग चित्र अत्यन्त मोहक बन पड़ा है, यह कवि की अनूठी प्रतिभा का परिचायक है।

1– हनुमत्पताका– पृष्ठ 7

रीतिकालीन साहित्य–सर्जना में नखशिख वर्णन की परम्परा विशेष उल्लेखनीय है। इसी क्रम में काली कवि का नख शिख वर्णन भी अनूठा एवं अपूर्व है। कवि की दृष्टि नायिका के मांसल शरीर पर स्थिर है। सौन्दर्य का सजीला स्वरूप एवं नारी की सुगठित देह–यष्टि कवि के मन को आकर्षित करती है। कवि अपनी आन्तरिक अनुभूतियों को जन–जन के मन में सफलता के साथ सम्प्रेषित करता है–

देख सर नाभि को सरोवर अतुल्य और,
तुल्य त्रिवलीनहूँ के सुरन सिढ़ीन है।
काली कवि कायल मृड़ाल भुज नालन ते,
लोचन विशालन ते घायल सुमीन है।।
वारन ते सकुच सिवारन गई है पैठ,
हारन ते तुमुल तरंग तरलीन है।
क्षीण छबि मधुप महीन मधु बोलन ते,
अमल कपोलन ते कमल मलीन है।।[1]

यहाँ काली कवि ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करते हुये नारी–अंगो की तुलना में सौन्दर्य के प्राकृतिक उपमानों का लज्जित होना बतलाया है। जैसे नाभि कुण्ड की तुलना में सरोवर अक्षम है, भुजनाल के समक्ष मृणाल कायल है, विशाल नेत्रों की तुलना में मीन घायल है तथा कपोलों के सौन्दर्य के आगे कमल मलीन हैं।

हनुमान सीता की खोज में घूमते हुये लंका के विशाल महलों में सुन्दरी नायिकाओं की अपने प्रियतमों को रिझाने की तत्परता का अवलोकन करते हैं। इस वर्णन में ऐसा प्रतीत होता है जैसे कवि की दृष्टि

1– हनुमत्पताका, पृष्ठ 8

नायिकाओं की गण्ना पर रही है। उदाहरण देखिये—

एकै पिय लाड़ली तिलाई तस्तरीन बीच,

लाई पान बीरी सज सिजिल मसाला में।

काली कवि सबज सुरंग सुख सेजन पै,

आब छिरकावतीं गुलाब गुल गाला में।।

एकै सज गजक लगावतीं कचेरिन में,

एकै रहीं हाला भर सुघर पियाला में।।

एकै नवनाला गुहैं किंकिणीं रसाला गुहैं,

एकै फूलमाला गुहैं बाला चित्रशाला में।।[1]

उक्त छन्द में काली कवि ने काव्य—केलि से पूर्व जुटाये गये उत्तेजक एवं आनन्दवर्धक उपादानों का सटीक वर्णन करते हुये नारियों की गणना अथवा क्रम—विधान उपस्थित किया है। यहाँ अभिसार का दृश्य समुपस्थित हो रहा है। कवि की सूक्ष्म दृष्टि एवं व्यापक अनुभव प्रशंसनीय है। इसके साथ ही मादकता में आत्म—विभोर नायकों की विपरीत चेष्टाओं का वर्णन निम्न दोहे में देखने योग्य है—

एकै पिय तिय पगन में, जावक रहे लगाय।

एकै मृग नैननि कीं, वेणी गुहत बनाय।।[2]

'हनुमत्पताका' में काली कवि ने श्रृंगार के संयोग पक्ष का जितना मनोहारी वर्णन किया है, उतना ही सुन्दर एवं सटीक वियोग का वर्णन भी है। भगवान राम के विरह में व्याकुल जानकी की स्थिति का चित्राण देखिये—

भोर भर भंजित अशोक तरू पुंज कुंज,

वंजुल की मंजरी सुमंजु कुमला परी।

काली कवि तोर तरू मरुत मरोर जोर,

घोर घन मण्डल ते चूक चपला परी।

1— हनुमत्पताका, पृष्ठ 2

2— उपरिवत्— पृष्ठ 2

बिनहीं अराम के अराम में दशानन के,

तामरस दाम छाम राम अवला परी।

दौज द्विज राज की अकास तेसू आज मानौ,

राहु भय भाज छूट क्षिति पै काला परी।।[1]

यहाँ कवि ने विरहाकुल सीता की विरहजन्य वेदना को अभिव्यक्त किया है। व्याकुल सीता कवि को कुम्हलाई हुई सुन्दर मंजरी सी, बादलों से गिरी बिजली सी तथा राहु से भयाक्रान्त व्याकुल चन्द्रमा की कला सी प्रतीत होती है। यहाँ सार्थक उपमानों को प्रस्तुत कर कवि ने विरह की अद्भुत व्यंजना की है। कवि ने व्यथित सीता को **'परी भूमितल विकल जनु कमला कमल विहीन'** कहकर विरह की गम्भीरता को अधिक स्पष्ट कर दिया है।

काली कवि ने इस काव्य में भक्तिभावना का समावेश कर परम्परित प्रभु–भक्ति का निर्वाह किया है। साहित्य में अध्यात्म के लोकमंगल का आदर्श उपस्थित हुआ है। इस प्रकार का योगदान साहित्य और समाज को विद्वज्जनों द्वारा सदैव से प्राप्त होता रहा है। हनुमान और विभीषण– दोनों पात्र भक्ति को अपने मानस में साकार किए हैं। हनुमान सीता की खोज में घूम रहे हैं, विभीषण की कराह सुनकर साक्षात्कार करते हैं। दोनों भक्तों के परस्पर स्नेह सम्मिलन में समर्पण का अद्भुत दृश्य उपस्थित हो जाता है। दोनों की भाव विह्वल स्थिति का चित्रांकन दृष्टव्य है–

आनंद के उमगे अंसुवा पुलकें, सब अंग परे पिघले से।

त्यों कवि काली मिटार मनों, मर्याद सनेह समुद्र पिले से।

मोद भरे हुलसे हियरे युग, ओर ते लोचन कंज खिले से।

कीशै दूतै मिली जानकी सी, उतै लागै विभीषणै राम मिलेसे।।[2]

यहाँ काली कवि की कविता में हृदय पक्ष का स्पर्श हुआ है। कवि ने कथ्य–शिल्प को साहित्यिक गरिमा से सुशोभित किया है। दोनों

1– हनुमत्पताका, पृष्ठ. 13

2– उपरिवत् पृष्ठ. 11

भक्त जब स्नेह पूर्वक मिलते हैं, तो ऐसा लगता है कि हनुमान को जानकी तथा विभीषण को राम ही मिल गये हैं। काली कवि ने अनार्य संस्कृति पक्ष का भी निरूपण किया है।[1] देखें—

तिन शिव को पूजन कियो,सहित विमव विस्तार।
लग्यो बहुरि अस्तुति करन, छन्द प्रबन्ध प्रचार।।
भवहिं बंदि मंदिर गयो, रावण सहित समाज।
लगो लखन रनिवास को,प्रति अवास कपिराज।।[2]

'हनुमत्पताका' में काली कवि का प्रकृति वर्णन अलंकारिक शब्दावली के साथ प्रस्तुत होकर काव्य सौष्ठव में अनूठी अभिवृद्धि करता है। प्राकृतिक उपादानों से कवि ने भावाभिव्यंजना में तीव्रता एवं गम्भीरता उत्पन्न करने का सफल प्रयास किया है—

गहब गुलाब गल चटक चमेलिन के,
बेलन के बिंदल दुमेलन दला परैं।
काली कवि सघन रसाला द्रुम कुंजन में,
कोकिला कलापन के हहल हला परैं।।
प्रसरत मंजु मृदु मारुत मलय मंद,
सरस सुगन्ध की सकल कला परै।
मोद मद मंथर मलिंद मतवारिंन के,
मधु मकरंद पै झपक झला परै।।[3]

उक्त छन्द में कवि ने गुलाब, चमेली, द्रुम, कुंज, कोयल, मारुत, मलय, मलिंद, मधु तथा मकरंद आदि प्राकृतिक उपादानों का उपयोग करके अपनी भावाभिव्यंजना को सबलता एवं सार्थकता प्रदान की है।

1— भूमिका—हनुमत्पताका, डॉ. बलभद्र तिवारी, पृष्ठ 6

2— हनुमत्पताका— पृष्ठ. 9

3— उपरिवत्, पृष्ठ 12

'हनुमत्पताका' में कवि ने हनुमान को मल्ल विद्या–विशारद बताया है तथा लोक परम्परा का परिशीलन करके हनुमानसे मल्लयुद्ध कराते हुये दाँव–पेच की बारीकियों का चित्रण किया है।[1]–

काली कवि कटि पर पकर लंगोट पट,

पड़ि कर मीड़त मिलाय देत धूर में।

घूमकर चक्कर की निकर तरे तें वीर,

भूमि पर चाहत पछारो कवि शूर में।

झूमकर झपक झपेटत भुजान बीच,

लूम कर लपक लपेटत लंगूर में।।[2]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रस सिद्ध आचार्यों की परम्परा में काली कवि ने इस काव्य में बुन्देल खण्ड की भक्ति अद्‌भुत सामंजस्य किया है। श्रृंगार पक्ष के सजीव वर्णनों ने एक अनोखा आकर्षण उत्पन्न किया है। इस प्रकार हनुमत्पताका में कवि ने रीतिकाल तथा भक्तिकाल दोनों की साहित्यिक विशेषताओं का अनोखा समन्वय प्रस्तुत किया है। यह एक अनूठी रचना है।

स- छवि रत्नम्

महाकवि काली की अनुपम एवं रुचिर रचना **'छवि रत्नम्'** 89 (नवासी) दोहों में सज्जित शिख–नख सौन्दर्य वर्णन प्रधान है। अनेकशः रीतिकालीन कवियों ने नख–शिख वर्णन किया है। किन्तु काली कवि ने शिख–नख वर्णन करके अपने सौन्दर्य प्रेम एवं नारी को देह–यष्टि के प्रति अतीव आकर्षण को अभिव्यक्त किया है। दोहा जैसे छोटे छन्द में अपनी पैनी दृष्टि से नारी का शिख–नख वर्णन करने में कवि को अभूतपूर्व सफलता

1– भूमिका–हनुमत्पताका, डॉ बलभद्र तिवारी, पृष्ठ 7

2– हनुमत्पताका, पृष्ठ 21

मिली है। डॉ. सूर्यप्रसाद शुक्ल दोहे की गुरुता प्रकट करते हैं– दोहा जैसे छोटे छन्द में यद्यपि मात्रिक यति से युति होती है, किन्तु समर्थ कवियों ने भावपूर्ण कथनों की अनुपम रसात्मकता को गागर में सागर रूप भरकर हिन्दी भाषा के रस–कोष को समृद्ध किया है। गीत के गुणों से भरपूर दोहा छन्द में भाव रस छलकता है, तब श्रोता और पाठक के बीच रचयिता की अनुभूति सहज ही संप्रेषित होती जान पड़ती है।[1]

काली कवि ऐसे समर्थ कवि थे, जिन्होंने अपनी इस लघु रचना में दोहा छन्द के माध्यम से लक्षण ग्रन्थ परम्परा का निर्वाह किया है। डॉ. रामानन्द शर्मा ने **'छबिरत्नम्'** को रोचक और भव्य कल्पना का आश्रय तथा पारम्परिक उपमानों के संदर्भ में प्रसूत रचना बतलाकर नूतन कल्पनाओं की उजागरी कृति कहा है।[2] जबकि अन्य विद्वानों जैसे भगीरथ सिंह **'तकदीर'** ने **'छबिरत्नम'** को महाकवि काली की रुचिर रचना कहा है और पं. बालकराम चतुर्वेदी ने रचना के शीर्षक को सौद्देश्य बतलाते हुये **'समर्थ कवि की कसौटी'** कहा है।

उपर्युक्त अभिमतों से सिद्ध होता है कि **'छबिरत्नम्'** भाव प्रवणता, रसमयता, अनुभूति की तीव्रता तथा अभिव्यक्ति की कुशलता सभी दृष्टियों से अनूठी एवं अप्रतिम रचना है। यद्यपि इस प्रकार के वर्णनों की एक दीर्घ परम्परा रही है, फिर भी काली कवि की नवोन्मेष शालिनी प्रतिभा ने उसे नूतन स्वरूप प्रदान किया है।

हिन्दी साहित्य में नारी सौन्दर्य के सांगोपांग वर्णन के लिए प्रख्यात पारम्परिक उपमान ही सर्वाधिक प्रचलन में रहे हैं। जंघाओं के लिए कदली खम्भ, मुख के लिए चन्द्रमा, नेत्रों के लिए मीन, खंजन, कमल आदि तथा स्तनों के लिए कुम्भ स्थल के प्रयोग सर्वत्र ही उपलब्ध हैं। किन्तु

1– गीति इतिहास में ये गीत–सं. सूर्यप्रसाद शुक्ल, विधन प्रकाशन, दर्शन पुरवा कानपुर, पृष्ठ 343

2– छविरत्नम् की भूमिका– डॉ. रामानन्द शर्मा, पृष्ठ 1

काली कवि ने इनके प्रयोग में नवीनता का समावेश कर अंग–सौष्ठव को भली भाँति निखारा है।–

कलभ कुम्भ तिय कुच भए, अंकुश के भय भाग।
भाग लिखी न मिटी तऊ, सहन परे नख दाग।
मंजु कहा मखतूल है, मखमल किंतिक मुलाम।
उदर देख लागो गड़न, मुख मांखन को नाम।।[1]

उक्त उदाहरण में कलभ कुम्भ का अंकुश के भय से स्त्रियों के हृदय में छिपकर कुचों के वेश में रहना तथा उनका नखक्षत सहना नवीनतम् प्रयोग है। रुई तथा मखमल से भी कोमल, नायिका का उदर, जिसकी कोमलता मक्खन से भी नर्म है तथा उदर को देखकर मुख में मक्खन का नाम भी गढ़ने लगता है। कल्पना की उड़ान एवं भाव–चित्रण की सबलता का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है।

नायिका की पलकों का एक अत्यंत मनोहर एवं आकर्षक वर्णन दृष्टव्य है–

पलारूप धन की तुला, प्रेम लता के पत्र।
जे लोचन क्षितिपाल के, छजत छबीले छत्र।।
पलकेंहु न सुहात कछु, पलकेहू नहिं चैन।
तेरी पलकेंहू लखै, पलकेहूं लागै न।।[2]

तात्पर्य है कि नायिका की पलकें उसके रूप सौन्दर्य रूपी धन तौलने की तराजू हैं। पलकों का उठना, गिरना, मादकता, गाम्भीर्य तथा लावण्य नायक अपने मन में तौलता रहता है। नायिका की मृदुल पलकें उसके हृदय में समुत्पन्न प्रेम–वेल को पकट करने वाली आमंत्रण पत्रिका हैं। नायिका के पलक उसके शरीर रूपी पृथ्वी के नेत्र रूपी राजा के शोभा सम्पन्न मुकुट हैं तथा नायक जब नायिका की पलकें देखता है तो उसे पल

1– छबिरत्नम्– पृष्ठ 8

2– उपरिवत्, पृष्ठ 2

को चैन नहीं मिलता पलंग पर भी विश्राम नहीं मिलता तथा पलभर को भी निद्रा नहीं आती। उक्त दोनों चित्र साहित्यिक सौष्ठव की दृष्टि से अत्यन्त अद्भुत तथा भावोत्कर्ष की दृष्टि से भी मनोरम हैं।

नायिका की मुस्कान, माधुरी की शोभा निम्न दोहे में रेखांकित है–

आज लड़ैती लाल के, ढिंग बैठीं मुसकात।

चटक दुफरिया में रहीं, छिटक जुन्हैया रात।।[1]

नायिका की मुस्कान में इतनी उज्जवल, निर्मल तथा शीतल कांति विद्यमान है कि दोपहर में भी चाँदनी रात्रि जैसी माधुर्यपूर्ण छटा आभासित होने लगती है। इसी प्रकार नायिका के कपोल पर स्थित तिल को देखकर कवि कितनी कल्पनाएँ करता है तथा कितने संदेह व्यक्त करता है–

कै कपोल अनमोल तिल कै अलि कमल समेत।

कै सुवर्ण के पर्ण मणि, नील वर्ण छवि देत।।[2]

उक्त उदाहरण में संदेह अलंकार का सौन्दर्य तो प्रतिबिम्बित है ही, साथ ही दोहे की उत्कृष्ट कला तथा कला में जीवन्तता भी साक्षात् है। कपोल पर अंकित तिल ऐसा प्रतीत होता है जैसे कमल पर बैठा मद मस्त भ्रमर मकरन्द पान कर रहा हो अथवा सोने के पत्ते पर नीले वर्ण का बहुमूल्य रत्न नीलम रखा हुआ हो।

कवि की सूक्ष्म दृष्टि एवं अद्भुत कल्पना का संयोग वर्णन कौशल में चमत्कार उत्पन्न कर देता है। काली कवि भी बिहारी की तरह **'झीने पट में झिलमिली, झलकत ओप अपार'** वाली नायिका को देखते हैं और उनकी दृष्टि कानों में सुशोभित स्वर्णिम कर्णफूलों पर गड़ जाती है। चित्र देखिये–

सारी झरकन झलक लखि, ललक रहो मन रंक।

अरुन तरुनि के, करन के, बसीकरन ताटंक।।[3]

1– छबिरत्नम्– पृष्ठ 5

2– उपरिवत्, पृष्ठ 4

3– उपरिवत्, पृष्ठ 4

नायिका की झीनी साड़ी और उसके घूँघट से नायक ने कानों के स्वर्णाभूषण तांटक देख लिए। उसका निर्धन मन लालायित हो गया। कर्णफूलों ने मन को वश में कर लिया मानो वशीकरण कर दिया हो। अतः वशीभूत नायक निष्क्रिय होकर न तो कोई याचना कर सका और न ही कोई बल प्रयोग कर सका।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि काली कवि की अनुपम कृति 'छबिरत्नम्' में यदि कवित्व की मर्म स्पर्षतः है तो गम्भीर भावाभिव्यक्ति एवं सम्प्रेषण की सहज प्रभावोत्पादक क्षमता भी है। इस तरह 'छबिरत्नम्' कला एवं भावपक्ष दोनों दृष्टियों से उत्कृष्ट एवं अनूठी रचना है। चित्रमयता, कल्पना की ऊँची उड़ान, सूक्ष्मदृष्टि, अलंकारिक सौन्दर्य, सजीवता तथा सौदर्यांकन क्षमता आदि सभी दृष्टियों से रचना को अभूतपूर्व कहा जा सकता है। साहित्यिक मूल्यांकन में काली कवि की 'छबिरत्नम्' कृति खरी उतरती है। कहीं–कहीं जटिलता तथा गूढ़ता का समावेश पाठक को बौद्धिक व्यायाम का भी अवसर प्रदान करता है। कुल मिलाकर रचना श्रेष्ठ एवं सराहनीय है।

रसिक विनोद

काली कवि की श्रृंगारिक रचना **'रसिक विनोद'** नायिका भेद पर आधारित है। संयोग तथा वियोग श्रृंगार की सभी स्थितियों का निरूपण करते हुये कवि ने आलंबन तथा उद्दीपन विभावों का विस्तृत वर्णन किया है। अनुभावों तथा चेष्टाओं का सटीक वर्णन उदाहरण सहित किया गया है। इस प्रकार इस कृति में लक्षण ग्रंथ परम्परा का निर्वहन सफलता पूर्वक हुआ है। सम्पूर्ण कृति दोहों में लिखी गई है। लक्षणों की पुष्टि में उद्धृत दोहों से कवि की श्रृंगार के प्रति नैसर्गिक सुरुचि सम्पन्नता प्रकट होती है। इन दोहों में निहित भावात्मक गम्भीरता की थाह कोई रसानुरागी मन ही पा सकता है। सम्पूर्ण कृति में कवि की अनुभूति की सघनता एवं अभिव्यक्ति की निपुणता श्लाध्य है।

'रसिक विनोद' का साहित्यिक मूल्यांकन करने के लिये यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना अनुचित न होगा। प्रातःकाल के मधुरिम दृश्य को देखकर कवि के हृदय में उत्थित उच्चकोटि की कल्पना देखने योग्य है—

सुत जायो प्राचीं शचीं, छूट गये इक संग।
भुज बंधन में भामिनीं, अरविन्दन तें भृंग।।[1]

पूर्व दिशा रूपी इन्द्राणी ने सूर्य रूपी सुत को जन्म दिया। पुत्र जन्म के उपलक्ष्य में जैसे राजाओं के यहाँ कैदी मुक्त कर दिये जाते हैं वैसे ही यहाँ सूर्य रूपी पुत्र के उत्पन्न होने पर स्त्रियाँ अपने पतियों के भुजबन्धों से तथा भ्रमर कमलों से एक साथ मुक्त कर दिये गए। इतनी उच्चकोटि की कल्पना कवि की महान प्रतिभा की परिचायक है।

काली कवि के **'रसिक विनोद'** में सम्प्रेषण की सीधी—सीधी प्रभावोत्पादक क्षमता विद्यमान है। बाह्य शिल्प के रूप में भाषा की सहजता, अर्थ—निरूपण और कथ्य में ताजगी तथा अंतस के अनूठे संस्पर्श आपके रचना—कौशल के सौन्दर्य को द्विगुणित करते हैं तथा कविता में सहज आकर्षण भी उत्पन्न करते हैं। मध्याधीरा नायिका का एक चित्र देखिए—

दीठ परत नंदलाल के, रहीं जो तनक अडोल।
चाहत हीरा की कनीं, लाल चुनीं के मोल।।[2]

नायिका नंदलाल की दृष्टि पड़ने पर भी अडिग रहती है। उसको दृष्टि के संकेतों की पहिचान है। वह मनमें धारणा बना लेती है कि प्रियतम चुनी के बदले हीराकण चाहता है। तभी तो नायिका उस पर अपनी कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करती। यहाँ कवि ने नायिका के मनोभावों का सहज चित्रण किया है।

1— रसिक विनोद— काली कवि (अप्रकाशित), पृष्ठ 5

2— उपरिवत्, पृष्ठ 2

कवि को जनजीवन की संस्कृति का पूर्ण परिज्ञान था। लोकाचार तथा व्यवहारों के संकेत उनकी कविता में कहीं–कहीं उपलब्ध हैं। भविष्यगुप्ता नायिका का उदाहरण प्रस्तुत करते हुये कवि ज्वर–निवारण–तंत्र की गोपनीयता प्रकट करता है। नायिका अपनी सखी से कहती है–

रात मोहिं मत खूंटिये, जै हों कतहुं इकंत।

बिन बोले हीं होत है, ताप चढ़े को तंत।।[1]

नायिका विरह रूपी ज्वर से पीड़ित है। अपने प्रिय से एकान्त में जाकर अभिसार करने की इच्छुक है। जिस तरह ज्वर निवारण का तंत्र गोपनीय रहने पर ही सफल होता है, उसी प्रकार प्रिय मिलन में भी किसी का टोकना सफलता को संदिग्ध कर देता है। इसी तरह रूप गर्विता नायिका को अपने रूप सौन्दर्य पर इतना अभिमान है कि वह चन्द्रमा को हेय दृष्टि से देखती तथा उसके लिये अपशब्दों का भी प्रयोग कर देती है–

चन्द मन्द क्यों सकुचिगौ, मो छबि सों छबि जोर।

दिखरावत दिन के न मुख, कढ़त रात के चोर।।[2]

कवि कल्पना करता है कि नायिका के सौन्दर्य से लज्जित होकर चन्द्रमा दिन में मुख न दिखाकर रात्रि में चोरों की भाँति निकलता है। उक्त वर्णन प्राकृतिक उपमानों को हेय प्रतिपादित करने की प्राचीन परम्परा का पिष्ट–पेषण प्रतीत होता है।

उद्यीपन विभावान्तर्गत उपालंभ का विशेष स्थान है। नायक रात्रि में कहीं अन्य स्त्री के साथ रहा। इधर नायिका को तारे गिनते–गिनते प्रातःकाल हो गया। विरह व्यथिता नायिका की सखी नायक के आने पर उपालंभ देती हुयी कहती है–

काल कहूँ अनतैं रमे, ऐ हो नन्दकिशोर।

बाल विचारी को भयो, तकत तरैंयां भोर।।[3]

1– रसिक विनोद– काली कवि (अप्रकाशित), पृष्ठ 3

2– उपरिवत्,, पृष्ठ 4

3– उपरिवत्, पृष्ठ 15

संयोग श्रृंगार की एक विचित्र स्थिति देखने योग्य है–

पियत नीर ज्यों–ज्यों पथिक, ऊपर ओर निहार।

तजत पियावन हार तिय, त्यों–त्यों पातर धार।।[1]

नायक–नायिका के पारस्परिक आकर्षण का क्रमिक विकास दर्शाया गया है। जैसे–जैसे पथिक पानी पीता जाता है, ऊपर की ओर देखकर नायिका के सौन्दर्य रस का पान भी करता जाता है, नायिका भी देर तक देखने की लालसा में पानी की धार को पतला करती जाती है। यहाँ संयोग श्रृंगार का अनूठा दृश्य उपस्थित हुआ है।

काली कवि ने श्रृंगारिक मनोभावों में विच्छिप्त का बड़ा ही आकर्षक वर्णन किया है, साथ ही अलंकारिक सौन्दर्य भी दृष्टव्य है।

कर गरूर आई सबै, सज भूषण भरपूर।

सारी सौतन के किये, सारी सौंतन धूर।।[2]

नायिका की साड़ी इतनी सुन्दर है कि उसे देखकर अन्य सपत्नियाँ लज्जित होकर विक्षिप्त सी हो जाती हैं। श्लेष का चमत्कार पाठक को विमुग्ध करने वाला है।

वियोग वर्णन की एक स्थिति में कवि की सृजनधर्मिता का अद्भुत प्रयोग देखिये–

पिय बोले नहिं कोकिला, रवि उदयो न मयंक।

यम किंकरी न सहचरी, चिता न री परजंक।।[3]

वियोग की चरमावस्था में नायिका को सामान्य भी विषम सा प्रतीत होने लगा है। नायिका को चन्द्रमा सूर्य की तरह, सहचरी यम किंकरी की भाँति तथा पलंग चिता की तरह प्रतीत हो रहा है। विरह की विषमता का सटीक वर्णन प्रस्तुत है।

1– रसिक विनोद– काली कवि (अप्रकाशित), पृष्ठ 17

2– उपरिवत्, पृष्ठ 18

3– उपरिवत्, पृष्ठ 19

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रीतिकालीन लक्षण ग्रन्थ परम्परा का सफल निर्वाह करते हुये काली कवि ने 'रसिक विनोद' में संयोग, वियोग, विभाव, अनुभाव, ऋतुवर्णन तथा उद्दीपन आदि स्थितियों का मनोहारी चित्रण किया है। कवि की वर्णन क्षमता, सघन अनुभूतियों की सफलता अभिव्यक्ति तथा काव्य चमत्कार की दृष्टि से यह रचना बेजोड़ कही जा सकती है।

य- कवि कल्पद्रुम

'कवि कल्पद्रुम' काली की काव्यांग निरूपक रचना है। इस प्रकार की रचनाओं में तत्कालीन कवियों या आचार्यों की या तो आत्म प्रदर्शन की भावना रहती थी अथवा काव्य–रसिकों का ज्ञानवर्धन ही उनका प्रमुख उद्देश्य रहता था। इस रचना के पूर्व में **'रसिक विनोद'** तथा **'छबिरत्नम्'** भी काली कवि की लक्षण ग्रन्थ परम्परा पर आधारित रचनाएँ साहित्य जगत में अपना स्थान बना चुकी हैं। कवि की इन रचनाओं में श्रृंगारिक प्रवृत्ति की प्रधानता है। **'कवि कल्पद्रुम'** में शास्त्राकारों की प्राचीन परम्परा के अनुसार प्रारंभ में मंगलाचरण के लक्षण एवं प्रभेदों पर प्रकाश डाला गया है–

जहाँ विघन के नाश हित,कीजत कछुक विधान।
कायिक, वाचिक, मौनहू, मंगल ताहि बरवान।।
नमस्कार मय वस्तु के, निरदेशमय विचार।
विद्या आशीरवाद मय, मंगलचार प्रकार।।[1]

इस प्रकार विघ्नों से मुक्ति के लिए शास्त्राकारों ने मंगलाचरण का जो विधान किया है, काली कवि ने कायिक, वाचिक तथा मानसिक उसके तीन भेद किये हैं। इसके अतिरिक्त नमस्कारात्मक, वस्तु निर्देशात्मक, शिक्षात्मक तथा आशीर्वादात्मक चार अन्य भेद भी किये हैं, जो विषय की

1– कवि कल्पद्रुम– पृष्ठ 1

गम्भीरता को बोधगम्य बनाने की दृष्टि से उपयुक्त हैं।

काव्यांग निरूपण की दृष्टि से काली कवि की यह सफल रचना है। कवि ने अभिधा, लक्षणा एवं व्यंजना शब्द शक्तियों को तो परिभाषित किया ही है, काव्य–प्रयोजन, काव्य–कारण तथा काव्य के स्वरूप को भी परिलक्षित किया है। अभिधा मूला व्यंजना का 'एक अर्थ दैके करे, अन्य अर्थ को भास, लक्षण बतलाकर उदाहरण प्रस्तुत किया है।

जात अमावश को शशी, जब सूरज के ऐन।

तब कैसी हिलकत रहत, भरी तरैयन रैन।।[1]

यहाँ कवि ने अभिधा के माध्यम से व्यंजना के सौन्दर्य को निखारा है। नक्षत्रों से भरी रात्रि चन्द्रमा के विरह में हिलकी भरके रो रही है। अमावस्या की रात्रि में 'चन्द्रमा का सूर्य के घर गमन बतलाकर अर्थ में चमत्कार ला दिया है।

काली कवि मूलतः रसवादी थे। रीतिकालीन काव्य लक्षणों का प्रभाव उनके अन्तस पर पूरा–पूरा था। डॉ. नगेन्द्र ने रीतिकाल के श्रृंगार प्रधान कवियों के सम्बन्ध में लिखा है– **'यही कारण है कि संयोग के नग्न चित्रों तथा नायकों की धृष्टताओं के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करते समय उन्होंने किसी प्रकार का संकोच नहीं किया। क्योंकि इस प्रवृत्ति में विलासिता का प्राधान्य है, अतएव प्रेमभावना में एकोन्मुखता का स्थान अनेकोंन्मुखता ने कुछ इस प्रकार ले लिया है कि कुण्ठारहित प्रेम की उन्मुक्तता रसिकता का रूप धारण कर गयी है।**[2] काली कवि के संयोग श्रृंगार का एक उदाहरण डॉ. नगेन्द्र के कथन की पुष्टि करता है–

जागत तो ताकत रहत, मो मुख को दूक टांक।

सोवत हूँ यह उठत कै, अरी न ढांक न ढांक।।[3]

1– कवि कल्पद्रुम, पृष्ठ 5

2– हिन्दी साहित्य का इतिहास–डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 306

3– कवि कल्पद्रुम, पृष्ठ 8

जाग्रत में रसिक नायक नायिका का मुख टकटकी बांधकर देखता रहता है। रूप सौन्दर्य पर आकृष्ट नायक स्वप्न में भी कह उठता है कि अरी, अपने मुख को न ढांक– अर्थात् मुझे रूप सौन्दर्य का उन्मुक्त अवलोकन करने दे। यहाँ कवि की विलास भावना स्पष्ट है। वह पूर्णतः बाह्य रूप सौन्दर्य का प्रेमी प्रतांत होता है।

काली कवि की इस रचना में चमत्कार प्रधान सृजन का विशिष्ट सौन्दर्य है। काव्यांग निरूपण तो सफल है ही, कथन की वक्रता चमत्कार सृजित करके काव्य सौन्दर्य में अभिवृद्धि भी करती है। कवि की वचन विदग्धता का एक उदाहरण कितना सुन्दर बन पड़ा है–

कस्टक जाहिं काके न उर, खल अरु कामिन केश।

जे अलीक लागे रहत, कारे कुटिल हमेश।।[1]

यहाँ कवि ने कामिनी के केश और खलों के प्रभाव में भाव–साम्य उपस्थित करते हुये उन्हें अलीक तथा कारे–कुटिल बतलाया है तथा यह भी व्यक्त किया है कि ये भला किसके हृदय में पीड़ा उत्पन्न नहीं करते। एक अन्य उदाहरण में नायिका पथिक से सघन छाया में विश्राम करने का आग्रह करती है–

विलम लेहु छाया सघन, लखहिं न नागर लोग।

अहो बिहारी लाल मैं, क्वांरी यही कुजोग।।[2]

यहाँ पथिक से विश्राम का आग्रह तो है किन्तु क्वांरेपन का कुजोग बतलाकर नायिका अपनी सहवास की असमर्थता व्यक्त कर रही है। नायिका सामाजिक मर्यादा का संकेत करती है तथा अपनी हार्दिक उदारता भी अभिव्यक्त करती है। इस प्रकार उक्त उदाहरण में विशेष भावों के मिश्रण का विशेष सौष्ठव दर्शनीय है।

1– कवि कल्पद्रुम, पृष्ठ 19

2– उपरिवत्, पृष्ठ 16

कवि कल्पद्रुम काली कवि के सृजन संसार में विशेष महत्वपूर्ण रचना है। इसे पूर्णतः मौलिक तो नहीं कहा जा सकता, क्योंकि काव्यांग निरूपण की संस्कृत काव्यशास्त्र की दीर्घकालीन परम्परा का प्रभाव यत्र–तत्र दिखाई देता है। फिर भी इनके काव्य में शब्द–सौन्दर्य, भाव सौन्दर्य, ध्वनि सौन्दर्य, रूप सौन्दर्य तथा साहित्यिक गुणवत्ता का समवेत स्वरूप विशिष्ट आकर्षण का केन्द्र है। अलंकारिक सौन्दर्य निम्न पक्तियों में द्रष्टव्य है–

मुरली सी मधुकरन ध्वनि, घेर रही आकास।

माधव आए न सखी, आए माधव मास।।[1]

उक्त पक्तियों में प्रवासजन्य विरह का मनोरम चित्रांकन है, साथ ही यमक अलंकार का अद्‌भुत प्रयोग किया गया है। काली कवि ने रचना के अंत में अर्थ चित्र विभेद वर्णन में कुछ प्रहेलिकायें प्रस्तुत की हैं। इन प्रहेलिकाओं में साहित्यिक प्रश्न अथवा समस्याओं का अर्थ गूढ़ रहता है। साहित्यिक वर्ग में समस्यापूर्ति भी काव्य–सृजन का एक अंग है। इसी प्रकार प्रहेलिकाएं भी कवि कर्म का एक अंग है। उदाहरण देखिये–

आदि अन्त में बसत जो, पारवती के नाम।

बाम काम व्याकुल कहै, सो नहिं भेजत श्याम।।[2]

इस प्रहेलिका में पारवती के आदि और अन्त के वर्णों को यदि सम्मिलित करें तो पाती शब्द बनता है। कवि का गूढार्थ यह है कि काम पीड़ित बाला, कृष्ण की पाती के अभाव में व्याकुल हो रही है, चिन्तित है। अतः इस पहेली का हल पाती है। इस तरह एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है–

तीन लोक शिर पर धरैं, तीन चरन की चाल।

त्रिसुर जाहिं सेवत रहत, त्रिविध तीनहूँ काल।।[3]

1– कवि कल्पद्रुम– पृष्ठ 8

2– उपरिवत्, पृष्ठ 24

3– उपरिवत्, पृष्ठ 23

उक्त उदाहरण में काली कवि ने भू, भुवः तथा स्वः इन तीनों लोगों से प्रारम्भ, तीन चरण वाला, ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश तीनों देवताओं द्वारा सेवित तथा तीनों कालों में जिसका स्तवन होता हो, ऐसे गायत्री मंत्र का गूढ़ार्थ निहित किया है। अतः इस पहेली का हल गायत्री है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि काली कवि की यह रचना साहित्य सौष्ठव की दृष्टि से काव्य क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। भावक्षेत्र में यदि गंभीरता का समावेश है और भावदशा में यदि हृदय रसविभोर होता है तो कलापक्ष की दृष्टि से भी अद्भुत चमत्कार सृजित होता है। अतिशय बुद्धिवादी विचार सम्पन्नता है तो मृदुल, मनोहर भावसुषमा भी विद्यमान है। काव्यांगों का निरूपण काली कवि की इस रचना में सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ है। **'कवि कल्पद्रुम'** सभी दृष्टियों से अनूठी रचना है।

च- ऋतु राजीव

काली कवि की **'ऋतु राजीव'** ऋतु वर्णन की दृष्टि से उत्कृष्ट रचना है। आंशिक रूप में प्रकाशित यह कृति सेनापति, पद्माकर तथा अन्य कवियों के ऋतुवर्णन के समकक्ष ही है। हिन्दी साहित्य में ऋतु वर्णन की परम्परा अत्यंत प्राचीन है। रीतिकालीन कवियों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया। इसी क्रम में काली कवि ने भी ऋतु–राजीव की रचना कर अपना साहित्यिक योगदान किया। रचना में सभी ऋतुओं के आकर्षक वर्णन पाठक का मनमोह लेते हैं। इसमें यदि ग्रीष्म के भयंकर ताप से व्याकुल वन्य जीवों के अस्तित्व विस्मरण की चर्चा है तो शिशिर में नायक नायिकाओं के कामोत्तेजक प्रभावों का अंकन है। यदि पावस की अँधेरी रात विरहिणी को प्रियमिलन के लिए व्याकुल करती है तो शरद की चाँदनी अभिसार का आनन्द प्रदान करती है। बसन्त का मनोहारी वर्णन तो वियोगिनी नायिका के विरह का खुला दस्तावेज सा प्रतीत होता है।

काली भला उनसें कहियो अब,

आय बसंत गओ वन फूलन।

सांस उसांसन हीं बढ़ जायेगी,

लाश जरेगी पलास के फूलन।।[1]

यहाँ कवि ने बसंतागम का मनोरम चित्रांकन किया है। जब बसंत ऋतु में वन पुष्पों से सज्जित होता है तब बिरहिणी नायिकाओं के श्वास उसांस में परिवर्तित हो जाते हैं। विरह से पीड़ित नायिका अपने प्रिय को संदेश भेजती है तथा पलाश के रक्तिम पुष्पों का संकेत देकर यह प्रकट करती है कि विरहाधिक्य में मरणोपरान्त मेरी चिता भी प्रज्वलित हो सकती है। इस स्थिति में प्रिय के आगमन की अनिवार्यता बढ़ जाती है।

यद्यपि काली कवि ने **'कवि कल्पद्रुम'** में भी आंशिक ऋतु वर्णन प्रस्तुत किया है, किन्तु अन्त में कवि ने ऋतु वर्णन पर पृथक रूप में लघु काव्य **'ऋतु राजीव'** की रचनाकर अपना ऋतु परिवर्तन के प्रति प्रेम प्रकट किया है। यह कृति आकार में लघु होते हुये भी वर्ण्य विषय एवं सघन अनुभूतियों की दृष्टि से अनुपम रचना है। वर्णन कौशल में अलंकारिकता एवं श्रृंगार रस की प्रधानता है।

लछमन ढीमर 'लाख'

'लाख' कवि की एक मात्र साहित्यिक कृति 'गंगा शतक' उपलब्ध हो सकी है। इनके काव्य का अध्ययन करने से इनका भक्त होना सुनिश्चित है। **'गंगाशतक'** इनकी आध्यात्मिक अनुभूतियों का विवरण मात्र नहीं है, उसमें तत्कालीन जनजीवन में व्याप्त सामाजिक प्रवृत्तियों की झलक भी विद्यमान है। यह रचना एक ओर जीवन दर्शन की गम्भीरता का प्रत्यक्षीकरण है तो दूसरी ओर उदात्त अनुभूतियों एवं मार्मिक अभिव्यक्तियों का प्रतिबिम्ब भी है। कवि ने धार्मिक चिन्तन पद्धति एवं तत्व–बोध का

1– ऋतु राजीव– काली कवि, पृष्ठ 20

समवेत चित्रण इस काव्य में प्रस्तुत किया है। शब्द, अर्थ, भाव और कल्पना को रचनात्मक दृष्टि देकर सामाजिक कल्याण को प्रमुखता प्रदान की गई है। इन्हीं प्रवृत्तियों को दृष्टिगत रखकर 'गंगाशतक' का काव्यात्मक अनुशीलन प्रस्तुत है।

गंगाशतक

लाख कवि को यह कृति भक्ति भाव समन्वित अटूट श्रृद्धा एवं दृढ़ विश्वास का सरलतम् निरूपण है। शास्त्रों एवं पुराणों में कर्म फल पर विशेष बल दिया गया है। यह भी उल्लिखित है कि *धर्मराज के अधीनस्थ कर्मचारी चित्रगुप्त, प्राणियों के शुभाशुभ कर्म का लेखा–जोखा रखते हैं। यमराज के दूत प्राणियों की जीवात्मा को मृत्युलोक से ले जाकर स्वर्ग या नरक में कर्म–फल भोग हेतु पहुँचाते हैं। धर्मराज को जब गंगा के पावन प्रभाव का अनुभव हुआ तो उन्होंने एक दूत के माध्यम से चित्रगुप्त के पास संदेश भेजा–*

दूत जमराज टेर भाषौ मजबूत मंत्र,
दोत कों पटक स्याही शित पे निचोर दे।
भनै कवि लाख जासौं नेकी वदी लिषै सिषै,
कलम कर तूत भरी ताकौ षत तोर दे।।
लेषे कै परेषे तज सट्टी रोजनामा कहा,
कहीं मान बही हू के संद बंद छोर दे।
जेते चित्रगुप्त हौंइ कागज तिहारे पास,
कोरे अनकोरे सब गंगा में बोर दे।।[1]

उक्त छन्द में कवि का गंगा के प्रति अटल विश्वास व्यंजित है। कवि का मन्तव्य है कि जब गंगा स्नान से अथवा गंगा के शुभ दर्शन से पापी समस्त पापों से मोक्ष प्राप्त कर सकता है तो उसके शुभाशुभ कर्मों के

1– गंगाशतक–(अप्रकाशित), लाख कवि, पृष्ठ 4

उल्लेख की कोई सार्थकता नहीं है। चित्रगुप्त की कोई उपयोगिता नहीं है। कवि तो यहाँ तक परामर्शदेता है कि सम्पूर्ण बहियांखातों, रोजनामचों तथा अभिलेखों को पृथ्वी में खोदकर गाड़ देना चाहिये। यमराज का कथन इस प्रकार है–

काहू की न नेकी वदी चित्रगुप्त लिषै अब,
काहू के न द्वार जाइ दूतन को ताड़ दै।
कहि जमराज नर्क चौरे कर डारो षोद,
छार–छार करकैं किवारन कौं फाड़ दै।।
पाप रुज भंगा करै गंगा के तरंगा तेज,
अंगा लग नंगा होत दंगा लाष छांड़ दै।
सट्टी को मट्टी कर रद्दी रोजनामा बही,
षाता षत जाइ षोदषाता महिं गाड़ दै।।[1]

यहाँ कवि नरक को खोदकर छार–छार करने तथा नरक के दरवाजे फाड़ने की बात कहकर नकर को अनुपयोगी सिद्ध करना चाहता है, क्योंकि उसे गंगा पर पूर्ण विश्वास है। भक्ति की पराकाष्ठा देखने योग्य है। कवि का मन्तव्य है कि जब समस्त पापियों का गंगा द्वारा उद्धार हो जायेगा तो नरक की कोई आवश्यकता ही नहीं होगी।

'लाख' कवि एक छन्द में विरक्ति का संदेश प्रसारित करते हुये प्रेरणास्पद परामर्श देते हैं तथा समस्त माया जाल को त्यागकर गंगा तट पर जाने की बात कहते हैं–

सै हौगे सरीर पीर जै हौ नहीं गंगतीर,
दंड पाप दीहन कौ तैं हीं भुगत है।
छोड़ कांम धांम उहां चल बिसराम कर,
प्रत प्रत रेतन पर बैठीं मुकत है।।[2]

1– गंगाशतक–(अप्रकाशित), लाख कवि, पृष्ठ 5

2– उपरिवत्, पृष्ठ 21

कवि गंगा तट चलने की सलाह देने मार्ग में गंगा का नाम स्मरण करने, गंगा की धार में प्रवेश करने तथा स्नान कर हाथ जोड़कर प्रार्थना करने पर विविध प्रकार के लाभों की बात कहकर एक आकर्षण उत्पन्न करता है। उदाहरण देखिये—

खलभल होत खरी पापन के वृन्दन में

चलवे की करै कहूँ कोहू जोःसलाह कौ।

कवि लाख देव आवै लै विमान दिव्य जै जै

मुख नाम कहिं लेत जब–जब राह कौ।

धार में धंसत होत वारि को परस अंग

छार–छार करै दृष्य दारिंद के दाह कौ।

ताते चल वोर गात जोर हात कहौ मन

साफ कर देत माफ गंग सौ गुनाह कौ।।[1]

गंगा स्नान का संकल्पकरने पर पापों में खलभली मच जाती है, देवता प्राणी के लिए विमान लेकर आ जाते हैं, धार में प्रवेश कर जल का स्पर्श मात्र करने पर दरिद्रता के सम्पूर्ण दृश्य नष्ट हो जाते हैं तथा निवेदन करने पर गंगा सौ अपराधों को भी क्षमा कर देती है। कवि अपने मन को हाथ जोड़कर प्रार्थना करने की प्रेरणा देता है।

'गंगाशतक' के समस्त छन्दों में कवि ने गंगा के महात्म्य को श्रृद्धापूर्वक वर्णित किया है। कहीं लहरों की, कहीं रेत की तो कहीं गंगा तट की अद्‌भुत महिमा का गायन करके कवि अपनी भक्ति को साकार करता है। गंगा तट की बालू के स्पर्श का महत्व दर्शाते हुये कवि कहता है— **'दरसत धार वार पातिक अपार जात देव सम रूप होत परसत बारू में'** अर्थात् देवता के समान सुन्दर स्वरूप, गंगा की बालू के स्पर्श मात्र से हो जाता है, तो कहीं— **'लगत सरीर जाकै नीर पीर नास करै हरि हर लोकन को गंगा सी नसैनी है'** कहकर गंगा को शिवलोक तथा विष्णु लोक तक जाने की सीढ़ी बतलाता है।

1— गंगाशतक–(अप्रकाशित), लाख कवि, पृष्ठ 22

कवि **'लाख'** अपनी हार्दिक प्रतीति व्यक्त करते हुये गंगातट पर चलकर मनमानी मुक्ति प्राप्त करने की प्रेरणा देते हैं–

छोड़त न काहे भ्रम ओढ़त वृथा को दुक्ख
सुक्ख को जतन कहौ करे जो कबूल है।
भनै कवि लाख व्यास नारद कपल अत्र
ढूढ़ कै पुरान गूढ़ कहौ मंत्र मूल है।।
अंग में तरंग लाग जाग भाग उठै भूर
माफ कर देइ साफ तेरी सब भूल है।
नासै भव सूल तूल भासैगी अलख जोत
मुक्त मनमानीं मिलै सुर सर कूल है।।[1]

उक्त छन्द में कवि भ्रमित व्यक्ति को व्यर्थ में दुख भोगने की व्यथा से मुक्ति दिलाने के लिए व्यास, नारद, कपिल, तथा अत्रि आदि मुनियों द्वारा खोजा गया मार्ग बतलाता है तथा गंगा के पावन कूल पर जाने का परामर्श देता है, जहाँ पहुँचकर समस्त भव–शूल नष्ट प्रायः हो जाते हैं। वहाँ तेरे सभी अपराध क्षमा कर दिए जावेंगे और तू स्वेच्छानुसार मोक्ष का भी वरण कर सकेगा।

कवि लाख कहते हैं कि गंगा की धार में पाप ऐसे जल जाते हैं जैसे भड़भूंजा के भाड़ में गर्म बालू से दाना भुन जाता है। **'भर–भर सब्द होत चट–पट बारू लगै भूंजत भुंजैना भरभूंजा जिम भार में'** कवि अपनी विपत्ति दूर करने की प्रार्थना करता है–

चिंता चकचूर कर पूर सुख सदन भूर
मैट होत मैट देउ खटका जो पेट कौ।
दौर कौन और ठौर संभु सिर मौर सुन
गंगा कर गौर मेरी मैट दे नसैट कौ।।[2]

1– गंगाशतक, पृष्ठ 27

2– उपरिवत् पृष्ठ 32

उक्त छन्द में यह भाव स्पष्ट है कि कवि की अधिक दयनीयता उसे सदैव तंग करती रही तभी तो वह व्याकुल होकर माँ गंगा से अपने पेट का खटका दूर करने की प्रार्थना करता है। कवि गंगा का परम भक्त है। गंगा के प्रति समर्पण भाव व्यक्त हुये हैं। निम्न पंक्तियों में—

तेरौ तज तीर नीर करके हार जाऊँ मैया

कौन कौ कहाऊँ गंग जग में हौं मांगनौ।[1]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 'गंगाशतक' कवि की सरस भक्तिपूर्ण रचना है। काव्यात्मक अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि कला एवं भाव दोनों दृष्टियों से यह कृति सफल है। यदि सघन अनुभूतियाँ हैं तो श्रेष्ठ अभिव्यक्ति भी है। यदि कविता में पूर्ण रसोद्रेक है तो अलंकारिक चमत्कार भी है। बुन्देली शब्दों का आकर्षक प्रयोग है तो कहीं—कहीं बुन्देलखण्ड की जीवनशैली की झलक भी प्रस्तुत है। भाव, भाषा, अनुभूति तथा अभिव्यक्ति की दृष्टि से यह रचना सर्वांगीण सुन्दर है।

1— गंगाशतक, पृष्ठ 33

चतुर्थ अध्याय :

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में साहित्य सर्जना (1851-1900)

- साहित्यकारों का सामान्य परिचय
- कृतियों का समीक्षात्मक विवेचन
- भाषा और शिल्प
- साहित्यिक मूल्यांकन

चतुर्थ अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में साहित्य सर्जना (1851–1900)

जनपद जालौन में विश्लेषणाधीन कालखण्ड की साहित्य सर्जना पर विचार करने से पूर्व उस समय की परिस्थितियों का सूक्ष्मावलोकन अनिवार्य हो जाता है, क्योंकि युग विशेष की परिस्थितियों का प्रभाव तात्कालिक साहित्य पर अनिवार्य रूप से पड़ता है। यह समय सामन्तवादी और पूँजीवादी दो विरोधी शक्तियों के पारस्परिक टकराव का था। समयोपरान्त सामंतवादी शक्तियाँ अपनी सारी ताकत लगाकर सदा के लिये समाप्त हो गईं। सामन्तवाद की सम्पूर्ण सम्भावनाएँ खत्म होने के बाद देश के प्रबुद्ध वर्ग ने नये सिरे से सोचना शुरू किया और अंग्रेज शासकों ने भी इस देश की परम्परा को समझकर आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का नवीनीकरण किया।[1] तत्कालीन रीतिकालीन साहित्य में घोर श्रृंगारिकता का प्राधान्य था। छन्द विधान और विन्यास में एक सी क्रमिक परिपाटी का विधान था।

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास–इ डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 427

1857 ई. के पश्चात् काव्य स्रोतस्विनी विविध धाराओं में प्रवाहित हो चली। साहित्य मानवीय संवेदनाओं से सम्बद्ध हो गया। रीतिकालीन काव्य परिपाटी की श्रृंखला विच्छिन्न हो गई। साहित्य में ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली का प्रयोग का प्रयोग प्रारम्भ तो हुआ, किन्तु राधा–माधव की भक्ति–वर्णन में तथा अन्य प्रेम–प्रसंगों में ब्रजभाषा के माधुर्य को कवियों ने पूर्णतः त्याग नहीं पाया।

हिन्दी साहित्येतिहास के काल विभाजन के अनुसार यह समय पुनर्जागरण काल के नाम से अभिहित किया जाता है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार– **'आलोच्य युग में जनचेतना पुनर्जागरण की भावना से अनुप्राणित थी। फलस्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों में न केवल अतिरिक्त सक्रियता थी, अपितु इन सब में गहन अन्त सम्बन्ध विद्यमान था।..... श्रृंगारिक रसिकता, अलंकरण–मोह, रीतिनिरूपण, प्रकृति का उद्दीपनात्मक चित्रण, प्रभृति रीतिकालीन प्रवृत्तियों का महत्व क्रमशः कम होता गया, और भक्ति एवं नीति को प्रमुख वर्ण्य विषयों के रूप में ग्रहण करने का आग्रह भी नहीं रह गया।'**[1] किन्तु जनपद जालौन की साहित्य सर्जना का सूक्ष्मावलोकन करने पर यह तथ्य दृष्टि में आता है कि साहित्य सर्जना की दृष्टि से किसी साहित्य–युग के तिरोभाव और आविर्भाव का सीमारेखांकन एक पेचीदा कार्य है। इस पुनर्जागरण काल में भी जनपद जालौन में अवतरित पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' ने श्रीमद्भागवत पुराण के अनुकरण पर श्रीराधा– माधव की भक्तिरस पूर्ण प्रेममयी ललित–लीलाओं को मुख्य प्रतिपाद्य बनाकर **'रत्नेश शतक'** जैसे ग्रन्थ की रचना की, जिसमें भक्ति के साथ श्रृंगार का भी मनोहारी वर्णन है।

पं. शिवचरनलाल 'सारस्वत' (1867–1936 ई.) की रचनाओं में समाज सुधार तथा स्त्री शिक्षा को प्रमुखता दी गई है। **'सामयिक गीतावली'** तथा **'प्रेम प्रभाव'** इनकी दो कृतियाँ हैं। मिश्रबन्धु ने **रोशनसिंह बंगरा (सं. 1930वि.)** तथा रामचरन लाल का उल्लेख किया है। रोशनसिंह की कृति

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास–इ डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 449

'वेदसार' बताई गयी है। उन पर राधाबल्लभ सम्प्रदाय का प्रभाव था। कोंच नगर में जन्मे **पं. रामचरणलाल** की **'रामायण पचासा'** तथा सनातन धर्म दर्पण' दो कृतियों का उल्लेख मिलता है। कोंच के ही निवासी **पं. नाथूराम शुक्ल 'सेवक' (जन्म सं.1941)** की रचनाओं में **सीतागुण मंजरी, मंगल विनोद, बजरंग विजय** तथा कुछ स्फुट–कविताएँ सम्मिलित हैं। **मुंशी घनूसिंह हरदोई गूजर (जन्म 1890 ई.) 'वीरेन्द्र'** उपनाम से सामयिक कवितायें लिखते थे। **'दुखिया किसान'** नामक काव्य ग्रंथ के कुछ अंश जिला जालौन के एज्यूकेशनल गजट में छपे थे। इनमें उस समय के कृषकों की दुरावस्था का कारुणिक चित्रण है।

कोंच नगर में लोकगीतों के माध्यम से अपनी काव्य प्रतिभा का वैभव बिखेरने वाले **मोहनलाल दाऊ** तथा **मन्नूलाल चौधरी** भी हुये हैं, इन्होंने विशेषतः फड़ साहित्य के क्षेत्रान्तर्गत सराहनीय कार्य किया है। **द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र' कालपी (1889–1943ई.)** जनपद के गणमान्य एवं प्रतिष्ठित कवियों में थे, जिन्होंने देश के प्रारम्भिक कवि सम्मेलनों में मंचों के माध्यम से जन–जागरण किया था। आप हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला, गुजराती, उर्दू तथा संस्कृत भाषाओं के ज्ञाता थे। साहित्यालंकार, राजकवि और कवीन्द्र की उपाधियों से विभूषित **रसिकेन्द्रजी, काली कवि** के शिष्य और **राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त** के बहनोई थे। **पं. बेनीमाधव तिवारी** (आटा) जनपद में स्वतंत्रतापूर्ण कांग्रेस के आधार स्तम्भ थे। राष्ट्रीय जनजागरण तथा अछूतोद्धार विषयक इनकी रचनाएँ चर्चित रही हैं। इनकी कविताओं में व्यंग्य का अच्छा पुट है। आपने साप्ताहिक **'देहाती'** तथा **'हलचल'** समाचारपत्रों का सम्पादन भी किया था।

पं. कालीचरण दीक्षित 'फणीन्द्र' कोंच (1893–1942 ई.) संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे। **'संस्कृतम् अयोध्या'** में उनकी संस्कृत रचनायें प्रायः छपती रहती थीं। वहाँ से इन्हें **'काव्व सूरिः'** की उपाधि से विभूषित किया गया था। हिन्दी काव्य क्षेत्र में बड़भागी केवट, शत्रु संहार, श्याम उलाहना, तथा राधा रहस्य इनकी प्रसिद्ध कृतियाँ थीं। सीता–सतीत्व नाटक के अतिरिक्त

अन्य स्फुट रचनायें भी आपने लिखीं। रख–रखाव एवं साहित्यिक अभिरुचि के उत्तराधिकारियों के अभाव में इनकी कोई रचना सुरक्षित नहीं हैं।

पं. रामनाथ चतुर्वेदी 'विप्र' (सन्1896–1935ई.) संस्कृत के उद्‌भट विद्वान थे। **'संस्कृतम् अयोध्या'** में इनकी स्फुट रचनायें भी प्रकाशित हुयीं हैं। आपने संस्कृत की **'रसमंजरी'** तथा **'शिशुपाल बध'** का पद्यानुवाद किया है। ब्रजभाषा के स्फुट छन्द भी आपने लिखे हैं। **भगवानदास भट्ट** इटौरा (जन्म सन् 1896 ई.) की दो कृतियाँ श्यामासौन्दर्य तथा कीर्तन लहरी में कृष्ण विषयक छन्द हैं। **रामसहाय पटसारिया**, कोंच ने **'भारत–भारती'** की शैली पर **'समुद्बोधिनी'** लिखकर अतीत को वर्तमान से जोड़कर भविष्य की दिशा निर्दिष्ट की तथा राष्ट्रीय जन–जागरण हेतु प्रेरणा प्रदान की।

पं. मुरलीधर शर्मा खेमरिया (जन्म सन् 1899ई.) जालौन के अच्छे कवि हुये हैं। आप संस्कृत और हिन्दी दोनों में ही अधिकार पूर्वक लिखते थे। **ब्रजमोहन वर्मा** (1900–1937ई.) स्वर्गीय कृष्ण बल्देव वर्मा के भतीजे थे। आप भाषा और साहित्य के मर्मज्ञ तो थे ही साथ ही विविध साहित्येतर विषयों का ज्ञान भी आपको था। आपको हिन्दी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त उर्दू, बंगला और मराठी का भी अच्छा ज्ञान था। आपने अपने साहित्यिक जीवन में लगभग 30 निबन्ध लिखे हैं।

डॉ. आनन्द (मन्नूराव आनन्द)–(जन्म सन् 1900ई.) जालौन जनपद के साहित्याकाश में जाज्वल्यमान नक्षत्र के समान थे। जनपद की साहित्यिक बुलन्दियों को शिखर तक पहुँचाने में डॉ. आनन्द अग्रगण्य थे। टीकमगढ़ की **'केशव साहित्य परिषद्'** में प्रथम बार आपकी रचना पुरस्कृत हुयी थी। आपका **'झाँसी की रानी'** महाकाव्य अन्य ओजस्वी महाकाव्यों में श्रेष्ठ रहा तथा इसके अतिरिक्त **एम.एल.ए.राज, दारुलशफा, सन् अड़तालीस, चीन** और **पाकिस्तान पब्लिक इन्ट्रेस्ट** आदि प्रमुख रचनाएँ हैं। हिन्दी कवि सम्मेलन मंच डॉ. आनन्द का चिर ऋणी रहेगा।

उपर्युक्त साहित्यकारों के संक्षिप्त विवरण के बाद कुछ ऐसे सशक्त रचनाकार भी हो सकते हैं जो पिछड़े क्षेत्रों में जन्मे पले हों तथा प्रकाश में न आ सके हों। इस प्रकार जनपद जालौन की विशाल साहित्यक परम्परा में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के जिन साहित्यकारों का प्रकाशित अथवा अप्रकाशित साहित्य उपलब्ध हो सका है, उनमें **रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'**, **कृष्णबलदेव वर्मा**, **रसिकेन्द्र**, **बेनीमाधव तिवारी** तथा **डॉ. मन्नूराव 'आनन्द'** प्रमुख हैं।

सामान्य परिचय एवं व्यक्तित्व

पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'

पण्डित रामरत्न शर्मा **'रत्नेश'** का जन्म जनपद जालौन की ऐतिहासिक नगरी, वेदव्यास की जन्मस्थली यमुना के सुरम्य तट पर स्थित कालपी नगरी में मार्गशीर्ष शुक्ल सं. 1918 (1961ई.) अष्टमी चन्द्रवार को हुआ।[1] आपके पिता पं. श्री गिरधारीलाल गुबरेले सनाढ्य ब्राह्मण थे तथा क्षेत्रीय विप्र समाज के बहुप्रतिष्ठित एवं प्रतिभावान विद्वानों में पांक्तेय थे।

'रत्नेश' एक सरल, सहानुभूतिशील कोमल एवं उदार व्यक्तित्व वाले प्रतिभावान कवि थे। साधुवेश तथा सौम्य आकृति के साथ सरसता उनके स्वभाव में बसी थी। रसपूर्ण वार्तालाप तथा रसानुभूति युक्त काव्य पंक्तियों से श्रोताओं को अभिसिंचित करना, रसविभोर करना उनका सहज कार्य था। इन्हीं विशेषताओं के कारण आपको रसिक समाज कानपुर का सभापति चुना गया।

रत्नेश की आकर्षक वेशभूषा, चंदन मण्डित उच्च ललाट दाढ़ी मूँछों भरा चेहरा, कोमल किन्तु अन्वेषिणी दृष्टि, सिर पर राजपुरोहित जैसी पगड़ी उनके गरिमामय व्यक्तित्व को द्विगुणित करते थे। आपने अपने प्रौढ़तम ग्रन्थ **'रत्नेश शतक'** के अन्त में **'नम्र निवेदन'** शीर्षक में लिखा है–

1– जालौन जनपद साहित्य और पत्रकारिता–श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त'कुमुद' पृ. 10

तीर में कलिन्दजा के कालपी नगर एक,
विप्रन को वृन्द जामें अति गुणवान है।
द्विज गिरधारी लाल ताही में सनाढय भए,
पायो बहु देशन में जिन सनमान है।
पुत्र तिन ही को रामरत्न 'रत्नेश' नाम,
कविता प्रकाशिवे कों ठानो जिन ठान है।
रीझेंगे रसिक तौ कहेंगे कविताई नातौ,
राधिका ब्रजेश को अनूप गुण गान है।[1]

उपर्युक्त अन्तर्साक्ष्य से उनका जन्म स्थान, पिता का नाम, कुलगोत्र तथा काव्य सृजन की प्रवृत्ति का द्योतन होता है, साथ ही यह भी प्रमाणित होता है कि वे राधा–कृष्ण के अनन्य भक्त थे। किन्तु अन्तिम दो पंक्तियों में आचार्य भिखारीदास की **'आगे के सुकवि रीझि हैं तो कविताई, न तु राधा कन्हाई सुमिरन को बहानो है'** पंक्ति का भावानुवाद देखकर यह प्रतीत होता है कि श्रृंगारिक वर्णन में अपनी भक्ति–भावना को आरोपित कर कवि द्वारा रीतिकालीन परम्परा का ही अनुसरण किया गया है।

कृष्ण बल्देव वर्मा

श्री बाबू कृष्णबल्देव वर्मा का जन्म सं. 1927 वि. में वेद व्यास जी की जन्म भूमि कालपी में हुआ था। आपके पूज्य पिताजी का शुभ नाम लाला कन्हईप्रसाद जी खत्री था। वर्मा जी के पूर्वज प्रायः दो सौ वर्ष पूर्व पंजाब से आकर कालपी में बसे थे।[2] आपके परिवार में धर्म के प्रति आस्था, ब्राह्मणों के प्रति सम्मान तथा पूज्यभाव विद्यमान था। वर्मा जी के पिता धार्मिक ग्रंथों का नित्य पारायण अखण्ड श्रृद्धा एवं विश्वास से करते थे। उन्हीं के अनुकरण पर वर्मा जी को रामचरित मानस एवं रामचंद्रिका के प्रति अटूट आस्था बचपन से ही हो गयी थी।

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्प शर्मा, पृष्ठ 52

2– बुन्देल वैभव– भाग–1, गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', पृष्ठ 710

लखनऊ में शिक्षा प्राप्त करते समय आपकी मित्रता लखनऊ म्यूजियम के क्यूरेटर जर्मन विद्वान **'प्यूरर'** से हुई। इनके सतसंग से आप में पुरातत्व विज्ञान और इतिहास के प्रति विशेष अनुराग उत्पन्न हो गया था। यही अनुराग आगे चलकर बुन्देलखण्ड विषयक खोज में पुष्पित–पल्लिवित हुआ।[1]

वर्मा जी मध्यकालीन इतिहास के विद्वान थे। बंगाल के प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता राखालदास वन्द्योपाध्याय आपसे अत्यधिक प्रभावित थे। साहित्य–संरचना की दृष्टि से आपको निबन्ध क्षेत्र में विशेषज्ञता प्राप्त थी। आपके श्रेष्ठ निबन्ध काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सुधा, सरस्वती तथा विशाल भारत में प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हुये हैं। बुन्देल वैभवकार के अनुसार– वर्मा जी प्रायः 25 वर्ष तक लगातार जालौन जिले के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्य और कालपी म्यूनिसिपैलिटी के सदस्य रहे। तत्पश्चात् सर्व प्रथम गैर सरकारी म्यूनिसिपिल चेयरमेन भी आप ही हुये और बहुत वर्षों तक बड़ी ही योग्यता पूर्वक उस कार्य को आपने निबाहा। आप ऑनरेरी मजिस्ट्रेट भी रहे हैं। इतना अधिक कार्य आपके जिम्मे था, फिर भी आपने अपने साहित्य सेवा के क्रम को निरन्तर जारी रक्खा। **'सरस्वती'** आदि पत्रिकाओं में आपके सदैव ही उच्चकोटि के लेखादि निकलते रहते थे। आपके सन् 1901 ई. की **सरस्वती (भाग दूसरा संख्या 8 तथा 9)** में **'बुन्देलखण्ड पर्यटन'** शीर्षक लेख से प्रभावित होकर स्वं. ओरछा नरेश महाराजा श्री प्रतापसिंह जू देव बहादुर ने आदर पूर्वक आपको बुलाया था और आपके परामर्श ही के अनुसार ओरछा की प्राचीन इमारतों की रक्षा का प्रबन्ध कर दिया था।[2]

वर्मा जी पत्रकारिता के क्षेत्र में भी अग्रगण्य थे। लखनऊ से

1– सबकी खैर खबर–जालौन जनपद के साहित्यकार–विशेषांक, डॉ. रामशंकर द्विवेदी, पृष्ठ.8

2– बुन्देल वैभव–भाग 1, गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', पृष्ठ 712–713

आपने **'विद्या विनोद समाचार'** साप्ताहिक पत्र निकाला था। काशी में रहकर भी आप बड़ी सफलतापूर्वक पत्रकारिता कराते रहे। **'काशी नागरी प्रचारिणी सभा'** के संस्थापकों में आप प्रमुख थे। हिन्दुस्तानी एकेडमी प्रयाग से प्रकाशित पत्रिका **'हिन्दुस्तानी'** के सम्पादक मण्डल में भी आप सक्रिय रहे हैं। वर्मा जी के विशाल अध्ययन और अद्भुत स्मरण शक्ति से समस्त साहित्यकार, नेता तथा समाजसेवी प्रभावित रहते थे। **पण्डित मदनमोहन मालवीय** तथा **पं. मोतीलाल नेहरू** उनके अत्यंत घनिष्ठ थे। **पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी** तथा **श्री रामानन्द चटर्जी** से आपका अच्छा सम्पर्क था।

आपकी धर्म पत्नी का असामयिक निधन उस समय हुआ जब आप तीस वर्ष के थे। विधुर जीवन व्यतीत करते हुये आप वृहत् परिवार के पोषण में अनुरक्त रहे। सम्पूर्ण जीवन साहित्य के प्रति सेवा समर्पित करते हुये रामनवमी सम्वत्1988 विक्रमी को काशी में पुष्य सलिला भागीरथी के तट पर आपका स्वर्गवास हुआ।

श्री द्वारिका प्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र'

श्री **'रसिकेन्द्र'** जी का जन्म वेदव्यास की तपस्थली यमुना नदी की पावन लहरों के संस्पर्श से पवित्र, प्रसिद्ध तीर्थ कालपी के ख्याति प्राप्त धनाढ्य वैश्य परिवार में सन् 1889 ई. में हुआ । आपके माता–पिता धार्मिक–रुचि सम्पन्न कर्मकाण्ड के पक्षधर तथा ब्राह्मणों के प्रति पूज्य भाव रखने वाले थे। आप भागवत, गीता तथा रामायण आदि धर्म–ग्रंथों के पठन श्रवण तथ चिंतन में व्यस्त रहकर भी अपने व्यवसाय के प्रति सतर्क तथा सचेष्ट रहते थे। आपकी माँ सत्यनारायण व्रत–कथा का मासिक आयोजन अत्यन्त श्रृद्धा एवं विश्वास सहित किया करती थीं। रामचरित मानस के करुण प्रसंगों को सुनकर उनके नेत्र अश्रूपूरित हो जाते थे।

'रसिकेन्द्र' में शिक्षा समाप्ति के उपरान्त साहित्यिक अभिरुचि जाग्रत हुयी। नगर के प्रबुद्ध साहित्यिक वर्ग का सान्निध्य स्वाध्याय तथा

सत्साहित्य का अध्ययन प्रेरणा के सूत्र बने। इस तरह **रसिकेन्द्र** काव्य–सृजन में व्यस्त रहकर काव्यगोष्ठियाँ कराने लगे। आप जब काव्य–पाठ करते थे, काव्य रस की सरस स्रोतस्विनी प्रवाहित हो उठती थी। ओज गुण सम्पन्न कविता के सर्जक के रूप में आपकी ख्याति थी।

'रसिकेन्द्र' जी **काली कवि** के प्रिय शिष्य तथा **राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त** के बहनोई थे। दोनों कवि–दिग्गजों का व्यापक प्रभाव इन पर था। घनाक्षरी आपका प्रिय छन्द था। आपके स्फुट गीत, दोहे, समस्यापूर्तियाँ तथा सूक्तियाँ भी उपलब्ध हैं। कवि गोष्ठी में **'रसिकेन्द्र'** हों और रस की सरिता न उमड़े, यह असम्भव था।

आपका व्यक्तित्व आकर्षक, वाणी सरस एवं मधुर थी। उच्च स्तरीय रहन–सहन, लहजेदार बात–चीत तथा हँसी–मजाक उन्हें प्रिय था। सौम्य स्वभाव, मृदुता और सरलता की प्रतिमूर्ति **रसिकेन्द्र** हृदय से अत्यन्त दयालु थे। अतिथि सत्कार में तो कोई मुकाबला ही नहीं था। कवियों का जमावड़ा इनके यहाँ लगा ही रहता था।

जिस कालपी में, आचार्य श्रीपति मिश्र, कवि ब्रह्म, कृष्णबल्देव वर्मा तथा ब्रजमोहन वर्मा जैसी उच्चकोटि की प्रतिभाओं ने जन्म लिया, उसी श्रृंखला में रसिकेन्द्र ने जन्म लेकर ज्ञान–गंगा को आगे बढ़ाते हुये कालपी को धन्य कर दिया।

पं. बेनी माधव तिवारी

पं. बेनी माधव तिवारी का जन्म अषाढ़ शुक्ल 14 उत्तराषाढ़ नक्षत्र सन् 1890 ई. में आटा ग्राम में हुआ। सम्माननीय तिवारी जी कुशल कवि, सिद्धहस्त लेखक, प्रतिभा सम्पन्न राजनीतिज्ञ और दूरदर्शी पुरुष थे। सभा चातुरी और वाक्पटुता के लिये उनकी प्रतिभा अविस्मरणीय है। आप मर्मज्ञ कवि के साथ मर्मभेदी व्यंग्यकार भी थे। तिवारी जी की हाजिर जबाबी जब उनकी विनोद प्रियता के रस में सनी हुयी आस–पास बैठे हुये

मित्रों पर बौछारें करती, तो रोम–रोम खिल जाता है। आप भाषण कला में निष्ठात् तो थे ही, साथ ही अद्भुत सूझ–बूझ एवं अपार साहस के प्रतीक भी थे। साहस तो उनमें कूट–कूटकर भरा था। तिवारी जी एक कुशल अभिनेता भी थे। उरई की रामलीला में धनुष–यज्ञ के दिन क्रोधी मुनि परशुराम का उनका अभिनय भुलाया नहीं जा सकता।

श्री तिवारी जी की फलित ज्योतिष और गणित दोनों में ही बड़ी आस्था थी और उनका ज्ञान भी चकित कर देने वाला था। ज्योतिष के बड़े–बड़े विद्वान भी उनकी प्रतिभा के कायल हो जाते थे। जितने आप हास्य प्रिय थे उतने ही गम्भीर थे। शासकों के बीच में एवं बड़े नेताओं की गोष्ठी में आपकी भावभंगिमा, परामर्श शक्ति कम महत्वपूर्ण नहीं होती थी। जटिल उलझनें आप बीरबल की भाँति क्षणमात्र में सुलझा देते थे।

आपका हँसमुख चेहरा, विनोदपूर्ण वार्ताएँ, तथा सुमधुर भाषण शैली आकर्षण का केन्द्र बिन्दु थीं। व्याख्यान दाताओं में कई जिलों में आपके समान कोई दूसरा था ही नहीं। सम्पादन कला में वे सिरमौर थे। कविताएँ इतनी आकर्षक होतीं कि श्रोता तन्यम होकर बार–बार सुनाने का आग्रह किया करते। अपना चित्र, दर्पण में अपना मुँह देखकर, भिन्न–भिन्न आकृतियों में बनाकर अच्छे चित्रकार को भी मात करते थे। सदैव प्रसन्न रहना भी आपकी कला थी। छोटे से छोटे व्यक्तियों से मिलने में आप कभी संकोच न करते थे। आपकी पहेलियाँ भी बड़ी प्रसिद्ध थीं, जो हँसाने के लिए औषधि का काम करतीं थीं।

'स्वर्गीय तिवारी जी उच्चकोटि के मेधावी पुरुष थे। अनुमानतः सन् 1924 में आप पर दफा 124–अ ताजीरात हिन्द का एक मुकद्मा उनके एक व्याख्यान पर जि. मजिस्ट्रेट श्री देशाई के न्यायालय में चला था। आपने अपने मुकद्मे की पैरवी तथा जिरह स्वयं की थी। मुझे विश्वास है कि इतनी उच्चकोटि की जिरह फौजदारी वकालत में प्रथम श्रेणी का अभ्यस्त वकील भी नहीं कर सकता था।[1]

1– साप्ताहिक हलचल– तिवारी विशेषांक– उरई, अक्टूबर 1953, लेखक–पं. श्रीधरदयाल दुवे।

समाज सुधार उनके जीवन का ध्येय था। अपनी रचनाओं के माध्यम से सामाजिक कुप्रथाओं जैसे– अछूत समस्या, पक्षपात, अन्याय, असंगठन और निर्धनता के विपरीत जन जागृति तथा समस्याओं का उन्मूलन उनका मुख्य उद्देश्य था। धैर्य, सहनशीलता तथा क्षमता के तिवारी जी समुद्र थे। उनके विवधि सद्गुणों को रेखांकित करते हुए पं. रघुवीर सहाय तिवारी की निम्न पंक्तियाँ देखने योग्य हैं–

''पंडित प्रकाण्ड, राजनीति के महानाचार्य,
कवि–कुल–शिरोमणि, शुचि, वीर व्रत–धारी थे।
हरिजन–उद्धारक, सुधारक कुरीतियों के,
भारत जननि की भव्य–भावक पुजारी थे।
समरांगण स्वतंत्रता के सफल सेनानी अरू,
धैर्यवान धवल सु–ख्यात सु–विचारी थे।
काल और कर्म की कसौटी पै कसे गये,
कर्मठ अनूठे– अद्वितीय श्री तिवारी थे।''

उपर्युक्त पंक्तियों को पढ़कर कोई भी व्यक्ति उनके महानतम् व्यक्तित्व, दृढ़ संकल्प एवं प्रकाण्ड पाण्डित्य को स्वीकार किये विना नहीं रह सकता। स्व. तिवारी जी गांधी जी के समर्थक थे। इसलिए बंग–भंग आन्दोलन तथा असहयोग आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेते रहे। साहित्य में पर्याप्त रुचि थी। उनकी रचनायें किसानों तथा जनसाधारण को अत्यधिक प्रिय थीं। तिवारी जी जहाँ कहीं भी रहे और जो कुछ भी किया उस पर उनकी छाप रहती थी। उनका सारा जीवन एक व्यवस्था का नमूना था। एक बार **श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'** ने उन्हें प्रेरणा देते हुए लिखा था– 'उत्तेजना का प्रसार आपका ध्येय नहीं है। आप तो भारतीय मानवको अपना स्वरूप पहिचनवाने का प्रयत्न कर रहे हैं। सेवा, त्याग निष्ठा और श्रद्धा के बल पर ही भारतीय समाज आगे बढ़ सकता है। भगवान आपका मंगल करे'। इस प्रकार विद्वानों से प्रेरणायें प्राप्त कर अपनी कार्य प्रणाली तथा

गतिविधियों के प्रति सचेष्ट रहना उनका मुख्य ध्येय था। स्व. तिवारी जी गरिमा एवं प्रतिभावान व्यक्तित्व से प्रभावित हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री निधि द्विवेदी ने उनके मरणोपरान्त श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए लिखा था–

'पूज्य तिवारी 'बेनीमाधव' सकल सद्गुणों के अवतार।
पत्रकार, कवि, नेता, वक्ता राजनीति–प्रतिभा आगार।।
दुर्लभ वह व्यक्तित्व कर सके जो उनके अभाव की पूर्ति।
जनगण–मन के सिंहासन पर शोभित है उनकी प्रतिमूर्ति।।'

ऐसे अप्रितिम व्यक्तित्व थे स्वर्गीय बेनीमाधम तिवारी, जिन्होंने आजीवन एक कुशल संगठक, कुशाग्र बुद्धि कवि एवं लेखक, योग्य नेता एवं चतुर वक्ता का दायित्व निर्वहन किया। 10 दिसम्बर 1952 को लगभग 11 बजे रात्रि में आप पार्थिव शरीर त्यागकर जीवनमुक्त हो गये। 'जनपद जालौन पर स्व. तिवारी जी की अमिट छाप बनी रहेगी। वह वर्तमान की गोद में बैठे भविष्य की रागिनी को झंकृत करते रहेंगे। उनका जीवन संषर्षों पर विजय और लगन की एकाग्रता की ओर सदैव ही लोगों को प्रोत्साहित करता रहेगा।[1]

डॉ. आनन्द (मन्नूराव)

ओज और राष्ट्रीय चेतना के प्रखर व्यक्तित्व सर्वतोमुखी प्रतिभा सम्पन्न कवि, संवेदनशील भावों के स्फूर्तिमान उत्कर्ष **डॉ. मन्नूराव 'आनन्द'** अपनी प्रवाहपूर्ण शैली, सजग चिंतन एवं अनूठी काव्य–प्रतिभा के कारण काव्य क्षेत्रान्तर्गत सम्माननीय स्थान के अधिकारी हैं। 25 अगस्त सन् 1900 में बुन्देलखण्डान्तर्गत जालौन जनपद में जन्मे पले और बढ़े और जीवन के अन्तिम समय तक वे इस अंचल के साहित्यिक वातावरण को अपनी अदम्य काव्य प्रतिभा से चेतना प्रदान करते रहे।

1– साप्ताहिक हलचल– तिवारी विशेषांक– अक्टूबर 1953, लेखक–पं. रामेश्वरदयाल

डॉ. आनन्द काव्य–सरोवर में उपजे उस अमूल्य कविरत्न के समान थे, जिन्हें काव्य प्रतिभा विरासत में मिली थी। इनके पिता पं. गोविन्दराव स्वयं एक उच्चकोटि के विद्वान एवं आशुकवि थे। इनके लघुभ्राता चाचा भगवानदास एक अच्छे तबला वादक तथा मंचीय कवि थे। डॉ. आनन्द अत्यन्त सरल, सहज एवं आकर्षक व्यक्तित्व के धनी, विनयशील एवं स्पष्टवादी थे। मजबूत कद–काठी, विशाल भ्राल, हल्की नीली आँखें, हँसमुख चेहरा तथा गौरवर्ण इनके व्यक्तित्व के अभिन्न अंग थे। आप एक कुशल वक्ता, समाजसेवी तथा स्वतंत्रता सेनानी भी थे। काव्य साधना के क्षेत्र में जनपद में अग्रणी कवि डॉ. आनन्द की प्रशंसा में जितना भी कहा जाय, कम है। जिस प्रकार वैश्वानर की प्रदीप्ति के बारे में कुछ कहना उसके तेज को धूमिल करना है, उसी प्रकार डॉ. आनन्द की काव्य प्रतिभा के बारे में कुछ कहना उनके कौशल और निरूपण–क्षमता पर प्रश्नचिह्न लगाना है।

डॉ. आनन्द ने सचमुच में काव्य–साधना के द्वारा इस जनपद का नाम अखिल भारतीय कवि सम्मेलनों में पहुँचाया। टीकमगढ़ की **'केशव साहित्य परिषद्'** में आपकी पहली रचना पुरस्कृत हुयी थी। आपकी रचनाओं में क्रान्ति और वीरता का स्वर प्रमुख है। **'झाँसी की रानी'** महाकाव्य के कारण आपको विशेष ख्याति मिली।[1] अखिल भारतीय कवि सम्मेलन मंच पर पचास वर्षों तक अपने काव्य–वैभव को बिखेरने वाले डॉ. आनन्द के **'झाँसी की रानी'** महाकाव्य ने काव्य मर्मज्ञों को आकर्षित किया तथा पं. बेनीमाधव तिवारी को अपनी **'उर्दू एकादशी'** में निम्न पंक्तियाँ लिखने को विवश कर दिया–

'लाखों में एक हैं छन्द आनन्द के।

झाँसी की रानी की क्रान्ति कहानी।।[2]

1– सबकी खैर खबर, जालौन जनपद के साहित्यकार विशेषांक– डॉ. रामशंकर द्विवेदी, पृष्ठ 8

2– उरई एकादशी–पं. बेनीमाधव तिवारी, साप्ताहिक हलचल–उरई, तिवारी विशेषांक, अक्टूबर 1953

डॉ. आनन्द के जीवन की अनुभूतियाँ जीवन संघर्ष के साथ एकाकार होकर उनके काव्य में प्रतिबिम्बित हुयीं हैं। इनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व आनन्द का ऐसा पुंजीभूत स्वरूप था, जिसके सम्पर्क में आते ही निराशा का कुहासा स्वतः ही निर्मूल हो जाता था। 'हिन्दी कवि सम्मेलनों का मंच राष्ट्रीय ख्याति के ओजस्वी कवि डॉ. आनन्द का बहुत ऋणी है। वे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी रहे तथा उन्होंने **'साप्ताहिक दुनाली'** का संपादन किया। **'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई'** महाकाव्य ने अमर बना दिया।[1]

डॉ. आनन्द के अमर महाकाव्य **'झाँसी की रानी'** की महत्ता को प्रतिपादित करते हुये बम्बई में **'कवितायन'** संस्था के संस्थापक श्री निधि द्विवेदी ने अपार जन समूह के बीच इस कृति को सम्मान और आदर दिया तथा हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. रामकुमार वर्मा तो यहाँ तक कहते हैं कि **'भाव और भाषा की एकरूपता इतनी प्रभावशालिनी है कि पाठक अथवा श्रोता तन्मयता जैसे मंत्र शक्ति से कवि के समक्ष विनत हो जाते हैं। एक–एक शब्द भावों की ऐसी संजीवनी शक्ति से अभिषिक्त है कि घटनाएं स्वयं बोलने लगती हैं और लक्ष्मीबाई का चित्र नेत्रों के सामने साकार हो उठता है।''** स्वतंत्रता के पच्चीसवें वर्ष के अवसर पर स्वतंत्रता संग्राम में स्मरणीय योगदान के लिए राष्ट्र की ओर से आपको प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने 15 अगस्त 1972 को ताम्र पत्र भी भेंट किया। इस प्रकार अपने काव्य जीवन में अपार ख्याति एवं अगणित शुभ कामनाओं को प्राप्त करके तथा अखिल भारतीय स्तर पर अपनी यश–पताका फहराते हुये जालौन जनपद का जाज्वल्यमान काव्य–दीप **सात अक्टूबर उन्नीस सौ सतहत्तर** को सदैव–सदैव के लिये शान्त हो गया।

1– जालौन जनपदः साहित्य और पत्रकारिता – श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद', पृष्ठ 13

रचनाएँ

पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'

'रत्नेश' व्याकरण, ज्योतिष एवं आयुर्वेद के प्रकाण्ड पण्डित थे। **'रत्नेश शतक'** इनकी प्रौढ़तम कृति है। इस कृति में आपने राधा–कृष्ण की भक्ति तथा रसपूर्ण प्रेममयी ललित लीलाओं का मधुर एवं श्रृंगारपरक चित्रण किया है। इसमें कृष्ण नाम की अपार महिमा का गायन है जिसे आगम और निगम भी नहीं बखान सके। जिसके परम् स्वाद के समक्ष सुधा भी फीका पड़ जाता है। दाख भी राख जैसा तथा कंद भी वे स्वाद हो जाता है। शेष, महेश तथा सरस्वती भी जिनका गुणगान करते थक गये, समस्त संसार के वन्दनीय नंद–नंदन जिन कीरति किशोरी राधिका के पदारबिन्द की वंदना करते हैं। ऐसी महारानी राधा की रमणीयता रत्नेश के नेत्रों में समा गई थी। राधा के पद पंकज की गरिमा का वर्णन करते वे लिखते हैं–

'बन्दै नन्द नन्दन अनन्द भरे आठों याम पंकज बरन राधे रावरे चरन हैं।'

'रत्नेश शतक' के अतिरिक्त आपने **'राधा सुधा निधि'** का भाष्य भी लिखा है। दिनचर्या, कर्म–पद्धति, ध्वनि–व्यंजना, नायिका भेद, सनाढ्य वंशावली आपके अप्रकाशित ग्रन्थ हैं तथा अनुपलब्ध हैं। इनका **'रत्नेश शतक'** ही उपलब्ध है, जिसका साहित्यिक विवेचन आगे किया जावेगा। आपके भक्ति रस से सराबोर कुछ दोहे एवं पद भी उपलब्ध हैं।

कृष्ण बल्देव वर्मा

वर्मा जी अंग्रेजी, संस्कृत, फारसी, उर्दू, हिन्दी और बंगला के अच्छे ज्ञाता थे। आप मराठी तथा अन्य अनेक भाषाओं के जानकार भी थे। शिला लेखों की लिपियाँ पढ़ने में वे सिद्धहस्त थे। अनवरत साहित्य साधना में संलग्न रहते हुये वर्मा जी ने **भूर्तहरि राज–त्याग, प्रेतयज्ञ नाटक** तथा **छत्रप्रकाश** जैसे ग्रंथों का प्रणयन किया। केशवदास जी आपके आराध्य कवि

थे। आपने केशव साहित्य का सम्पादन भी किया, जिसमें रामचन्द्रिका तथा विज्ञान गीता विशेष उल्लेखनीय हैं। **'आप कवीन्द्र केशव की कृतियों के विशेष जानकार थे। हिन्दी संसार में वे इसके लिये प्रमाण माने जाते थे।** केशव से आप बहुत प्रभावित थे। हमेशा यह कामना करते थे कि बुन्देलखण्ड में केशव जैसे कवि उत्पन्न हों।[1]

वर्मा जी की कविताएँ बड़ी ही सरस एवं सरल होती थीं। महाराज शिवाजी ने फारसी भाषा में एक पत्र भी श्री महाराज जयसिंह को भेजा था, उसका हिन्दी भाषा में आपने जो पद्यानुवाद किया था, वह विशेष उल्लेखनीय है। वह पद्यानुवाद वैशाख कृष्ण 14 संवत् 1985 के हिन्दू मंच कलकत्ता के अंक में प्रकाशित हुआ था।

आपने **'वीर विलास'** की भूमिका लिखी जिसका साहित्यकारों ने काफी सम्मान किया। यों तो आपके शोध–पूर्ण आलेख **'सुधा' 'सरस्वती'** तथा तत्कालीन स्तरीय पत्रिकाओं में प्रकाशित होते ही रहते थे। आपका **'बुन्देलखण्ड का चित्तौर– ओरछा दुर्ग'** एक लेख **'सरस्वती'** में प्रकाशित हुआ था जिसमें चित्तौड़–परेश महाराणा प्रताप और ओरछा नरेश वीर शिरोमणि वीरसिंहदेव का ऐतिहासिक प्रमाणों के साथ प्राधान्य वर्णित था तथा यह भी स्पष्ट किया गया था कि चित्तौड़ से ओरछा अधिक गौरव शाली है। **'बुन्देलखण्ड पर्यटन'** नाम से एक विशिष्ट शोध आलेख **'सरस्वती'** में प्रकाशित हुआ जिसमें बुन्देलखण्ड की महिमा का आकर्षक वर्णन है।

वर्मा जी ने बुन्देलखण्ड के ऐतिहासिक तथ्यों का संकलन भी किया था। आपका **'भारत के अन्तिम सम्राट महाराज समुद्रगुप्त'** नामक शोध आलेख प्रयाग–हिन्दी एकेडमी की पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। आपने ऑल एशियाटिक एजूकेशन कान्फ्रेन्स में **'भारतवर्ष की प्राचीन यूनीवर्सिटियाँ और शिक्षा पद्धति'** पर तथा काशीनागरी प्रचारिणी सभा के साहित्य परिषद् के अधिवेशन में **बुन्देलखण्ड के साहित्य** पर लेख पढ़े जो अत्यंत महत्वपूर्ण थे।

1– बुन्देल वैभव–भाग2–गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' पृष्ठ 719

वर्मा जी अच्छे लेखक के साथ कुशल सम्पादक भी थे। आपने **'विद्या विनोद समाचार'** लखनऊ से तथा काशी में रहकर भी अन्य समाचार पत्रों का सम्पादन किया। **'हिन्दुस्तानी'** पत्रिका–प्रयण के तो आप सम्पादक मण्डल में ही थे। अन्यान्य संस्थाओं के **ऑनरेरी सदस्य** भी थे। बुन्देल वैभवकार ने उन्हें **'चरित्रवान कवि'**[1] कहा है। वर्मा जी साहित्य सेवा में तल्लीन रहकर हर कार्य समय पर सम्पादित करते थे। एक पत्र में उन्होंने स्वयं लिखा है– **'जैसे भुखमरा भोजन पर टूटता है वैसे ही मैं आजकल लेख लिखने में जुटा रहता हूँ।**[2]

आपके उपर्युक्त कथन से साहित्य साधना की लगन त्याग एवं अपूर्व उत्साह व्यंजित होता है।

द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र'

रसिकेन्द्र ! जनपद के उन कवियों में अग्रगण्य थे, जिन्होंने काव्यधारा प्रवाहित कर जनपदीय गौरव को शिखर तक पहुँचाने में अपूर्व योगदान किया। आयेदिन साहित्यिक गोष्ठियाँ करके वरिष्ठ कवियों का सम्मान करना उनका प्रिय कार्य था। घनाक्षरी उनका प्रिय छन्द था। कविता उनके व्यक्तित्व में बस गयी थी। **'रसिकेन्द्र हों, और काव्य सरिता न उमड़े, ऐसा असम्भव था।'** आप हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला, गुजराती, उर्दू तथा संस्कृत भाषाओं में दक्ष थे। **'साहित्यालंकार'** तथा **'कवीन्द्र'** आदि उपाधियों से आपको विभूषित किया गया था।

अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' के अनुसार– 'उनकी 18 पुस्तकों में से 8 प्रकाशित तथा 10 अप्रकाशित हैं। उनकी प्रमुख रचनायें हैं– **आत्मार्पण हरिजन्म कथा, कीर्ति कुसुम, नारी गौरव गान, सती सारन्ध्रा, अज्ञातवास, नायिका भेद, पारिजात विजय, बाल विभूति, सतीत्व रक्षा, रसिकेन्द्र रंजन, ललित**

1– बुन्देल वैभव–भाग 2, गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' पृष्ठ 720

2– उपरिवत्, पृष्ठ 720

लहरी, **महिमामयी** और **अवगुण्ठन**। स्फुट कविताओं में **'मीरा'** और **'शकुन्तला'** काफी चर्चित रहीं।[1]

रसिकेन्द्र का **'मनहर वीर ज्योति'** ऐसा अनुपम काव्य संकलन है जिसके सम्बंध में खनियाधाना राज्य के राजा खलकसिंह की टिप्पणी देखिये— **'कवीन्द्र बाबू द्वारिकाप्रसाद जी गुप्त 'रसिकेन्द्र' ने 'मनहर वीर ज्योति' लिखकर इस देश की जो सेवा की है, वह अकथनीय है। साथ ही हिन्दी साहित्य कोष में एक अमूल्य निधि उपस्थित कर दी है।'**[2]

पं. बेनीमाधव तिवारी

स्व. बेनीमाधव तिवारी राष्ट्रीय चेतना एवं जन जागरण के कवि थे। राष्ट्र के प्रति समर्पित जनपद की विलक्षण प्रतिभा के रूप में आपने अपना जीवन अछूतोद्धार एवं हरिजन कल्याण में न्यौछावर कर दिया था। उनकी अधिकांश सामयिक रचनाओं में व्यंग्य का पुट मिलता है। आपने अपने उग्र विचारों को जनमानस तक सम्प्रेषित करने के लिए साप्ताहिक **'देहाती'** तथा **'हलचल'** समाचार पत्रों का सम्पादन किया था। ज्योतिष एवं गणित में आपको दक्षता प्राप्त थी।

आपने जेल में रहकर अंग्रेजी भाषा का ज्ञान भी उपलब्ध किया था। राजनीतिक दाँव–पेंच में इतने अभ्यस्त, कि अच्छे वकील भी मात खा जाते थे तथा अपने मुकद्मे में स्वयं पैरवी करते थे। तिवारी जी ने सन् 1924 में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री गोपीनाथ **'शाहा'** की फाँसी होने पर लाल स्याही से एक लेख लिखा था जिसका शीर्षक था **'भारतीयों के खून की बूँदे भारत की आजादी का घोषणा पत्र लिख रहीं हैं।'** इस लेख पर आपके विरूद्ध राजद्रोह का मुकद्मा चला और आपको दो साल का कारावास हुआ। उन्हें अपने क्रान्तिकारी लेखन का परिणाम कई बार भुगतना पड़ा।

1– जालौन जनपदः साहित्य और पत्रकारिता, श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त'कुमुद' पृ.12

2– सम्मति–मनहर वीर ज्योति–खलकसिंह (राजा), खनियाधाना राज्य (बुन्देलखण्ड)

तिवारी जी वस्तुतः बुन्देलखण्ड की महान विभूति थे। **'साप्ताहिक हलचल'** के द्वारा उनकी देश सेवा के अनूठे कार्य को गति मिली। उनका **'साप्ताहिक देहाती'** गाँव–गाँव जाकर उनकी विचार धारा को उग्र से उग्रतर करता रहा तथा समाज सेवा के लिए एक विश्वास पात्र संगठन तैयार करता रहा।

स्व. बेनीमाधव तिवारी जी सूक्तियों के सम्राट थे। उनकी समस्यापूर्तियाँ इतनी ओजमयी होती थीं कि कटुसत्य होते हुये भी वे मधुर हास्य का सृजन करती थीं।

'उरई एकादशी' पद्यात्मक रचना में उनकी कवित्व प्रतिभा का चमत्कार देखने योग्य है।

डॉ. आनन्द

डॉ. आनन्द मूलतः वीर रस के कवि थे। अखिल भारतीय कवि सम्मेलन मंच पर पाँच दशकों तक धूम मचाकर वीर रस की काव्य सरिता प्रवाहित करने वाले डॉ. आनन्द का काव्य जीवन ब्रजभाषा की घनाक्षरियों से प्रारम्भ हुआ। बुन्देली लोकगीत इतने सटीक और सार्थक जो बुन्देली संस्कृति को पाठक के मन और मस्तिष्क पर साकार कर देते हैं। व्यंग्य इतने धारदार, जिन्हें सुनकर श्रोता तिलमिला जाते हैं। हास्य इतना उत्फुल्लकारी, जिसे सुनकर हास्य कवि भी आश्चर्य चकित हो जाते हैं।

डॉ. आनन्द का श्रेष्ठ वीरगाथा काव्य **'झाँसी की रानी महारानी लक्ष्मीबाई'** है। विश्व प्रसिद्ध कथानक को वरीयता देकर महाकाव्य की रचना करके आपने वीरता की साक्षात् प्रतिमूर्ति महारानी लक्ष्मीबाई की कीर्ति से जनमानस को इतना आच्छादित कर दिया कि आज भी रानी की अविस्मरणीय कीर्ति गाथा कण–कण में व्याप्त प्रतीत होती है। बुन्देखण्ड इसका साक्षात प्रमाण है।

'एम.एल.ए.राज' तथा **'दारूलशफा'** व्यंग्य रचनाएँ हैं। इन रचनाओं के माध्यम से नेताओं के दैनिक क्रिया—कलापों एवं उनकी शोषण प्रवृत्तियों को उजागर किया गया है, जनप्रतिनिधियों का वास्तविक एवं दूषित आचरण भलीभाँति उकेरा गया है।

'चीन और पाकिस्तान' कृति में मातृभूमि के विरोधियों को करारी फटकार दी गयी है। देश के दुश्मनों को आजादी के प्रति प्रतिबद्ध नवयुवकों की प्रबल हुंकार से परिचित कराया गया है। **'सन् अड़तालीस'** में भारतवर्ष की तत्कालीन परिस्थितियों का वास्तविक स्वरूप व्यंजित है। आजादी के बाद की प्रतिक्रियाओं को बड़े ही तीखे ढंग से स्पष्ट किया गया है। स्वतंत्र भारत में स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखने का निर्देश दिया गया है।

'पब्लिक इन्ट्रेस्ट' में शासन द्वारा रेल्वे का किराया बढ़ाने पर कवि की तीक्ष्ण प्रतिक्रिया व्यक्त है। रोचक शैली में कड़वी वार्ता को भी मधुर एवं सरस बनाकर हास्य का रूप दिया गया है। आपकी स्फुट रचनाओं में समस्यापूर्तियाँ अत्यधिक आकर्षक है।

आपका अप्रकाशित नाटक **'वैश्यासती'** इस संदर्भ की पुष्टि करता है कि वैश्या भी धार्मिक आचरणों से प्रभावित होकर तथा महापुरुषों के सान्निध्य से सती हो सकती है। यह नाटक **'सती वैश्या'** नाटक के कथानक से असंतुष्ट होकर प्रतिक्रिया स्वरूप लिखा गया है।

डॉ. आनन्द ने **'दुनाली'** साप्ताहिक पत्र का सम्पादन भी किया है। अपने ओजस्वी विचारों को जन—जन तक पहुँचाने का माध्यम था उनका **'दुनाली'** साप्ताहिक। आपने परिवहन विभाग की असीमित घूस खोरी का भण्डाफोड़ **'बम का गोला'** व्यंग्य लेख में किया है। इस प्रकार के चार लेख क्रमशः प्रकाशित कर सामान्य जनता को परिवहन विभाग की अवैधानिक असामयिक गतिविधियों का आभास कराया था।

आपने संस्कृत के आयुर्वेदिक ग्रंथ **'माधव निदान'** का पद्यानुवाद **'शक्ति निदान'** नाम से किया है, जिससे सामान्य हिन्दी पाठक भी लाभान्वित हुये हैं।

भाषा और शिल्प

पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'

पं. रामरत्न शर्मा **'रत्नेश'** का प्रौढ़तम ग्रंथ **'रत्नेश शतक'** ही उपलब्ध है। उनके शेष ग्रंथों का कोई पता नहीं लग सका। आपके इस ग्रंथ का कलेवर ब्रजभाषा की अनुपम माधुरी एवं चित्ताकर्षक पदलालित्य अपने में समेटे है। ब्रजभाषा की प्रकृति के अनुसार कोमलकान्त पदावली एवं ललित शब्द–भंडार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। आपके छन्दों में क्रियात्मक संज्ञायें जैसे– फेरिबो, टोकिबो तथा अवलोकिबो और भविष्यकालिक कृदन्त– देख्यौ, लुभायौ, मनायौ मिलते हैं। नैनन, बैनन तथा सैनन जैसे बहुवचन, नभवारे तथा बोधवारे जैसे प्रत्यययुक्त शब्द ग्रंथ में सरलता से उपलब्ध हैं। बाली का वारी, बावले का वावरे, फुलवारी का फुलवाई, रुक्मणी का रुकमिनि, पूरण का पूरन जैसे शब्द ब्रजभाषा के प्रभाव को परिलक्षित करते हैं। बितै–बितै, जितै–जितै, हितै–हितै तथा चितै–चितै जैसे तुकान्त अत्यंत आकर्षक बन पड़े हैं।

'रत्नेश शतक' में भक्ति और श्रृंगार की स्रोतस्विनी प्रवाहित हुयी है। श्रृंगार तो रसराज है ही, भक्ति रस भी रत्नेश की कविता में समाहित होकर सार्थक हो गया है। महारानी कीरति किशोरी की भक्ति से विह्वल होकर कवि **'बंदे नन्द नंदन अनंद भरे आठों याम, पंकज वरन राधे रावरे चरन हैं'** कहता है तो कहीं **'एक एक गुण देखे जेते देव दारन में, तेते सब देखे एक राधा महारानी में'**– कह देता है। श्रृंगार के संयोगपक्ष का बड़ा ही मनोहारी वर्णन मिलता है–

''एक–एक गोरी संग एक एक श्याम सोहैं,
रागन अलाप राग बिरच्यो रसाला है।
कूल में कलन्दजा के क्रीड़त कलित कान्ह,
लैके कमनीय ब्रज बालन को जाला है।।''

एक विप्रलम्भ श्रृंगार का उदाहरण द्रष्टव्य है–

'गोरो गोरो गात तेरो पीरो सो परत जात,
बात के कहे ते काहे शीश देति नाय नाय।
तब तो न मानी सीख अब हहरानीं जात,
और देख ले री मन मोहन को धाय धाय।।'

रस प्रवाह की दृष्टि से रत्नेश की कविता में श्रृंगार के दोनों पक्षों के अतिरिक्त अन्य रस लगभग नहीं के बराबर हैं। घनाक्षरी छन्द का प्रयोग किया गया है। सवैया तथा दोहे भी उपलब्ध हैं। कहीं–कहीं पद भी मिलते हैं। चित्त पै चढ़ना, पावड़े बिछाना, विष बोना आदि मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।लक्षणा एवं व्यंजना के भरपूर प्रयोग उपलब्ध हैं।

रत्नेश की काव्य–भाषा अलंकारिक सौन्दर्य से युक्त तथा अर्थ द्योतन क्षमता में विशेष महत्वपूर्ण है। अनुप्रास, यमक, रूपक, व्यतिरेक, उपमा आदि अलंकार सरलता से उपलब्ध हो जाते हैं। **'मानस महेश मानसर के मराल मंजु'** तथा **'मानस महेश मानसर के मराल हैं'** में अनुप्रास तथा **'रत्नेश यौवन नरेश'** में रूपक, **'प्यारी तेरे नैन के समान तेरे नैन हैं'** में अनन्वय तथा **'सागर समान कृष्ण राधिका को प्रेम है'** में उपमा अलंकार इनके काव्य की शोभा को द्विगुणित करते हैं। **'भोरी–भोरी गोरिन की रुचिर चकोरिन की'** तथा **'सोच सरसायो तब हीं तैं पियरायौ, सखिन हँसायो'** में पद–मैत्री के अनुपम प्रयोग इनके काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि करते हैं।

कृष्ण बल्देव वर्मा

आप अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, बंगला और फारसी के अच्छे ज्ञाता थे। इसलिये आपकी भाषा में संदर्भ की दृष्टि से सभी भाषाओं के शब्दों का मिश्रण पाया जाता है। मूलतः आपकी भाषा बुन्देली है, लेकिन साहित्यिक अभिरुचि–सम्पन्नता के कारण आप खड़ी बोली में ही अपना लेखन किया करते थे।

वर्मा जी उच्चकोटि के लेखक तो थे ही प्रतिभा सम्पन्न कवि भी थे। आपके नाटकों की भाषा सरल प्रवाहमयी तथा सरस बुन्देली युक्त

खड़ी बोली है। आपके पद्यात्मक रचनाओं में यदा–कदा ब्रज के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। सामान्यतः आप खड़ी बोली के विद्वान लेखक एवं प्रतिभा सम्पन्न कवि थे। आपकी भाषा पाठक पर स्थायी प्रभाव डालने में समर्थ थी। क्लिष्ट विषयों को प्रसाद गुण सम्पन्न भाषा में व्याख्यायित करने में आप सिद्धहस्त थे।

आपने फारसी भाषा के जो हिन्दी अनुवाद किए हैं वे मौलिक प्रतीत होते हैं। आपकी भाषा में भाव सम्प्रेषण की पूर्ण क्षमता विद्यमान थी। गम्भीर विषयों के विवेचन में भाषा भी क्लिष्ट एवं परिमार्जित हो गई है। पद्य में आपकी भाषा प्रसादगुण सम्पन्न थी तथा कहीं–कहीं ओज एवं माधुर्य का भी समावेश रहता था।

रसिकेन्द्र

आपका **'मनहर वीर ज्योति'** ग्रंथ उपलब्ध है। शेष अनुपलब्ध हैं। इस ग्रंथ में वीरत्व व्यंजक भावनाओं को प्रधानता दी गयी है तथा वीरों की गौरव गाथा को उभारकर वीरता का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया गया है। कवि रसिकेन्द्र की भाषा खड़ी बोली है। सरल तथा सुबोध शब्दों का प्रयोग कर काव्य का बोधगम्य बनाने का कवि का प्रयास स्तुत्य है। पाठक सहजता से वर्ण्य विषय की गम्भीरता को ग्रहण कर लेता है। कहीं–कहीं तत्सम शब्दों के प्रयोग भी आकर्षक बन पड़े हैं। कोमल भाव व्यंजना के लिए कवि ने यत्र–तत्र ब्रजभाषा के शब्दों का भी प्रयोग किया है। यथा– **पै, लौं, सनेह हिय** आदि।

आपकी कविता में शब्दालंकारों एवं अर्थालंकारों के यथेष्ट प्रयोग उपलब्ध है। उपमा, यमक, रूपक, अनुप्रास आदि स्थान–स्थान पर भावार्थ को गरिमामय बनाते हैं। **'तोप, तीर, वेग की त्रिवेणी' ठगों की ठगी को ठेल देंगे ठकुराई कर ठाठ होगा ठसक के ठान ठन जायेंगे' 'माया, मोह, मद से मदान्ध' 'मूर्ति**

मन–मोहिनी के मोह में मढ़ी हूँ मैं' तथा **'सार्थक बनाती सत्य साधना की सिद्धियों को'** में अनुप्रास अलंकार की अनुपम छटा दर्शनीय है। **'कीर्ति–कौमुदी, शंख शंका का' 'बरछी–बरोनियों' ज्ञानगीता'** तथा **ज्ञान–गुरु–गौरव'** में रूपक अलंकार विद्यमान है। **'तेरी खड्ग छाया है कि मृत्यु ही की छाया है'** में संदेह अलंकार है। **कुँवर कन्हैया, करती विदा है मइया, लेती है बलैया'** तथा **'यश का वितान तान, शान से बिचरते'** में पद–मैत्री की शोभा देखने योग्य है। **'रिपु–नारि– अश्रु–नीर की' 'आत्म– अभिमान–भरी'** तथा **शत्रु–मद–मोचन'** में सामसिक पदावली विचित्र बन पड़ी है। कहीं–कहीं यमक और उत्प्रेक्षा के बड़े सुन्दर उदाहरण भी देखने को मिल जाते हैं।

रसिकेन्द्र जी ने अपने काव्य में घनाक्षरी (मनहरन छन्द) को वरीयता प्रदान की है। **'सनेही जी'** ने काव्य की भूमिका में लिखा है कि– **'अब के पचास वर्ष पहले तक तो यह दशा थी कि जो कवि घनाक्षरी की रचना में असमर्थ हो, उसे कवि मानने में लोग संकोच करते थे। इस छन्द को सैकड़ो वर्षों में सैकड़ो कवियों ने ऐसा माँजा है, कि अब उनसे आगे बढ़ना तो दूर की बात है; इसे सफलता पूर्वक निभा लेना ही कमाल की बात है।'**[1]

तात्पर्य है कि रसिकेन्द्र जी का मनहर छन्द परिमार्जित, परिष्कृत तो था ही, भावव्यंजना में सक्षम एवं सुर तथा लय से सम्बद्ध भी था। सनेही जी आगे लिखते हैं कि **'इस पुस्तक में कोमलकान्त पदावली की तलाश तो मूर्खता ही होगी। इसमें तो ओजस्विनी भाषा में वीर रस के फुहारे छूटते दिखायी देते हैं।**[2] कथन से यह सिद्ध होता है कि कवि के भावों में कोमलता का संस्पर्श नहीं था वरन् श्रोताओं को अभिभूत कर रोमांचित करने वाली प्रखर ओतपूर्ण वाणी का अक्षुण्ण प्रभाव था।

1– भूमिका: मनहर वीर ज्योति– सनेही 'सुकवि सम्पादक' (ग)

2– उपरिवत्, (ग)

आपकी भाषा में अर्थ को चमत्कार प्रदान किया गया है। मुहावरों के अनूठे प्रयोग द्वारा जैसे – **बलि जाना**[1], **मँझधार में डूबना**[2], **नित्य दिवाली होना**[3], **आहों का धुआँ उठना**[4], **तथा आँखों में बिठाना**[5] **आदि।**

बेनी माधव तिवारी

बेनीमाधव तिवारी की भाषा का स्वरूप सरल और सहज होते हुये भी कहीं–कहीं परिमार्जित एवं परिष्कृत है। यदा–कदा उर्दू के शब्दों का मिश्रण भी उपलब्ध होता है, भाषा में भाव सम्प्रेषणीयता का गुण विशेष है। जहाँ भाव गम्भीर हैं वहाँ तिवारी जी की भाषा भी दुरूह एवं क्लिष्ट है तथा यदि भाव आर्जव गुण सम्पन्न हैं तो तद्नुरूप भाषा भी सरल है। उनकी भाषा में उर्दू शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से हुआ है। उदाहरण देखिए– तिवारी जी ने कोई इंस्पेक्टर से कहा– **'आप जब से इस जिले में तशरीफ लाये हैं; आपका मिजाज तो ठीक है।'**[6]

एक अन्य उदाहरण– **'एक कौन दूसरी कौन की हुकूमत का जुआँ सदैव अपने कंधे पर रक्खे रहे यह बिल्कुल अस्वाभाविक है।**[7] **'अब वह तलवार और मशीन गनों के जोर से अधिक दिन तक गुलाम नहीं रक्खा जा सकता।'**[8]

उपर्युक्त उदाहरणों में तशरीफ, मिजाज, हुकूमत, गुलाम आदि उर्दू के शब्द हैं जो स्वाभाविक रूप से मिश्रित होकर घुल मिल गये हैं।

1– मनहर वीर ज्योति– पृष्ठ 42

2– उपरिवत्,– पृष्ठ 46

3– उपरिवत्, पृष्ठ 57

4– उपरिवत्, पृष्ठ 60

5– उपरिवत्, पृष्ठ 88

6– साप्ताहिक हलचल (तिवारी विशेषांक)–लल्लूराम मिश्र, विश्व बन्धु, पृष्ठ 8

7– उपरिवत्, श्री बेनीमाधव तिवारी (1924 में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी गोपीनाथ शाहा की फांसी होने पर लाल स्याही से लिखा गया लेख) पृष्ठ 4

8– उपरिवत्, पृष्ठ 4

उनकी कविता में उर्दू शब्दावली का संयोग रुचिकर प्रतीत होता है। जैसे–

कबरें खबरें खड़ी दे रहीं हैं,

यहीं खूने गनीम पिया गया था।

X X X

यह नाम उरई कब कैसे हुआ,

इस बात पै मैंने निगाह जो फेरी।

उपर्युक्त उदाहरण में कबरें, खबरें, खून, गनीम तथा निगाह शब्द उर्दू के हैं। इसी तरह भाव गाम्भीर्य की स्थिति में पयस्व, जान्हवी, वेत्रवती, तृषाकुल, मुखोज्वल, वीथियों तथा कलेवर आदि परिष्कृत शब्दों के प्रयोग भी उपलब्ध होते हैं।

आपकी कविता में अलंकारिक चमत्कार की दृष्टि से अनुप्रास का सौन्दर्य दर्शनीय है–

'चल चम्बल चंचला चाव भरी'

'परि पूरित प्रेम से प्यारी पहूज'

'कवि कल्पना कोरी नहीं'

'मौंजें मारतीं हैं नित्य मौजी मौज मनकी' आदि।

गाँधीराम फोकस इनके सम्बन्ध में लिखते हैं कि– **'आपकी सुमधुर भाषण शैली इतनी प्रिय थी कि छोटी–बड़ी सभाओं की कौन कहे, कौंसिल तक में लोगों की अंगुली दाँतों तले आ जाती थी। व्याख्यान दाताओं में कई जिलों में आपके समान तो कोई दूसरा था ही नहीं।**[1]

तिवारी जी की कविता में आगत छुट–पुट हास्य एवं व्यंग्य भी उनके काव्य सौन्दर्य में अभिवृद्धि करता है। सेवकेन्द्र त्रिपाठी ने उनको एक पत्र में लिखा था कि आप आजकल कौनसी सनक से हैं। श्री तिवारी ने उत्तर इस प्रकार लिखा–

1– साप्ताहिक हलचल (तिवारी विशेषांक) सन् अक्टूबर 1953–गाँधीराम फोकस, पृष्ठ 20

कल्पना की कार पर घूमते सानन्द सदा,

झूमते हैं मस्त सुध भूले हुये तन की।

प्रेममयी प्याली खाली होती नहीं पीकर भी,

मौंजें मारती है नित्य मौंजी मौंज मन की।।

किसी भी नबाब से न कम हैं कदापि हम,

काव्य कामिनी पै दृष्टि रहती लगन की।

तीन लोक से है न्यारी दुनिया हमारी हम,

कवि लोग होते हैं स्वभाव सिद्ध सनकी।।[1]

इस प्रकार तिवारी जी की भाषा सौष्ठव यदि शब्द सम्पदा की दृष्टि से समृद्ध है तो शिल्प की दृष्टि से भी श्रेष्ठ है।

4-3-5 डॉ. आनन्द

डॉ. आनन्द की भाषा अत्यन्त सरल, स्वाभाविक, ओजपूर्ण और आडम्बर रहित है। भाषा का प्रवाह एवं प्रभाव अनूठा है। कहीं—कहीं शब्दों के क्लिष्ट प्रयोग भी उपलब्ध होते हैं। आपकी अधिकांश रचनाएँ खड़ी बोली में है। कतिपय स्फुट बुन्देली गीतों में बुन्देली का व्यवहार भी मिलता है। खड़ी बोली की रचनाओं में कहीं—कहीं बुन्देली शब्दों का प्रयोग भावाभिव्यक्ति को सबल बनाने में सक्षम है। उर्दू शब्दावली उनकी भाषा में स्वाभाविक रूप से समाविष्ट है। पैमायश, हरगिज, कसम, रिवाज, राज, माशूक, बंदिश, रोजा, नमाज, महसूल, खुराफात, इम्तहान, जालसाज, दफ्तर, बरखास्त तथा रिसाला आदि उर्दू शब्दों के सार्थक और सटीक प्रयोग सरलता से उपलब्ध हैं। अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग कविता की लय में किसी भी प्रकार बाधक नहीं है। डेरी फारम, वोटरलिस्ट, प्रेस, मिसप्रिण्ट, ऑफिस, गजट, सेल—टेक्स, फायल तथा कण्ट्रोल आदि शब्द उनकी कविता में अर्थ को विशिष्टता प्रदान करते हैं।

1— साप्ताहिक हलचल (तिवारी विशेषांक) सन् अक्टूबर 1953—सेवकेन्द्र त्रिपाठी, पृष्ठ 26

डॉ. आनन्द की कृतियों में रस प्रवाह की दृष्टि से वीर रस ही सर्वोपरि है। ओजपूर्ण रचनाओं में वीर रस का प्रवाह उनकी राष्ट्रीय भावनाओं का परिचायक है। कुछ गीतों में हास्य रस के छींटे श्रोताओं को रस–सिक्त कर देते हैं। **'मोटर का मजा'** कविता का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

कुछ तो ऊपर कुछ तरें गये।
कुछ घरी बनाकर धरे गये।।
कुछ ठूँस–ठूँस कर भरे गये।
हम जान गये आ गयी कजा।
मोटर का मजा मोटर का मजा।।

आपके कुछ अनूठे प्रयोग शिल्प की दृष्टि चमत्कार तो उत्पन्न करते ही हैं, अर्थ क्षमता में वृद्धि भी करते हैं–

लग रहा आग में पानी है
या पानी में लग रही आग।
X X X
हो गई हवा की हवा बन्द।[1]

डॉ. आनन्द के महाकाव्य **'झाँसी की रानी'** महारानी लक्ष्मीबाई' में रूपक विधान बड़ा अनूठा है। एक रूपक द्रष्टव्य है। इस दृश्य से प्रजा की आँखों से एक नई बेतवा नदी बह आती है–

'बेतवा एक दो दृग धारें थीं सरिता– श्रेणी झाँसी में।
धारायें मिलकर तीन–तीन बह उठी त्रिवेणी झाँसी में।।[2]

जब उस त्रिवेणी में शोणित सरिता की धार तथा तीक्ष्ण तलवार की धार मिलती है। पाँच धाराओं का रूपक कितना आकर्षक है–

इन पाँच–पाँच धाराओं में वह आब दिखाई देता था।
बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत, पंजाब दिखायी देता था।।[3]

आपकी रचनाओं में अनुप्रास, यमक, रूपक तथा उत्प्रेक्षा अलंकार स्वाभाविक रूप से आ गये हैं। मुहावरे तथा लोकोक्तियाँ प्रायः नहीं के बराबर हैं।

1– झाँसी की रानीः महारानी लक्ष्मीबाई, डॉ. आनन्द, पृष्ठ 188'189

2– उपरिवत्– पृष्ठ 151

3– उपरिवत्– पृष्ठ 151

4-4 कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन

4-4-1 पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'

रत्नेश के साहित्यान्तर्गत प्रकाशित रचनाओं में 'रत्नेश शतक' ही उनका श्रेष्ठ काव्य ग्रंथ है। इस ग्रंथ का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत है।

4-4-1-1 भक्ति निरूपण

'रत्नेश शतक' में श्रीमद्‌भागवत पुराण के समान राधा–कृष्ण की भक्ति का निरूपण किया गया है। राधा–माधव की साकार युगल माधुरी रत्नेश के मानस पटल पर अंकित है।

'प्रेम ही ईश्वर है, प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही परम पिता के सन्निकट पहुँच सकने का एक मात्र साधन है।'[1] इस सिद्धान्त को सर्वोपरि मानने वाले पं. रत्नेश जी राधा–कृष्ण की प्रेममयी भक्ति में अनुरक्त, कृष्णनाम की महिमा एवं अपने आराध्य के सृष्टि व्यापी प्रभाव को इन शब्दों में स्पष्ट करते हैं–

''जाकी मधुराई देखि, सिता सिकता सी भई।
ऊख सूख सूख भई, निपट निकाम हैं।
दाख भयो राख कंद, मंदतर परि गयो,
वाम को अधर सो तो कुम्भीपाक धाम है।।
रत्नेश बसुधा के बीच सुधा मुधा भयो,
स्वाद नहिं दूजो देखि परत ललाम है।
आगम निगम जाकी महिमा न जान सकै,
मधुर महान ऐसो एक कृष्ण नाम है।''[2]

1– रत्नेश शतक–प्राक्कथन–पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'

2– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' पृष्ठ 1

भक्त रसखान की '**नारद से शुक व्यास रटैं, पचि हारे तऊ पुनि पार न पावैं।**' पंक्ति का भाव साम्य रत्नेश की '**आगम निगम जाकी महिमा न जान सकैं**' पक्ति में पूर्णतः मिलता है। तात्पर्य है कि रत्नेश की सरस भक्ति–माधुरी के परम स्वाद के समकक्ष संसार में कोई अन्य स्वाद नहीं है।

परमशक्ति स्वरूपा राधा के चरणों में एकनिष्ठ होकर समर्पण भाव व्यक्त करते हुये कवि अपनी आराध्या के गुणों का गान करता है, अपनी आस्था को अभिव्यक्ति करता है–

गौरिं में गौराई देखी शची में सचाई देखी,
रमणीयताई देखी रंभा सुखदानी में।
रति की कलान को कुतूहल रती में देख्यो,
वाक्य चतुराई चोखी देखी एक बानी में।
रत्नेश रमा में निहारी प्रभुताई बेस,
रूप की निकाई देखी तारा छबि खानी में।
एक–एक गुण देखे जेते देव दारन में,
तेते सब देखे एक राधा महारानी में।।[1]

अपनी परम् वन्दनीया राधा में जिन–जिन गुणों का समुच्चय कवि देखता है वे एक–एक कर सभी देवांग्नाओं में मिलते हैं। इस प्रकार साक्षात् परमात्म स्वरूपा कीरति किशोरी की स्नेहमयी भक्ति में तन–मन को अंनुरंजित रखने की कामना करता हुआ कवि कहता है–

कानन में केलि तथा मुद बरसायो करै,
मन नित ध्यायो करै श्याम रंग गोरी को।
पूतरी है नैनन में रूप बसै आठों याम,
नवल किशोर युत प्यारी वय थोरी को।
रत्नेश नासिका प्रसादी पुष्प सूँघो करै,
पग नित जायो करै साकरी सी खोरी को।
रसना रसीली माँहि रस सरसायो करै,
नाम मुख गायो करै कीरति किशोरी को।।[2]

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' पृष्ठ 2

2– उपरिवत्– पृष्ठ 3

उपर्युक्त छन्द में कवि का अन्तर राधा की भक्ति में सराबोर प्रतीत होता है। कान, नेत्र, मन, नासिका, रसना और मुख सर्वांग भक्ति रस से प्लावित हैं। भक्ति सरिता में निमज्जित कवि आत्म विभोर होकर कृष्ण के बालस्वरूप की अद्भुत झाँकी प्रस्तुत करता है। नंदरानी यशोदा पर ब्रह्मस्वरूप कृष्ण को अंक में लेकर चन्द्र दर्शन कराकर दुलारती हैं, वही कृष्ण मोदमग्न होकर मचलते हुये चन्द्रमा माँगने लगते हैं। चित्र देखिये–

रत्नेश ताको निज अंक लेके नन्दरानीं,
जबै दुलराय कै दिखायो शश अंक है।
गोद परो मोद भरो मोहन यशोदा जू सों,
मचल–मचल लाग्यो मांगन मयंक है।।[1]

4-4-1-2 श्रृंगार वर्णन

'रत्नेश' का विशुद्ध श्रृंगार वर्णन अद्वितीय एवं अनूठा है। उनका संयोग वर्णन जितना चित्ताकर्षक है, वियोग वर्णन उतना ही मर्मस्पर्शी है। कृष्ण अपने कर–कमलों से राधा के पद–पंकजो में कुंजो के मध्य जावक लगाते हैं, स्वर्ण–आभूषण पहनाते हैं, सुषमा निहार कर बार–बार बलिहारी जाते हैं तथा आनन्दयुक्त होकर राधा के पद पंकजों की बंदना करते हैं। संयोग वर्णन का उक्त प्रसंग पढ़कर नेत्रों के समक्ष एक चित्र सा उपस्थित हो जाता है। पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

रचि रचि जावक लगावैं कर कंजन सों,
कुञ्जन के मध्य गोद मंगल भरन हैं।
हाटक के भूषण जटित मणि माणिक सों,
कबौं पहिरावैं अति शोभा के करन हैं।
सुषमा निहारी बलिहारी जात बार–बार,
तप्त कलधौत वारी आभा के हरन हैं।
बन्दैं नन्द नन्दन अनंद भरे आठों याम,
पंकज बरन राधे रावरे चरन हैं।।[2]

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', पृष्ठ 23

2– उपरिवत्, पृष्ठ 3

राधा–कृष्ण के मिलन से एक–दूसरे के अंगों पर पड़े प्रभाव का वर्णन रत्नेश जी भावुक होकर करते हैं। राधा के नेत्रों का अंजन श्याम के अधरों को श्यामल कर देता है। राधा के नूपरों की ध्वनि कृष्ण के कानों में भरेगी। राधा के उत्तुंग उरोज कृष्ण के वक्ष पर छाप डालेंगे। तथा राधा के पैरों में लगा जावक कृष्ण के भाल को लाल कर देता। एक सखी अन्य सखी से कहती है–

अंजन रेख ते आज अली अधरा मृत श्याम के श्याम परैंगे।
मंजुल रावरे नूपुर ये बहु भाँति सों श्रौन में शब्द भरैंगे।।
तुंग उरोज दोऊ सजनी हरि के उर वर्तुल छाप धरैंगे।
जावक अंक विशाल लगे पग लाल के भाल को लाल करैंगे।।[1]

रत्नेश को संयोग वर्णन में विशेष दक्षता प्राप्त थी। रत्नजटित सिंहासन पर बैठे राधा–कृष्ण की अनुपम शोभा कवियों के लिये अवर्णनीय हैं। श्यामा–श्याम का सम्मिलन चंपा और तमाल, मेघ और बिजली तथा नीलमणि और कंचन का मिलन जैसा लगता है। जब कवि का मन इन उपमानों से सन्तुष्ट नहीं हुआ, तब विवश होकर कवि कहता है कि चौदह लोकों में ऐसे उपमान हैं ही नहीं, जिससे समता की जा सके। उदाहरण देखिये–

ताते उपमेय उपमान सब आपही हैं,
और नहिं पाई जात चौदहों भुवन में।
साँवरे की छटा छाई गोरे–गोरे गातन में,
गोरी–गोरी प्रभा रही छाय श्याम तन में।।[2]

'रत्नेश' यदि श्रृंगार के संयोग पक्ष का मनोहारी वर्णन करने में दक्ष हैं, तो वियोग में भी कम नहीं हैं। नायिका नायक के विरह में खिन्नमन और चिन्तित है। सखी नायिका से प्रश्न करती है कि तू क्यों पद–नख से धरती पर रेखायें खींच रही है, आभूषण उतार दिये हैं, मलिन

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' पृष्ठ 11

2– उपरिवत्– पृष्ठ 33

बसन धारण किये हैं, मौन रहकर, मन मारकर दीर्घ श्वाँसें ले रही है। मोहन अर्थात् प्रियतम को हृदय से क्यों नहीं लगा लेती, वह भी तो तेरे विरह में व्याकुल है। पंक्तियाँ देखिये–

काहे भौंह तान के कमान सी सुजान बैठी,
पद नखरेख काहे महि में करत हैं।
भूषण उतारे त्योंही मलिन बसन धारे,
मौन मन मारे स्वाँसैं दीरघ भरत है।।
चूक क्षमा कीजै कीजै लाय उर मोहन को,
तेरे बिन धीर धारो क्यों हूँ ना धरत हैं।।[1]

उपर्युक्त छन्द में विरहणी के लक्षणों का कितना सटीक वर्णन है, देखते ही बनता है। अनुभूति की गहराई रत्नेश के काव्य को उत्कृष्टता प्रदानकरने में सक्षम है। वस्तुतः अनुराग का कारण होता है रूप। रूप का आकर्षण नायक–नायिका को प्रेम–सूत्र में आबद्ध कर देता है। आत्मविभोर कर देता है। हृदय रूप का उपासक होकर मिलने के लिए तड़प उठता है। प्रेमी युगल विलग होने के भय से अनुष्ठान करते हैं। दोनों मिलकर एक रूप हो जाना चाहते हैं। तादात्म्य कर लेना चाहते हैं। जिस दिन से राधा ने कृष्ण को देखा है, विरह व्यथित राधा की प्रेमानुरक्त बुद्धि की मार्मिक दशा का अवलोकन कीजिये–

'जा दिन ते देखो बनमाली को स्वरूप आली,
ता दिन ते बाकी मति प्रेम में पगी रहै।
जप तप कै कै दृढ़ व्रत नेम लै कै चाहे,
जामें क्यों हूँ प्रीतम सों नाहिं बिलगी रहै।।
पीत पट ह्वै कै वनमाल में मिलन चाहे,
सदा रतनेश उर माँहिं उमगी रहै।
अंग राग ह्वै कै सदा अंग न लगोई चाहे,
चाहै अधरान बनि बाँसुरी लगी रहै।।[2]

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', पृष्ठ 19

2– उपरिवत्, पृष्ठ 20

उपर्युक्त छन्द में भाव सरल होते हुये भी सबल है, प्रभावशाली है। हृदय पर अमोघ आघात करने में सक्षम हैं। राधा पीत–पट होकर कृष्ण की वनमाल में मिलना चाहती है, अंगराग होकर अंगों से लिपटना चाहती है तथा बाँसुरी बनकर कृष्ण के अधरों का कोमल एवं मधुर स्पर्श करना चाहती है। कितनी लगन है, कितनी उत्सुकता है और कितनी है विछोहजन्य पीड़ा?

विरह व्यथिता सुकुमार गोपकुमारी अगहन मास के अतिशय शीतयुक्त वातावरण में स्नानकर गौरी पूजन बड़े मनोयोग से करती है तथा वरदान चाहती है कि मनमोहन के प्रति मेरे हृदय में जैसी प्रीति है, वैसी ही मेरे पति मनमोहन के हृदय में भी बनी रहे। पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं–

गोपकी कुमारी सुकुमारी प्रेम वारिन की,
मति वनबारी जू के प्रेम में पगी रहै।
अगहन मास में हुलास सों कलिन्द जाके,
नीर में नहाय प्रीति रीति उमगी रहै।।
पूजि कै भवानी माँगै जोरि जुग पानीवर,
सुचि सुखदानी रति हिय में जगी रहै।
लगन लगी है जैसी श्याम सों हमारी त्योंही,
श्याम की हमारे संग लगन लगी रहै।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि की वैयक्तिक अनुभूति प्रतिबिम्बित हो रही है। कवि का हृदय अनुरागी है। विरह अनुराग का परिणाम है, विरह अनुराग की पृष्ठ भूमि पर आधारित होता है। छन्द में वेदना की कोमल अनुभूतियाँ हैं, आह्लाद की तरंगे हैं और आराध्य से कामना पूर्ति की आशा एवं विश्वास भी।

4-4-1-3 सौन्दर्य निरूपण

रत्नेश ने कृष्ण के नयनाभिराम सौन्दर्य की अभिव्यंजना चन्द्रमा के सौन्दर्य को समकक्ष रखकर तुलनात्मक रूप से की है। चन्द्रमा के सौन्दर्य को फीका बतलाकर कृष्ण के सौन्दर्य को अनुठा बतलाया है।

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' पृष्ठ 21

वस्तुतः सौन्दर्य में अतीव आकर्षण होता है, रिझाने की शक्ति होती है। उसके दर्शन से मानवी चेतना में एक विचित्र भावदशा का संयोजन होता है, भावात्मक विकास की कल्पनातीत प्रक्रिया का उदय होता है। कवि चन्द्र और कृष्णचन्द्र की तुलना करता हुआ कहता है–

उतै विष वन्धु इतै सुखधाम बलराम
उठै तात सिन्धु उपकारी इतै नन्द हैं।
रवि को बिलोकत ही वह तो परत मंद,
ये तो दिन रैन बने रहत अमंद हैं।।
रतनेश वो तौ कलाछीन ये कला प्रवीन,
वो तो सकलंक अकलंक ये स्वछंद हैं।
सुरगान बंद सुखकंद द्वन्द फंद हारी,
नमवारे चंद से अनूप कृष्ण चन्द हैं।।[1]

कवि ने सुरगण–वंदित एवं सुखकंद कृष्ण के सौन्दर्य को नभ प्रकाशित करने वाले चन्द्र की अपेक्षा अनुपम एवं अनूठा बतलाया है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी 'सियमुख समता पाव किम चंद वापुरो रंक' कहकर चन्द्रमा को हेय बतलाया है। यहाँ कृष्ण की माधुरी मुस्कान का अनूठा सौन्दर्य–चित्र रेखांकित किया गया है। दामिनी की तरह दशों दिशाओं को प्रकाशित कर कामिनियों के कलेजे को विदीर्ण करने में समर्थ, लाज के सिपाहियों पर गाज के समान गिरने वाली कृष्ण की मधुर मुस्कान सारे वैदिक निर्देशों को निराधार कर देती है। पंक्तियाँ देखिये–

रतनेश काम कारीगर की बनाई बेस,
वेद के निवेश दूरि करि देत ततकाल।
अधर मियाँन ते कढ़त ही हरत प्रान,
कान्ह मुसकान धरी शान कै धौं करवाल।।[2]

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', पृष्ठ 9

2– उपरिवत्, पृष्ठ 8

उपर्युक्त छन्द में कवि ने तीक्ष्णधार युक्त मुस्कान रूपी तलवार से अधर रूपी म्याँन से निकलते ही दर्शकरूपी शत्रुओं के प्राण हर लेने का अलंकारिक वर्णन प्रस्तुत किया है।

हिन्दी साहित्य में नेत्रों की निकाई का वर्णन विविधरूप में हुआ है। रसकवि– **'अमिय हलाहल मदभरे'** कहते हैं तो बिहारी **'काननचारी नैन मृग'** कहकर नेत्रों द्वारा चतुर नरों का शिकार कराते हैं। तुलसी को तो **'उपमा नैन ए एक गहीं'** नेत्रों का कोई उपमान ही नहीं मिलता। कवि रत्नेश ने दृष्टि–निक्षेप का प्रभाव व्यंजित कर नेत्रों के अनुपम सौन्दर्य का अनूठा वर्णन किया है–

रतनेश पूरित अमृत विष मद माँहिं,
तीनों गुन आजही प्रत्यक्ष ये निहारे हैं।
मदभरी रावरी निहारि अँखियाँन बीर,
बिना मद पान किये होत मतबारे हैं।।[1]

नेत्रों में अमृत, विष और मदिरा एक साथ तीनों समाविष्टकर रत्नेश ने 'रसलीन' का भावानुवाद तो किया ही है, किन्तु नेत्रों की मद विशेषता कि 'बिना मद पान किये होत मतबारे हैं' विशेष उल्लेखनीय है। इतना ही नहीं, नायिका के नेत्रों के समक्ष समान गुणधर्मा उपमान भी लज्जित हो जाते हैं। मीन, मृग, खंजन और कमल उत्साह हीन हो जाते हैं। नायिका के सुखदायी नेत्रों को कृष्ण आठों याम निहारते हैं। सखी नायिका से उसके नेत्रों की भूरि–भूरि प्रशंसा करती हुई कहती है–

चंचलाई चिकनाई पाई नहिं मीनन में,
पानी इनमें, वे किये पानि ही में ऐन हैं।

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' पृष्ठ 8

अंजुन सँवारे करैं वूरि मद खंजन को,

भाजैं मृग सैन ते ये रहत ससैन हैं।।

कंजमद–गंजुन निरंजन के रंजन ये,

इनके समान और कौन सुख दैन हैं।

आठों याम श्याम जिन्हें देखि बावरे से रहैं,

प्यारी तेरे नैन के समान तेरे नैन हैं।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने नायिका के नेत्रों की समानता नेत्रों से ही बताकर अलंकार चमत्कार का सफल आयोजन किया है। राधा की रूप–माधुरी के समक्ष समस्त देवांगनायें लज्जित सी प्रतीत होती हैं। चाहे लक्ष्मी हों या पार्वती, सरस्वती हों या शची तथा सौन्दर्य सम्पन्न रम्भा ही क्यों न हों, सभी श्रीहीन सी लगती हैं। कामदेव और रति का अभिमानभी निर्मूल हो जाता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

जाकी सुकुमारता सो गिरिजा गरब छोड़े,

धीरज निहारि रमा होति दिलगीर है।

बानी सुनि जाकी बानी बारिनित पानी पिये,

देखिकै सचाई सची रहत अधीर है।।

रतनेश रम्भा को अचम्भा होत रूप पेखि,

अंगन पै बारी देव अंगना की भीर है।

राधे तोहिं देखि मै न काहू मन मौ न धारे,

रति को गुमान नाहिं एकहू रती रहै।।[2]

उपर्युक्त छन्द में देवांगनाओं के समस्त गुणों जैसे सुकुमारता, धैर्य, वाणीं की मिठास, सच्चाई तथा रूप माधुरी का समवेत स्वरूप राधा में समाविष्ट कर कामदेव तथा रति के सौन्दर्याभिमान का चूर–चूर होना वर्णित है। यह रत्नेश की राधा के प्रति अपार श्रृद्धा–भावना का द्योतक है।

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', पृष्ठ 10

2– उपरिवत्– पृष्ठ 17

4-4-1-4 प्रकृति वर्णन

'रत्नेश' के काव्य में प्रकृति का मनोहारी वर्णन उनके प्रकृति–प्रेम को दर्शाता है। पृष्ठभूमि के रूप में किया गया प्रकृति वर्णन आकर्षक तो है ही, मन में धड़कन, कम्पन, स्पंदन और सिहरन भी उत्पन्न करता है। कवि ने प्रकृति के सजीव एवं रमणीय चित्र प्रस्तुत किये हैं। उदाहरण देखिये–

फूले मंजु कंजन पै गुंजत मलिन्द बृंद,
शीतल सुगन्ध मंद पौन सरसात है।
कोकिला चकोर कीर केकी गन कूजत हैं,
ग्रीषम में जहाँ ऋतुराज दरसात है।।
वृन्दावन वीथिन में बिहरैं बिहारी वेश,
रतनेश शोभा देखि मदन लजात हैं।
तरनि तनूजा तीर तरुण तरणि हू को,
तेज तरू पुंजन सों कुंज में नजात है।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने ग्रीष्म ऋतु की पृष्ठभूमि में प्राकृतिक उपमानों का सजीव चित्रण करके ऋतुराज का आभास कराया है। वृन्दावन की वीथियों में विहार करने वाले कृष्ण की अनुपम शोभा को देखकर कामदेव भी लज्जित हो जाता है। यमुना तट पर स्थित सघन तरू पुंजों के कारण सूर्य का प्रकाश कुंजों में नहीं पहुँच रहा है। यहाँ पर कवि की अनुभूति की गहराई एवं सूक्ष्म निरीक्षण क्षमता व्यंजित हो रही है।

कवि शरद ऋतु के चन्द्रमा का विविध प्रतीकों के माध्यम से वर्णन करता है। कहीं उसे चाँदी का गिलौरीदान तथा प्राची–सर में निशंक विचरण करने वाला राजहंस कहता है, तो कहीं कामदेव का धवल कबूतर तथा आकाश गंगा में बालू का पिंड बतलाता है। इसी प्रकार अमावस्या की रात्रि में चमकने वाला निर्मल चन्द्रमा ही शरदऋतु का कीर्ति रूपी हंस

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' पृष्ठ 18

चित्रित किया गया है। शरदऋतु की रात्रि में प्रकाशित विमलमयंक का एक अन्य उदाहरण दृष्टव्य है–

कामधेनु दूध को बिलोय सुर कामिनीन,
माखन को लोंदा छोड़ि दीन्हो ये निशंक है।
मदन महीपति को कैंधों रूप आत पत्र,
सकल महीतल में करत अतंक है।।
कैधों निज प्रिय को वियोगी चक्रवाक प्रेमी,
नभसर ढूँढ़े चक्रवाकी कौ सशंक हैं।
व्योम कुण्ड रजत कटोरी की पड़ी है घड़ी,
शरद निशा को कैधों विमल मयंक है।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि शरद निशा में जगमगाते निर्मल चन्द्र को सुरांगनाओं द्वारा कामधेनु के दूध को बिलोकर निकाला गया माखन का लोंदा कहता है, तो कहीं कामदेव रूपी राजा का रूप रूपी छाता बतलाता है। कहीं वह चन्द्रमा को वियोगी चकवा के रूप में चित्रित कर शंकित अवस्था में आकाश रूपी सरोवर में अपनी चकवी को ढूँढ़ता हुआ वर्णित करता है तो कहीं आकाश रूपी कुण्ड में चाँदी की कटोरी रूपी घड़ी बतलाता है। इस प्रकार कवि विविध प्राकृतिक उपमानों का सादृश्य उपस्थित कर अपनी अद्भुत वर्णन क्षमता का उत्कर्ष चाक्षुण कराता है।

इसी प्रकार नैसर्गिक वर्णन में दक्ष कवि रत्नेश ने कालिन्दी के तीर पर प्रवाहित शीतल समीर का, हरी–हरी भूमि में सुशोभित इन्द्र–बधूटियों का, वादुर, मोर, चकोर, चातक, कपोत तथा कीर की मधुर ध्वनियों का, रिमझिम फुहार का, आकाश में उड़ती वक–पंक्ति का पावस ऋतु के प्रसंग में जो उत्तेजक वर्णन किया है, वह अनूठा बन पड़ा है। देखिये–

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', पृष्ठ 22

हरी हरी भूमि तामें इन्द्र की बधूटी राजैं,

सुमन कतान सों बढ़ी है प्रभा वन की।

वादुर चकोर मोर चातक कपोत कीर,

बोलैं चहुँ ओर झरी लागी वारिकन की।।

रतनेश विमल उड़ाती वक पाँती नभ,

ऋतु मन भाई जानि दम्पति मिलन की।

शीतल समीर धीर चलत कलिन्दी तीर,

प्यारी चलि देखो कुंज शोमा श्याम घन की।।[1]

उपर्युक्त छन्द में शरद ऋतु को दम्पति मिलन की ऋतु बतलाकर कवि ने स्वयं के रसज्ञ होने का परिचय प्रस्तुत किया है। भावों के प्रतिबिम्ब के रूप में किया गया यह वर्णन अत्यंत आकर्षक है।

प्रकृति का मानवीकरण करते हुये कवि ने कहीं वसन्त बहार को मालिन बनाया है, तो कहीं यमुना को सखियों के साथ स्नान करते दर्शाया है। देखिये—

गेंदा गुलदाउदी मुलाबन की डाली साजे,

आई बनि मालिन वसन्त की बहार है।[2]

X X X

साथ सखियान के कलिन्दजा नहान आई,

रूप को उजास दसों दिसन बगरिगो।[3]

सारांशतः कहा जा सकता है कि रत्नेश भक्ति, श्रृंगार, रूप माधुरी तथा प्रकृति वर्णन में अद्वितीय क्षमता वाले कवि हैं। इनकी सरस एवं सहज वर्णन शैली पाठक का मन मोह लेती है।

1— रत्नेश शतक— पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', पृष्ठ 26

2— उपरिवत् — पृष्ठ 40

3— उपरिवत् — पृष्ठ 40

4-4-2 कृष्ण बल्देव वर्मा

वर्मा जी असाधारण विद्वान थे। बुन्देलखण्ड के प्रति असीम स्नेह था। उनका अधिकांश साहित्यिक लेखन बुन्देलखण्ड के वैभव को रेखंकित करता है। बुन्देलखण्ड का इतिहास लिखकर उन्होंने एक अनूठा कार्य किया है। बुन्देलखण्ड से सम्बंधित विभिन्न पत्र—पत्रिकाओं में जो तथ्य बिखरे थे, उन्हें संयोजित करने का महान क़ार्य वर्मा जी ने किया।

'बुन्देलखण्ड पर्यटन' लेख में समूचे बुन्देलखण्ड की भौगोलिक स्थिति, ऐतिहासिक विवरण, तीर्थ स्थल, दर्शनीय पर्यटक स्थल, कल—कल निनाद करती प्रवाहित नदियाँ, विशालकाय पर्वत, सघन अरण्य क्षेत्र, उपजाऊ बुन्देल भूमि, असीम श्रृद्धा के केन्द्र देवालय, लोक भाषा एवं कोलरुचियाँ, संस्कार सम्पन्न जन—समाज, रीति—रिवाज, प्राचीन रूढ़ियाँ एवं परम्परायें तथा विविध प्रकार के धर्माश्रम और प्रेरणा केन्द्रों का उल्लेख कर वर्मा जी ने बुन्देलखण्ड का सजीव चित्र सा उपस्थित कर दिया है।

वर्मा जी ने **'बुन्देलखण्ड का चित्तौर : ओरछा दुर्ग'** लेख में ओरछा दुर्ग का सामरिक महत्व प्रतिपादित करते हुये उसे चित्तौर दुर्ग के समकक्ष बतलाया है। जहाँ तक वर्मा जी के पद्य लेखन का प्रश्न है— महाराज शिवाजी के फारसी भाषा में लिखित पत्र का हिन्दी भावानुवाद वर्माजी की सफल काव्य रचना मानी जा सकती है। बुन्देल वैभवकार के अनुसार यह पत्र **वैशाख कृष्ण 14 सं. 1985 के 'हिन्दू पंच' कलकत्ता** के अंक में प्रकाशित हुआ था।[1]

बुन्देल वैभव में डॉ. गौरीशंकर द्विवेदी ने उनके तीन ग्रन्थों का विवरण दिया है। 1. **भर्तृहरि— नाटक**, 2. **प्रेत यज्ञ— नाटक**, तथा 3. **छत्रप्रकाश।**[2] नाटक **'भर्तृहरि राज—त्याग'** उपलब्ध हो सका है। शेष अनुपलब्ध हैं। सम्भव है बुन्देल वैभवकार ने भर्तृहरि राज—त्याग के स्थान पर भर्तृहरि नाटक नाम भूल से लिख दिया हो।

1— बुन्देल वैभव— डॉ.गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', पृष्ठ 722

2— उपरिवत्, पृष्ठ 721

भर्तृहरि राज–त्याग नाटक 3 अंकों तथा 23 दृश्यों में विभाजित है। इसमें भ्रातृ स्नेह का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया गया है। यह नाट्यकृति एक पौराणिक मिथक चरित्र भर्तृहरि पर आधारित है। विक्रमादित्य (उज्जैन नरेश–चक्रवर्ती राजा), लोलंबराज (बिदूषक), काली, हरी, धीरसिंह तथा वीरचन्द्र (डकैत), कामकन्दला (रानी– नाटक की नायिका), कमला, प्रभावती, मानवती, कादम्बरी, नलिनी तथा चंचला (महिला पात्र), कोटपाल (पुलिस अधिकारी) तथा भर्तृहरि (नाटक का प्रमुख धुरी चरित्र) आदि नाटक के प्रमुख पात्र हैं। इस नाटक का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न विन्दुओं पर आधारित है।

नीति निर्देशन कृष्ण बल्देव वर्मा के इस नाटक में कुछ नीति वाक्यांशों के प्रयोग मिलते हैं। जैसे–

अ– दुष्ट के साथ उपकार करो, अंत में अपयश होता है।[1]

ब– बुद्धिमानों का स्त्रियों से दूर रहना ही योग्य है।[2]

स– अपराधी को दण्ड बिना छोड़ना अन्याय के हेतु दूसरे का उदाहरण बनाना है।[3]

उपर्युक्त नीति सूचक वाक्यांशों से सिद्ध है कि लेखक नैतिक आदर्शों के प्रति सचेष्ट तो है ही, अपने लेखन में भी नीति निर्वाह हेतु सक्रिय है।

सत्याचरण–

नाटक में धीरसिंह डाकू का कथन है– **'बेटा हम यद्यपि डकैत हैं पर वचन के दृढ़ होते हैं, निर्बलों का पक्ष लेते हैं, तुम्हारे पिता मेरे मित्र थे, चलो यदि**

1– भर्तृहरि राज–त्याग, अंक प्रथम, तृतीय दृश्य, पृष्ठ 44 (यह नाटक इतनी जीर्ण शीर्ण स्थिति में उपलब्ध हुआ है कि इसमें प्रकाशक तथा प्रकाशन वर्ष का पृष्ठ ही नहीं है।)

2– उपरिवत्– अंक द्वितीय, तृतीय दृश्य, उपृष्ठ 191

3– उपरिवत्– अंक तृतीय, प्रथम दृश्य, पृष्ठ 343

तुम्हें कहीं शरण न हो, तो चलो आज से मेरे रमने में रहो, मैं इस विश्वासघाती को नाकों चने बिनवा दूँगा, तुम्हें बेटा कर मानूंगा।[1]

एक अन्य कथन में भर्तृहरि अपने भ्राता विक्रमादित्य से राज्यभक्ति के सच्चे स्वरूप का व्याख्यान करते हैं।– **'धर्मयुक्त शासन करना। मेरी भक्ति तुम्हारे लिये है कि तुम मुझसे भी अधिक होओ, राज्य करते तपस्वी बनो, यही तुम्हारी उत्कृष्टता है।'**[2]

उक्त कथनो से सत्याचरण एवं भ्रातृ स्नेह का संदेह प्रसारित होता है एवं नाटककार की उच्च विचार भावना प्रतिभाषित होती है।

वैश्या का आदर्श– जब कोटपाल रानी कामकन्दला के साथ व्यभिचार करता है तो वैश्या कोटपाल को डाटती हुई कहती है– **'जिसके धन से हड्डियाँ बनी उसी की स्त्री में व्यभिचार, अरे ये तो अपनी माता, भगिनी पर भी कुदृष्टि करते होंगे। हम जो वैश्या कहाती हैं, हमारी आत्मा तुम्हारी बातें सुनकर झिझकती है।'** तथा **'एक महाराज से संसार का आज पालन हो रहा है। हम सब उन पर बलि हो जावें। महाराज का शिर भी न दुखे, मैं वैश्या हुई तो क्या, पर क्या मेरा आत्मा उचित अनुचित को नहीं बताता है।'**[3]

यहाँ मानवीय उच्च आदर्श के समक्ष समाज में व्याप्त भृष्टाचार का पराभव दिखाया गया है।

राग एवं त्याग– कृष्ण बल्देव वर्मा जी ने अपने नाटक **'भर्तृहरि राज–त्याग'** में भ्रात–स्नेह की पराकाष्ठा का प्रदर्शन किया है। राज्य के प्रति राग एवं त्याग का अन्तर स्पष्ट करने वाले निम्न कथन दृष्टव्य हैं– **'अरे उससे पूछो कि राग से त्याग बड़ा होता तो यह सृष्टि और वह कहाँ से आता?'**[4]

1– भर्तृहरि राज–त्याग, पृष्ठ 91

2– भर्तृहरि राज–त्याग, अंक तृतीय, दृश्य तृतीय, पृष्ठ 368

3– भर्तृहरि राज–त्याग, अंक प्रथम, दृश्य प्रथम, पृष्ठ 39

4– उपरिवत्, पृष्ठ 115

एक अन्य कथन देखिये– **'यदि त्याग से राग बड़ा नहीं तो विश्वामित्र जी ने तप छोड़कर मैनका से क्यों समागम किया?'**[1]

यहाँ लेखक ने आसक्ति और अनासक्ति तथा मोह और बिरक्ति का अन्तर स्पष्ट किया है तथा सामाजिक संदर्भों में उसकी उपादेयता पर विमर्श प्रस्तुत किया है।

भ्रातृ–प्रेम– भर्तृहरि का भाई के प्रति अगाध प्रेम, त्याग और न्यायपथ निम्न पंक्तियों से स्पष्ट है–

'राज्य तुम्हारा, यह मुकुट तुम्हारा, न्यायपंथ पर चलना, मैं तो कातर हो सृष्टि त्यागता हूँ। मैं इस योग्य नहीं कि इस पर आधिपत्य रख सकूँ। इसके छल, कपट, मोहमात्मर्य, ईर्ष्या, दंभ के वीरों ने मुझे परास्त कर दिया। लो मैं सब से विदा हो जाता हूँ।'[2]

वस्तुतः भ्रातृ–प्रेम ही इस नाटक का मुख्य प्रतिपाद्य है तथा स्नेहाधिक्य के कारण ही भर्तृहरि अपने भाई विक्रमादित्य के लिये राज्य का त्याग सर्वोपरि मानते हैं।

सम्पूर्ण नाटक में नाटकीय विशेषताओं का सफलतम निर्वाह किया गया है। कथावस्तु, कथोपकथन, भाषा–शैली, देशकाल वातावरण तथा उद्देश्य सभी तत्वों को दृष्टि में रखते हुये यह कहा जा सकता है कि कृष्ण बल्देव वर्मा का **'भर्तृहरि राज्य–त्याग'** नाटक एक सफल नाटक है। इसके अतिरिक्त इनका कोई भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो सका है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि श्री कृष्ण बल्देव वर्मा का साहित्य मूल्यांकन की दृष्टि से बेजोड़ एवं अनूठा है। महान विद्वान होकर भी सरल व्यक्तित्व के धनी श्री वर्मा जी के सम्बन्ध में जितना भी कहा जाय कम है। बुन्देलखण्ड के गौरव, अद्भुत क्षमतावान साहित्यकार, अपरिमेय व्यक्तित्व के साक्षात् प्रतिरूप तथा उच्चकोटि के समीक्षक श्री कृष्ण बल्देव वर्मा के सम्बन्ध में कुछ भी कहना सूर्य को दीपक दिखाना है।

1– भर्तृहरि राज–त्याग, अंक प्रथम, दृश्य प्रथम, पृष्ठ 113

2– भर्तृहरि राज–त्याग, अंक तृतीय, दृश्य तृतीय, पृष्ठ 355

4-4-3- रसिकेन्द्र

श्री गोविन्दशरण गुप्त ने लिखा है— **'कृष्ण बल्देव ने बढ़ाई नव आभा और पाके रसिकेन्द्र को सिहाई यह कालपी'** अर्थात् जिस प्रकार बाबू कृष्ण बल्देव वर्मा ने जन्मलेकर कालपी को गौरवान्वित किया, ठीक उसी प्रकार रसिकेन्द्र के जन्म से कालपी पूर्णतः सन्तुष्ट हुई। यह कालपी का सौभाग्य है जहाँ कृष्ण बल्देव वर्मा तथा रसिकेन्द्र जैसे साहित्य मनीषी अवतरित हुए।

रसिकेन्द्र राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के बहनोई तथा काली कवि के शिष्य थे। **'मनहर वीर ज्योति'** इनका मनहर छन्द में लिखा अद्‌भुत काव्य संग्रह है। यह संग्रह वीर विकास, वीर बाला—विभूति, देश—दीप्ति, अन्योक्ति—आभा, कतिपय कण—कान्ति तथा मरमेश प्रकाश—छः सर्गों में विभक्त है। रचनाओं को वर्ण्य विषय की विशिष्टता के अनुसार वर्गीकृत किया गया है।

काव्य संग्रह के प्रारंभ में नाम की सार्थकता अर्थात् **'वीर ज्योति'** की महत्ता पर प्रकाश डाला गया है। सुकवि—सम्पादक श्री सनेही जी **'मनहर वीर ज्योति'** की भूमिका में लिखते हैं— **'जिस समय देश दासता की बेड़ियाँ तोड़ने के लिये कसमसा रहा हो, उस समय न तो श्रृंगाररस की रसीली उक्तियाँ ही रुचतीं हैं और न अज्ञात रहस्य ढूढ़ने की ही सूझती हैं। उस समय तो केवल उत्साह बढ़ाने वाली वीर—वाणी ही नसों में गर्म खून दौड़ाती है।**[1] वीर रस का उद्‌भव वीर—वाणी में ही सम्भव है। वीर रसोद्‌भव की स्थिति का सजीव चित्रण देखिये—

आँख खुल जाती तीसरी ही सृष्टि शंकर की,
दृष्टि में खलों की चकाचौंध लग जाती है।
'रसिकेन्द्र' शक्ति महाशक्ति की समाती आके,
आत्मबल—विजय की तोप दग जाती है।।

1— भूमिका—मनहर वीर ज्योति, सनेही—सुकवि सम्पादक, रसिकेन्द्र पुस्तकालय, कालपी यू.पी.,1995, पृष्ठ (ख)

रीति होती धर्म की, प्रतीति कर्म योग पर,

साथ होती जीत प्रीति नीति पग जाती है।

भीरुता–विभावरी का विभव विनाश होता,

जब जगती में वीर ज्योति जग जाती है।।[1]

उपर्युक्त छन्द में पृथ्वी पर वीर ज्योति के उद्भव की प्रतिक्रियाओं पर प्रकाश डाला गया है। जैसे– शंकर के तृतीय नेत्र का खुलना, खलों की दृष्टि में चकाचौंध लगना, महाशक्ति की शक्ति का व्याप्त हो जाना, आत्मबल–विजय की तोप का दग जाना, प्रीति की नीति का पग जाना, भीरूतारूपी विभावरी के वैभव का विनाश हो जाना आदि। तात्पर्य यह है कि वीर भावना कवि हृदय में जाग्रत होकर जगतीतल पर वीर–रस की स्रोतस्विनी तो प्रवाहित कर ही देती है, साथ ही देश को जाग्रत कर कर्तव्य पथ भी आलोकित कर देती है।

रसिकेन्द्र की कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत है–

मनहर वीर ज्योति– राष्ट्रीय भावना :–यहाँ एक बात स्मरणीय है कि राष्ट्रीयता में वीरता हो सकती है, प्रायः होती है, पर केवल वीरता का नाम राष्ट्रीयता नहीं होती। रसिकेन्द्र की श्रेष्ठतम कृति **'मनहर वीर ज्योति'** में राष्ट्रीय भावनायें वीररस के माध्यम से अभिव्यक्त हैं। सुकवि सम्पादक **'सनेही जी'** लिखते हैं कि–**'इस रचना में आदि से अन्त तक कड़ाके की एक ध्वनि है, जो वीरों को उत्तेजित कर सकती है, देश को जगा सकती है।'**[2] तात्पर्य यह है कि वीरत्व व्यंजक भावनायें वीर रस का संचार करके लोगों को अपने धर्म और कर्तव्य का बोध कराती हैं तथा जन–जागरण भी करती है। राष्ट्रीय भावनाओं से ओत–प्रोत वीर पुरुष हँसकर मृत्यु का वरण कर लेते हैं तथा राष्ट्र के प्रति वलिदान को ही सर्वोपरि मानते हैं। एक उदाहरण देखिये–

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 1

2– भूमिका– मनहर वीर ज्योति, सुकवि सम्पादक 'सनेही', पृष्ठ (च)

जान पर खेलते हैं, झेलते हैं संकटों को,
भूलकर भीरुता का भाव भरते नहीं।
तरते हैं दुस्तर समर–सिंधु साहस से,
आगे बढ़ते हैं पैर पीछे करते नहीं।।
टलते नहीं है 'रसिकेन्द्र' टेक टालते न,
माँस भोजी भूखे सिंह घास चरते नहीं।
करते हैं कीर्ति और हरते है काल–मद,
हँसकर मरते हैं वीर डरते नहीं।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि वीरों के लक्षणों को उदघाटित करते हुये कहता है कि वीर पुरुष संकट से टलते नहीं हैं और न अपनी प्रतिज्ञा को टालते हैं। जिस प्रकार माँस भक्षक भूखे सिंह घास नहीं चरते, उसी प्रकार वीर लोग दुस्तर समर–सिन्धु को साहस पूर्वक पार करते हैं, पीछे नहीं हटते।

कवि उन हाथों को निकम्मा बतलाता है जो केवल नाम मात्र के हाथ हैं, वे हाथ जो शत्रुओं को काट–काटकर रण स्थल न पाट दें, किसी काम के नहीं। पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

कीर्ति कारणी को करने में जो कसर करें,
कर कर कायरता 'कर' रहे नाम के।
खाके माल मुफ्त का कमाल किया फूलने में,
देते हैं दिखाई मानों बण्डल हैं चाम के।।
काम कर देश का, कमायें कहो, नाम क्या वे,
काम ने बनाये हैं गुलाम जिन्हें वाम के।
पाट न दें लोथों के समूह से रण–स्थल को,
काट न दें शत्रु को वे हाथ किस काम के।।[2]

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 9

2– उपरिवत्, पृष्ठ 13

तात्पर्य यह है कि जिन हाथों ने देश का कोई काम नहीं किया अर्थात् देश के किसी काम न आये, मुफ्त का माल खा–खाकर मोटे होते रहे तथा जो हाथ काम वासना से पीड़ित होकर वाम के गुलाम बन गये, वे चाम के बण्डल के समान निरर्थक हैं अर्थात् किसी काम के नहीं। कवि एक ओर वीरों की छाती का वर्णन करता हुआ –'खाती चोट, छाती कीर्ति, पाती फल जीवन का, दूनी सी दिखाती छाती वीरों की समर में' कहता है तो दूसरी ओर आदर्श हाथों का वर्णन इस प्रकार करता है–

वैभव बदन के हैं, शक्ति के सदन बने,
रहते सदैव वधु–वीरता के साथ हैं।
बल के निशान, बलवान की बढ़ाते शान,
मान करते हैं गुणी गाते गुण–गाथ हैं।।
जान पर खेलने को खेल जानते हैं सदा,
'रसिकेन्द्र' पाते त्राण जिनसे अनाथ हैं।
हौसला हटाते हैं, हठीले हेकड़ों को हरा,
होड़ हेकड़ी से बदें वे ही हाथ हाथ हैं।।[1]

वीरों के हाथों की सार्थकता सिद्ध करते हुये कवि नें वीरता रूपी वधू के सदा साथ रहने वाले, शक्ति के भंडार तथा हेकड़ी से होड़ बदने वाले हाथों को ही सफल हाथ घोषित किया है।

राष्ट्र की सुरक्षा में रण–यात्रा में गमन करने वाले वीरों को चंचल, चपल लोचनों की कला तथा तन की तरुणाई विचलित नहीं कर पाती। क्योंकि वे वीरता–वधू से भेंट करने की कामना से रण–भूमि के गमन का संकल्प लेकर चले हैं। उदाहरण देखिये–

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 11

चंचल चपल लोचनों की न चलेगी कला,
विचला सकेगी नहीं तरुणाई तन की।
जोश है बढ़ाया छवि–छाया का घटाया दर्प,
आया होश, मोहती न माया है मदन की।।
वीरता वधू के साथ भेंट करने के लिए–,
कामना किये है रण भूमि के गमन की।
रोके न सकेगा वीर, तकेगा न तेरी ओर,
मिट न सकेगी पीर, मुग्धे तेरे मन की।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि मुग्धा नायिका को इंगित करके कहता है कि मुग्धे, उस वीर पुरुष पर तेरे चंचल नेत्रों का तथा कामदेव की माया का कोई प्रभाव नहीं होगा। वह तेरे सौन्दर्य को देखेगा भी नहीं और वह वीर तेरे मन की पीर नहीं मिटा सकेगा।

नारी जागरण – रसिकेन्द्र ने अपनी कविता के माध्यम से महान नारियों की गाथा का वर्णन कर नारीजागरण का अभियान छेड़ा है। कवि ने सीता, जीजाबाई, अहिल्याबाई, लक्ष्मीबाई, गणेश कुवंरि तथा राजपूत रमणियों एवं वीर वालाओं की गौरव–गाथा गाकर नारी–जागृति का सन्देश प्रसारित किया है। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के शौर्य एवं पराक्रम को निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया गया है। देखिये–

छाई देख भारत में भीरुता की यामिनी को,
वीर–भामिनी की दीप्ति दामिनी सी दमकी।
'रसिकेन्द्र' तमकी तरणि का – सा तेज धर,
धज्जियाँ उड़ा दीं कूट–कौशल के तम की।।
काटे कान ज्वानों के भी, रण में न डाटे डटी,
दुखों के सपाटे सहे, हिम्मत न कम की।
होकर अमर लक्ष्मीबाई कीर्ति छोड़कर,
सुर–नारियों की शिर–चन्द्रिका हो चमकी।।[2]

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 25

2– उपरिवत्, पृष्ठ 44

तात्पर्य है कि जब लक्ष्मीबाई ने देश के वीरों की वीरता को डगमागाते देखा तो वीरता की साक्षात् प्रतिमूर्ति रानी की दीप्ति दामिनी सी दमकने लगी तथा शत्रुओं के कूटनीतिक कुशलतापूर्ण षणयंत्रों की धज्जियाँ उड़ाने को सन्नद्ध हो गई। विविध संकटों का संघर्ष झेलते हुये साहस का ह्रास नहीं होने दिया। अपनी गरिमामयी कीर्ति के कारण लक्ष्मीबाई देवांग्नाओं से भी श्रेष्ठ सिद्ध हुई।

महान प्रतिमाओं का प्रेरणादायी जीवनवृत्त अथवा उनकी कीर्ति गाथा पाठकों को अनुकरण के लिये प्रोत्साहित करती है। महान नारियों के प्रेरक–प्रसंगों को नारी समाज की जागृति स्वाभाविक है। पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित वर्तमान वैज्ञानिक युग में पाश्चात्य संस्कृति अपना दूरगामी स्थाई प्रभाव छोड़ रही है। हमारा देश अतीत के महान प्रतिमानों का परित्याग कर विदेशी सभ्यता के रंग में रंगता जा रहा है। ऐसी ह्रासोन्मुखी अशान्त स्थिति में **रसिकेन्द्र** ने महान गौरव–गाथाओं को अपना प्रतिपाद्य बनाकर देश के प्रति सच्चे अर्थों में अपने कर्तव्य का निर्वहन किया है। महान योद्धा नारी जीजाबाई की वीरतायुक्त गाथायें रोमांचकारी हैं। रसिकेन्द्र ने शिवाजी के प्रति उनके प्रेरक सन्देशों को प्रस्तुत किया जिसमें प्रेरणा, उत्तेजना तथा चेतावनी भी मिश्रित है। उदाहरण देखिये–

ढंग अवरंग का बना है रंग–भंगकारी,

धार्मिक स्वतंत्रता फँसी है शाह–कारा में।

जीजिया का पूत है सपूत रे शिवाजी, तू तो,

सोच क्या रहा है? खड़ा वाहिनी–किनारा में।।

भटका न मन व्यर्थ चिन्तन में भीरू बन,

अटका न चित्त सुद, धन–धाम–दारा में।

अंग में उमंग ले, भवानी खड्ग संग में ले,

कूद जंग धारा में, या डूब गंग धारा में।।[1]

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 37

उपर्युक्त छन्द में कवि ने जीजाबाई द्वारा शिवाजी को दिये गये प्रेरणास्पद सन्देश का चुनौतीपूर्ण वर्णन प्रस्तुत किया है। कहा है कि औरंगजेब के दुष्कृत्यों से धार्मिक स्वतंत्रता प्रतिबन्धित हो गई है, तू ऐसी विषम स्थिति में अपने मन को भीरूता से बचाकर व्यर्थ भटकने से रोक ले तथा धन–धाम और सुत–दारा में न उलझने दे। तेरे लिये दो ही विकल्प हैं– या तो तलवार लेकर युद्ध में प्रवृत्त हो जा अथवा गंगा की धारा में डूबकर प्राणान्त करले। इस उत्तेजक सन्देश को कवि ने कितनी सफलता के साथ ओजस्वी भाषा में अभिव्यक्त किया है, देखते ही बनता है। एक और उत्तेजना पूर्ण कथन देखिये–

बेटा सिंहिनी का हो लजाना नहीं दूध माँ का,
वीरता से पाना पदवी तू सिंह–छौना की।
'काली' हो करेगी रखवाली तेरे मस्तक की–,
ज्योति जयवाली देश–सेवा के दिठौना की।।[1]

वीर लोग युद्ध में अपनी आन–वान–शान को ध्यान में रखते हुये प्राणों को न्योछावर करने को तत्पर हो जाते थे। जीजाबाई उसी सुदृढ़ संकल्प को दोहराकर माँ का दूध न लजाने की आन देती है तथा देश–सेवा की दुहाई देकर सुरक्षा के प्रति आश्वस्त भी करती है।

देश का गुणगान– रसिकेन्द्र ने राष्ट्रभक्ति से प्रभावित होकर देश की गौरव गाथा को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करते हुए वीरता के आदर्श को उपस्थित किया है। **'रसिकेन्द्र धर्म–ध्येय–ध्यान भूलता न धन्य, भारत समान अन्य कौन दानवीर है'** तथा **'आत्म अभिमान का वितान ही रहा था तान, जानदार भारत की शान ही निराली थी'** जैसी उक्तियाँ गौरवान्वित भारतवर्ष की प्रशस्तिगायन के लिये पर्याप्त हैं। राष्ट्रभक्ति ने कवि को देश–गान के लिये प्रेरित किया। वीर–भूमि भारत की एक झलक पर कवि निछावर होता है। एक उक्ति देखिये–

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 38

लज्जित धनेश रहे, सज्जित विलोक वेश,

सभी देश ललके थे जिसकी ललक पर।

रसिकेन्द्र वीर–प्रण–पाल लाल झूले सदा,

पलना विशाल देव–ललना–पलक पर।।

होती है निछावर प्रखर पश्चिमीय प्रभा,

मणि–रत्न–मयी पूर्व–छवि की छलक पर।

पाऊँ मोद–गोद में विनोद छाऊँ, गाऊँ गुण,

बलि–बलि जाऊँ वीर भूमि की झलक पर।।[1]

पाश्चात्य देशों का ऐश्वर्य जिस भारतभूमि पर बलिहारी जाता है, सभी देश जिसके सज्जित वेश को देखने को ललकते हैं, बड़े–बड़े विकसित राष्ट्र जिसे देखकर लज्जित हो जाते हैं, ऐसे वीर भूमि भारत की गोद में बैठकर, विनोद मग्न होकर कवि देश के गुण गाता है। भारत में अवतरित लोकमान्य तिलक जैसे साहसी परमवीर की प्रशंसा में एक उक्ति दर्शनीय है–

भारत ने पाके बालरवि का प्रकाश नया,

करदी प्रकट नव–ज्योति उजियाली थी।

रसिकेन्द्र राजनीति नित्य तपती ही गई,

जा सकती तपी की तपस्या कहीं खाली थी।।

बोलती थी तूती पूर्णशक्ति और साहस से,

मजबूती दास्य–श्रृंखला की हिला डाली थी।

कँपे थे कलेजे कूट–नीति–रत कुंजरों के,

लोकमान्य केशरी की गर्जना निराली थी।।[2]

जिन्होंने अपने अपूर्व साहस से मजबूत दास्य–श्रृंखला को झकझोर डाला था, शत्रुओं के दिल दहला दिये थे, ऐसे लोकमान्य केशरी

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 59

2– उपरिवत्, पृष्ठ 58

की मुक्तकंठ से रसिकेन्द्र ने जो प्रशंसा की है, वह उनकी देश के प्रति भक्ति भावना का परिचय प्रस्तुत करती है।

भक्ति–भावना– रसिकेन्द्र मूलतः वीर रस के कवि थे। वीर भावना उनमें कूट–कूटकर भरी थी। किन्तु जिस प्रकार रीतिकालीन श्रृंगारी कवि श्रृंगारिक रचनाओं से ऊबकर भक्ति की ओर उन्मुख हुए थे, उसी तरह सम्भव है कि संसार में बढ़ते अन्याय और अत्याचार को देखकर रसिकेन्द्र भी ईश्वरोन्मुख हुए हों। कवि समाज में व्याप्त छुआछूत के भूत को देखकर पीड़ित है, दुखियों पर होने वाले दुराचारों से दुखी है। ऐसी स्थिति में कवि का भक्त हृदय भगवान की आशा करता है, सोचता है, न जाने भगवान कब आकर धर्म की रक्षा करेंगे। इस सन्दर्भ में एक उदाहरण देखिये–

पायेंगे अभीष्ट सिद्धि भारतीय भक्त कब?
भारत का भाग्य–भानु कब चमकायेंगे?
छायेंगे प्रकाश कब, कष्ट–तम नाश कर?
दासता की पाश कब आकर हटायेंगे?
ढ़ायेंगे कराल–क्रूर काल का प्रभुत्व कब?
धर्म की विशाल ध्वजा कब फहरायेंगे?
गायेंगे खुशी के गाने, प्रेम के दिवाने कब?
जानें 'रसिकेन्द्र' भगवान कब आयेंगे?[1]

दासता के बंधनों से छटपटाता हुआ, कष्ट रूपी अंधकार से पीड़ित कवि अपने भाग्यरूपी सूर्य के चमकने की आशा करता है और सोचता है न जाने भगवान की कृपा से प्रेम के दीवाने कब खुशी के गीत गा पायेंगे।

कवि अपनी जिह्वा को राम–कथा का रसपान करने की प्रेरणा देता हुआ कहता है–

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 108

पूज्य कृतियों का पूर्ण मान करने के लिये–

ग्यान–गुरू–गौरव का गान कर रसने।

'रसिकेन्द्र' पूर्वजों की आन, बान, शान पर–

भक्ति–भरी भावना का दान कर रसने।।

मुक्ति मिल जायगी, तू पायगी परम पद,

सत्य धर्म–धारणा का ध्यान् कर रसने।

सरस सुधा की वृष्टि बरस रही है, बस,

राम की कथा का रस–पान कर रसने।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि अपनी रसना को ग्यानरूपी गुरू का गौरव गान करने के लिये, भक्ति–भरी भावना का दान करने के लिये, सत्य धर्म–धारणा का ध्यान करने के लिये तथा राम–कथा का रसपान करने के लिये उद्‌बोधित करता है और आशा एवं विश्वास भी प्रकट करता है कि भक्ति से मुक्ति एवं परम पद दोनों सुलभ हो सकते हैं। कवि कभी भगवान की मुस्कान–माधुरी की झलक देखने को लालायित होता है, तो कभी मुरली की लय में कर्मराग अलापने की प्रार्थना करता है। कभी पीड़ितों की आह में भगवान की रोती हुई मूर्ति को देखता है, तो कभी भगवान को उनके **'निर्बल के बलराम'** विरुद की स्मृति दिलाता है। इससे स्पष्ट है कि भक्त कवि को देश की दीन–हीन दशा पर पश्चाताप है, साथ ही परमात्मा के प्रति अगाध विश्वास भी है।

पारिजात विजय– रसिकेन्द्र ने अपने **'पारिजात विजय'** खण्ड काव्य में नारी की विविध रूपिणी प्रतिभा का परिचय प्रस्तुत करते हुये कहा है कि नारी सुकुमारता की मूर्ति है, किन्तु जब वह रौद्र रूप धारण करती है, भूचाल आ जाता है, प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित हो जाता है। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

1– मनहर वीर ज्योति, पृष्ठ 118

फूल से सदैव रहतीं हैं तुलतीं जो नित्य,

डुलतीं समीर लगने से सुकुमारियाँ।

'रसिकेन्द्र' पूजतीं पवित्र पति–पद–पद्म,

सींचतीं हैं प्रेम–वाटिका की कुंज क्यारियाँ।।

वे ही जब वीरता की मूर्ति बनतीं हैं, तब–

सामने आ सिद्धि स्वयं लेतीं बलिहारियाँ।

अमरों की प्यारियाँ भी देख के सिहातीं जिन्हें,

होतीं पूज्य भारत में ऐसी वीर नारियाँ।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने सौकुमार्य की प्रतीक, कोमलांगी नारियों के परिवर्तित रूप के प्रभाव को प्रकट किया है। ऐसी वीरांगनाओं को देखकर सिद्धियाँ भी न्यौछावर हो जाती हैं तथा देव–रमणियाँ भी सन्तुष्ट हो जाती हैं।

'पारिजात विजय' का ही एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत है, जिसमें वीर नारी का वैभव वर्णित है, जिससे नारी वर्ग को प्रोत्साहन तो मिलता ही है, साथ ही वीर नारियों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की प्रेरणा भी मिलती है–

बरछी–बरौनियों से वेधतीं विमूढ़–बल,

कुटिलों को काटतीं कटाक्ष की कटारी से।

लम्पटों की लालसा लचातीं लाल लोचनों से,

अन्त अधमों का करतीं हैं ओज–आरी से।।

देख देह दीप्ति दम्भियों का दर्प दूर होता,

पातकी परास्त होते पति–प्रेम–प्यारी से।

तरणि सा तेज तचता है तरुणी का तब,

वैरी बन कौन बचता है वीर नारी से?[2]

1– पारिजात विजय– रसिकेन्द्र, पृष्ठ 15

2– उपरिवत् –पृष्ठ 20

तात्पर्य है कि नारी के जो कटाक्ष आकर्षण तथा स्नेह संबंर्धन में सहायक होते हैं, वही दुष्टों के दमन में अग्रणी रहते हैं। नारी लाल नेत्रों से लम्पटों की लालसा कम करती है, तो ओज रूपी आरी से अधमों का अन्त भी करती है। नारी की आकर्षक देह–दीप्ति दम्भियों के घमंड को चूर–चूर कर देती है तथा सूर्य के समान प्रचण्ड तेज से नारी का कोई शत्रु बच नहीं पाता।

'रसिकेन्द्र–रंजन' –स्वर्गीय रसिकेन्द्र जी का अप्रकाशित स्फुट कविताओं का संकलन हैं। इस संकलन में भक्ति, श्रृंगार, वीरभावना, देशभक्ति, दीपावली, दशहरा, होली आदि पर्व, ब्रजभाषा के दोहे आदि विविध विषयों की रचनायें संकलित हैं। उनके समय में समस्या पूर्ति का विशेष प्रचलन था। राष्ट्रभक्तों के स्तवन भी उपलब्ध हैं। अछूतोद्धार उनका प्रिय विषय था। मातृभाषा हिन्दी के पुजारी थे। **'प्रख्याति पंचदशी'** में नाम कमाने के इच्छुक प्रेमियों को हास्य के माध्यम से कुछ नियम बतलाये गये हैं। एक उदाहरण देखिये–

'यदि लेखक बन नाम चाहते तो हिन्दी से छोड़ो प्यार।
जानबूझकर करते जाना संस्कृत शब्दों की भरमार।।
अड़चल ,अड़चन या उड़चल से कुछ न तुम्हारा अटका काम।
नये नये शब्दों को गढ़कर विद्या–दिग्गज पाना नाम।।[1]

उपर्युक्त छन्द में हास्य के माध्यम से लेखकों पर व्यंग्य किया गया है। अछूतोद्धार पर कुछ पंक्तियाँ देखिये–

न मान का ध्यान उन्हें कभी है,
न द्रव्य की शान उन्हें कभी है।
स्वधर्म–रक्षा सब काल की है,
पड़ा जहाँ संकट जान दी है।।
किया उन्हें दूर बिना बिचारे।
अछूत भी हैं हरि के दुलारे।।[2]

1– रसिकेन्द्र रंजन – रसिकेन्द्र, अप्रकाशित, पृष्ठ 45

2– उपरिवत्, पृष्ठ 48

'कविता कामिनी का क्रन्दन' नामक कविता की निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

धन की बन अनुगामिनी, लुटारहीं श्रृंगार है।
कुढ़कर कविता कामिनी, करती हाहाकार है।।[1]

उक्त पंक्तियों में कविता के मूल्य में गिरावट को तो दर्शाया ही गया है, कविता की स्वच्छन्द गति में धन् को अवरोधक भी बतलाया है।

रसिकेन्द्र जी के निवास पर आये दिन कवि गोष्ठियाँ हुआ करती थीं, जिसमें समस्यापूर्ति एक प्रमुख कार्यक्रम होता था। सामान्य काव्य–पाठ के उपरान्त एक समस्या दे दी जाती थी, अगली काव्य–गोष्ठी में क़वि वृन्द पूर्ति करके सुनाया करते थे। रसिकेन्द्र जी द्वारा 'सोने को' समस्या की पूर्ति का एक उदाहरण ही पर्याप्त है।–

मानव कहाये न दिखाये मानवीय गुण,
व्यर्थ हीं बिताये दिन, धिक् जन्म होने को।
बार–बार ठोकरें लगीं न चेत तो भी हुआ,
भ्रान्तिवश धृत लगे वारि से बिलोने को।।
पतन हुआ है पूर्ण, यत्न अब कींजे बन्धु,
बढ़ो निज माथ से कलंक–पंक धोने को।
पाना यदि नाम है तो काम दिखलाओ कुछ,
जीवन मिला है नहीं आठों याम सोने को।।[2]

उपर्युक्त छन्द में **'सोने को'** समस्या की पूर्ति विस्तृत विवेचन के साथ की गई है।

रसिकेन्द्र पर गाँधीवाद का विशेष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। उनकी कविता में गाँधीवादी सिद्धान्तों की छाप कदम–कदम पर अपना रंग बिखेरती दिखाई देती है। उनकी **'विजयिनी विजया कब आयेगी'**, **'ज्योतिकी की**

1– रसिकेन्द्र रंजन – रसिकेन्द्र, अप्रकाशित, पृष्ठ 60

2– उपरिवत्, पृष्ठ 43

झाँकी', 'श्री तिलक–स्तव–सप्तक', 'शुमाशा' तथा **'अछूत भी हैं हरि के दुलारे'** आदि कवितायें इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

रसिकेन्द्र जी 'सपूत' नामक कविता में लिखते हैं–

सीख चुका जो विश्व प्रेम का मंत्र निराला।

पीकर हुआ प्रमत्त, एकता का शुचि प्याला।।

सबको भाई समझ हृदय में उन्हें बिठाला।

भेद–भाव के रंग–मंच पर परदा डाला।।

जिसके सच्चे त्याग से पाता त्राण अछूत है।

भारत माँ का लाड़ला सच्चा वही सपूत है।।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने उसे ही भारत माँ का सच्चा सपूत बताया है, जो विश्व–प्रेम का निराला मंत्र सीखकर तथा एकता रूपी मदिरा का पवित्र प्याला पीकर मतवाला हो गया हो। जिसने भेद–भाव को मिटाकर अछूतों को हृदय से लगाया हो। यहाँ पर हरिजन–कल्याण की प्रबल विचार धारा गाँधीवादी प्रभाव को परिलक्षित करती है।

पं. बेनी माधव तिवारी

साहित्य, राजनीति और ललितकला के भी समवेत स्वरूप पर तिवारी जी का समान अधिकार था। उनकी चमत्कारिक कृतियाँ उत्साह, साहस और सूक्ष्मदर्शिता की ज्योति–शिखायें हैं। पद्य के साथ गद्य लेखन में भी उनका वर्चस्व था। राष्ट्रीयता की भावना उनमें कूट–कूटकर भरी थी। वे जनपद के अग्रणी साहित्यकारों में थे। आपकी काव्यधारा में प्रवाहित हो श्रोता समाज रस, माधुर्य एवं आनन्द की हिलोरों में बह उठता था। आपके लेखों में जीवन को जगाने वाली शक्ति थी और उनकी प्रौढ़ लेखनी की धाक उनके विरोधियों को भी मान्य थी। अनेक पत्रों का सम्पादन कर आपने अपनी लेखनी का चमत्कार दिखाया था। **'हलचल'** तथा **'देहाती'** आपके प्रमुख साप्ताहिक समाचार पत्र थे।

1– रसिकेन्द्र रंजन – रसिकेन्द्र, अप्रकाशित, पृष्ठ 30

स्व. पं.बैनीमाधव तिवारी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर गाँधीवाद की अमिट छाप थी। अछूतोद्धार के प्रति वे कृत संकल्प थे। एक कवि सम्मेलन में पढ़ी हुई उनकी रचना का भाव देखने योग्य है।

हमने तो खिलाये उसे चाख–चाख मीठे बेर,

गंगा मइया पार नइया लेकर उतारा है।

विदुर हमीं थे, जहाँ खाया सानुराग साग,

हमीं ने कन्हैया उसे कहकर पुकारा है।।

तुमने तो एक बात हीं पै बस मारी लात,

भक्त बनने का अब ढोंग क्यों पसारा है।

ए हो द्विजराज खोलो मन्दिर के पट आज,

आपका नहीं है यह देवता हमारा है।।[1]

उक्त छन्द में मंदिर के द्वार पर जाकर एक हरिजन द्वारा ब्राह्मण पुजारी के प्रति कटूक्ति का वर्णन है। समाज के आडम्बर व ढ़ोंग का भण्डाफोड़ करने का भाव प्रदर्शित है।

तिवारी जी की सूक्तियाँ सारगर्भित एवं श्रोताओं के हृदय पर अमिट प्रभाव छोड़ने वाली होती थीं। उनमें संजीवनी शक्ति होती थी तथा वे हृदय में चुभ जाती थीं। जैसे–

मैम्बर वोटर की सहत, तीखी हू तकरीर।

नवल वधू सहलेत ज्यौं, प्रथम मिलन की पीर।।

तथा

बम पिस्टल से न काज बलराज से है।

पाएगा स्वराज्य हिन्द खद्दर के बल से।।[2]

अपनी विनोदप्रियता के बल पर वे अपने दुर्गम पथ को भी सुगम बना लेते थे और कष्ट में आनन्दानुभव करते हुए कहते थे–

1– साप्ताहिक हलचल–तिवारी विशेषांक, अक्टूबर 1953, लच्छीराम अहिरबार

2– उपरिवत् – सेवकेन्द्र त्रिपाठी, पृष्ठ 26

क्या मजा आए अगर आधी अँधेरी रात हो।

साइकिल पंचर हो, कच्चा रोड हो,बरसात हो।।

उपर्युक्त सूक्ति हास्योक्ति तो है ही, साथ ही भोगा हुआ सत्य भी है। तिवारी जी ने गम्भीर विषयों का शोधपूर्ण प्रतिपादन भी अपनी रचनाओं में किया है। **'उरई एकादशी'** कविता में उरई नगर के आस–पास ग्राम अभिधान का शोधपूर्ण विवेचन निम्न पंक्तियों में देखिये–

कवि कल्पना कोरी नहीं यह है,

इस बात का मैं हूँ प्रमाण भी पाता।

अज की नगरी का अपभ्रंश है,

'अजनारी' जहाँ रहते थे विधाता।।

इसी भूमि में ग्राम 'हरीपुरा' है,

जिस नाम से है हरिधाम का नाता।

प्रलयंकर शंकर थे जहाँ पै,

वह आज 'महेशपुरा' कहलाता।।[1]

उपर्युक्त छन्द में अजनारी, हरीपुरा तथा महेशपुरा ग्रामों के नाम हैं। कवि ने इनके अभिधान का सार्थक विवेचन करते हुए कहा है कि राजा अज से अजनारी नाम पड़ा तथा हरिनाम से हरीपुरा और शिव से महेशपुरा नाम कहलाया।

समाज सुधार उनके जीवन का ध्येय था। उन्होंने छुआछूत में कभी विश्वास नहीं किया। वह दिखावटी समाज सुधारक नहीं थे, बल्कि सक्रिय रूप से समाज के सुधारों में संलग्न रहते थे।

'हलचल' तथा **'देहाती'** समाचार पत्रों में उनकी सम्पादकीय टीका–टिप्पणी उच्च कोटि की होती थी। निर्भय होकर तटस्थ लेखन उनकी विशेषता थी। तिवारी जी की कविता के विषय में इतना ही लिखना पर्याप्त है उनकी रचनायें मौलिक तथा शिक्षाप्रद होती थीं।

1– उरई एकादशी–बेनीमाधव तिवारी

डॉ. आनन्द

साहित्य के प्रति डॉ. आनन्द की अटूट निष्ठा उनकी साहित्य सर्जना से स्पष्ट होती है। इनके काव्य में कहीं उनका हृदय आक्रोश, क्षोभ एवं टीस से तड़प उठा है, तो कहीं करुणा से सिक्त, सहानुभूति से मसृण एवं वेदना से कराह उठा है। इनके साहित्य में राष्ट्रप्रेम एवं सामाजिक सद्भावनाओं के मणि—कांचन योग के कारणः एक विशिष्ट दीप्ति प्रतिभासित होती है। डॉ. आनन्द सक्रिय राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करने वाले वैतालिक हैं। अपनी प्रवाहपूर्ण शैली, सजग चिन्तन एवं मार्मिक काव्य—सृजन के कारण वे काव्य क्षेत्र में अपना प्रथक स्थान रखते हैं।

डॉ. आनन्द की कृतियाँ निम्न प्रकार हैं—

1— **महारानी लक्ष्मीबाई**

2— **एम. एल. ए. राज**

3— **सन् अड़तालीस**

4— **शक्ति निदान**

5— **दारुलशफा**

6— **चीन और पाकिस्तान** (अप्रकाशित)

7— **वैश्या सती** (अप्रकाशित नाटक)

8— **पब्लिक इन्ट्रेस्ट** (अप्रकाशित)

1- झाँसी की रानी : महारानी लक्ष्मीबाई-

हिन्दी साहित्य की अमर कृति 'झाँसी की रानी' डॉ. आनन्द का अनूठा महाकाव्य है। इसमें उन्होंने वीरता की गरिमा को ओजस्वी स्वरों में गाकर राष्ट्रीय आत्मा को सजगता का पीयूष पान कराया है। **'झाँसी की रानी'** में वीरता के उत्कृष्ट और आदर्शरूप का रसोत्कर्ष, राष्ट्रीय चेतना का ओजस्वी शंखनाद उनके प्रतिभावान व्यक्तित्व का परिचायक है। डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार— **'झाँसी की रानी'** महारानी लक्ष्मीबाई महाकाव्य का एक—एक

शब्द भावों की ऐसी संजीवनी शक्ति से अभिषिक्त है कि घटनायें स्वयं बोलने लगतीं हैं और लक्ष्मीबाई का चित्र नेत्रों के सामने साकार हो उठता है।'[1] उदाहरण देखिये–

गोली चलती सनन–सनन, खनकीं तलवारें खनन–खनन।

कट–कट कर हुए धराशायी, डिक, फाक्स, बोनस, मिकलीजन।।

झाँसी का शोणित समरांगण, डगमग डगमग कर डोल उठा।

पत्थर–पत्थर, कण–कण, अणु–अणु, रानी की जय–जय बोल उठा।।[2]

उपर्युक्त छन्द में अंग्रेजी फौज के लैफ्टीनेन्ट डिक, फाकस, बोनस तथ मिकलीजन रानी की फौज के द्वारा किये गये घमासान युद्ध में धराशायी हो गये, तलवारों की खनक और गोली की सनन की दिल दहलाने वाली आवाज से सारा युद्ध का मैदान काँपने लगा तथा झाँसी का कण–कण अपनी प्रिय रानी की जय बोलने लगा। डॉ. आनन्द ने युद्ध का सजीव चित्र खींचा है। भावों की उग्रता का वर्णन ओजमयी भाषा में सटीक बन पड़ा है।

'झाँसी की रानी' महाकाव्य में डॉ. आनन्द ने रानी की तलवार तथा घोड़ा के वर्णन में अद्वितीय एवं विलक्षण गतिमयता का संचारकर दिया है। उन्होंने बुन्देलखण्ड के भावनामय इतिहास को सर्वोच्च शिखर पर प्रतिष्ठित किया है। डॉ. सेवक वात्स्यायन जी की टिप्पणी में **कवि के वर्णन कौशल का चरमोत्कर्ष सहज ही दिखाई देता है। 'झाँसी की रानी' का घोड़ा यदि कवि आनन्द का हृदय है, तो तलवार उनकी लेखनी का मूलधर्म, दर असल आनन्द जी की लेखनी और रानी की तलवार सगी बहिने हैं।'**[3] इस कथन की पुष्टि तलवार के असाधारण गतिचित्र से होती है। जैसे–

थीं झपट कहीं झंकार कहीं, प्रतिबिम्ब कहीं था बार कहीं।

था एक प्रलय का चमत्कार, थीं मार कहीं तलवार कहीं।।[4]

1– झाँसी की रानीः महारानी लक्ष्मीबाई, भूमिका–डॉ. रामकुमार वर्मा, पृ.3

2– उपरिवत् – पृष्ठ 120

3– समीक्षा–झाँसी की रानी– डॉ. सेवक वात्स्यायन, पृष्ठ 7

4– झाँसी की रानीः महारानी लक्ष्मीबाई, पृष्ठ 117

डॉ. वात्स्यायन कवि आनन्द को वस्तुतः गतियों का कवि मानते हैं। रानी की गति, तलवार की गति तथा उनकी लेखनी की गति परस्पर बड़ा साम्य रखती हैं।

डॉ. आनन्द ने इतिहास के विपुल मूल उद्धरणों द्वारा काव्य के अभिव्यक्ति पक्ष एवं उसकी रागात्मकता को अक्षुण्ण बनाये रखकर अपने कथनों एवं तर्कों का पुष्ट आयोजन किया हैं। काव्य सृजन के साथ ही इस कृति द्वारा उन्होंने बुन्देलखण्ड का ऐतिहासिक उद्धार भी किया है। अंग्रेजों के अत्याचार की जो सजा झाँसी की रानी ने दी है, इतिहास उसे इतने अच्छे ढंग से नहीं कह पायेगा। डॉ. आनन्द ने जिस ढंग से कहा है। उद्धरण दृष्टव्य है–

अंग्रेजो के जो भव्य भाल, जग में न कहीं झुक पाते थे।

वे अर्द्ध निशा में स्वान–श्रृगालों से ठुकराये जाते थे।।[1]

डॉ. आनन्द ने अपने महाकाव्य में प्रकृति के मनोरम चित्र अंकित किये हैं। इस संदर्भ में कवि की दृष्टि जल, जल–धाराओं और पर्वतों तथा आकाश के वर्णनों में अधिक रमी है। पक्षियों का कलरव, भ्रमरों की गुंजार, नभ में चमकने वाले तारागणों, कुमुद एवं कमलपुष्पों का वर्णन भी आकर्षक बन पड़ा है। उदाहरण देखिये–

थे सेत कमल तालाबों में लखकर होता था यही भान।

मानो धरती पर उतर पड़ा तारागण लेकर आसमान।।

X X X

किसलय कलि पर दूर्वादल पर आ पड़े तुहिन कण गोल–गोल।

अथवा विदीर्ण गज कुम्भों से गिर पड़े मंजु मुक्ता अमोल।।

X X X

कलरव भाषा में खग–समूह, स्वागत पढ़ता था बार–बार।

प्रमुदित हो जिसको अर्घ्य दिया, निर्झरनों ने जल ढार–ढार।।

1– झाँसी की रानीः महारानी लक्ष्मीबाई, पृष्ठ 120

X X X

लग रहा आग में पानी है, या पानी में लग रही आग।

उक्त उदाहरणों से यह व्यक्त होता है कि कवि ने अपनी भाव सबलता के प्रभाव परिवर्द्धन के लिये जिन प्राकृतिक उपादानों का आश्रय लिया है, उसे उसमें पूर्ण सफलता मिली है। इस प्रकार महाकाव्य में राष्ट्रीयता , वीरभावना, देशभक्ति, नैतिकता, प्रकृति वर्णन तथा ऐतिहासिकता के विभिन्न उदाहरण उपलब्ध हैं। कहा जा सकता है कि डॉ. आनन्द की **'झाँसी की रानी'** एक शुद्ध राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्य है। जिसमें हमारी अक्षुण्ण नैतिक शक्ति का पावन उद्घोष ही मुख्य है, शेष प्रसंग गौण हैं। कवि की दृष्टि युद्ध के प्रसंगों में मुख्यतः रमी है।

2- **एम. एल. ए. राज–**

डॉ. आनन्द ने देश की राजनीति से प्रभावित होकर अपनी सशक्त लेखनी को उन्मुक्त रूप से मुखरित होने का अवसर दिया। उनकी अधिकांश स्फुट रचनाएँ राजनीति से प्रेरित हैं– कहीं चुनावी घुटालों पर, तो कहीं जन प्रतिनिधियों की विद्वेषपूर्ण चालबाजियों पर। देश–भक्ति उनकी रग–रग में व्याप्त थी। वे स्वतंत्रता सेनानी थे। शासन विरोधी वक्तव्यों एवं काव्य पाठ से उन्होंने कईबार जेल यात्रायें कीं।

डॉ. आनन्द का काव्य स्वान्त सुखाय न होकर दलित–पीड़ित समाज के कल्याण के लिये समर्पित था। इसीलिये वे शोषकों और अत्याचारियों पर नुकीले व धारदार शब्दों का प्रहार कर अपने हृदय की आग को कविता के माध्यम से उगल देते थे। जन प्रतिनिधियों का पर्दाफाश करते हुए उनकी तीखे प्रहारों से खबर ली गई है निम्न पंक्तियों में–

हर चुनाव के मौके पर तुम दरशा नई कला देते हो।
सड़के, नहरें, अस्पताल, जाने क्या–क्या दिखला देते हो।।
आकर्षित करने को गाँवों–गाँवों के भोले नर नारी।
ओठों की पटरी पर झट जिह्वा की रेल चला देते हो।।[1]

1– एम. एल. ए. राज– डॉ. आनन्द, पृष्ठ 3

उपर्युक्त छन्द में जनप्रतिनिधियों के झूठे आश्वासनों की ओर इंगित करते हुये उनकी अवसर वादिता को उजागर किया गया है। शासन की पक्षपातपूर्ण नीति पर करारा व्यंग्य करता हुआ कवि कहता है—

खुलता तो है एक मुहकमा
पर बनते हैं चार मिनिस्टर।
अगर मुहकमा नहीं बना तो
बना दिया बेकार मिनिस्टर।।
बड़ी देश सेवा होती है बड़े–बड़े अब इन्तजाम हैं।
कोई बना अकाल मिनिस्टर कोई चोर बजार मिनिस्टर।।[1]

उक्त छन्द में देश के धन का दुरुपयोग, असमान वितरण एवं राजनीतिक दुरवस्था की भर्त्सना की गई है। कवि इतने से ही सन्तुष्ट न रहकर इस दूषित व्यवस्था को बदलने का संकल्प लेता है। एक उद्धरण दर्शनीय है—

आज प्रतिज्ञा है हम अपनी हीन अवस्था को बदलेंगे।
नेताओं की खद्दर वाली कुटिल संस्था को बदलेंगे।।
गूँज उठे हैं दिगदिगंत में अब तो इन्कलाब के नारे।
हमें शपथ है हम इस गंदी सड़ी व्यवस्था को बदलेंगे।।[2]

डॉ. आनन्द ने **'एम.एल.ए. राज'** में राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं बदहाल व्यवस्था पर खेद ही नहीं प्रकट किया वरन् जोरदार शब्दों में इसी सड़ी व्यवस्था को समूल उन्मूलित करने का संकल्प भी घोषित किया है। यही नहीं एक स्थान पर **'तुमने कहा कि हम नेता हैं, हम समझे लंकाधिराज हैं'** कहकर शासन के भेद, पोल एवं राज को प्रकट किया है।

3- **सन् अड़तालीस-**

डॉ. आनन्द की एक उत्कृष्ट रचना 'सन् अड़तालीस' है। इसमें प्रतीकात्मक शब्दावली के माध्यम से विक्षोभयुक्त तथा आक्रोशमयी

1— एम. एल. ए. राज— डॉ. आनन्द, पृष्ठ 24—25

2— उपरिवत् — पृष्ठ 27

अभिव्यक्ति में जन प्रतिनिधियों का विरोध दर्शाया गया है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जन मानस के क्षरित होते मानवीय मूल्यों एवं विश्वासों ने कवि की सुषुप्त चेतना को जागृत किया। परिणामस्वरूप **'सन् अड़तालीस'** के रूप में कवि के आन्तरिक उद्‌गार काव्यमयी अभिव्यंजना के रूप में प्रस्फुटित हुए।

महात्मागाँधी के स्वर्गारोहण के उपरान्त कवि नेताओं के दुर्व्यवहार, लूट—खसोट एवं पदलोलुपता से निराश होकर कहता है कि **'बापू जिस दिन तुम चले गये, बस चला गया अपना स्वराज'** तथा **'अब कोई नहीं गरीबों की सुनने वाल रह गया आज'** देश की तत्कालीन स्थिति का वर्णन निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है—

अन्याय, लूट, पद—लोलुपता हैं रिश्वत के बाजार गर्म।
नेताओं ने बालाये ताक, रख दी अपनी सब लाज शर्म।।
नारी की लज्जा बच न सकी, मिल सका गरीबों को न त्राण।
तब कवि ने बरबस उठा लिया, अपने हाथों में धनुष वाण।।[1]

कवि की ओजस्वी वाणी में समाज में व्याप्त अव्यवस्थाओं का खुलाशा उपर्युक्त छन्द में किया गया है। वर्तमान शासन व्यवस्था की कार्य प्रणालियों पर करारा प्रहार किया गया है।

कवि आगे कहता है कि **जो सन् उन्नीससौ बयालीस में अंग्रेज हुकूमत के गुलाम रहकर पुरस्कार पाते रहे, जो जीवन में कभी राष्ट्र के काम न आ सके, वही स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के कर्णधार माने जाने लगे।** एक उक्ति दृष्टव्य है—

थे बापू के भी लिये हाय जिनके दरबाजे बन्द रहे।
अपने जीवन भर बने हुये जो भारत के जयचन्द रहे।।
उन जयचन्दों को ढूँढ़—ढूँढ़, खद्‌दर पहिनाये जाते हैं।
अब जिम्मेदारी के पद पर, गद्‌दार बिठाये जाते हैं।।[2]

1— सन् अड़तालीस— डॉ. आनन्द, पृष्ठ 3

2— उपरिवत् — पृष्ठ 20—21

उपर्युक्त छन्द में कवि ओजयुक्त वाणी में आक्रोश व्यक्त करता हुआ दल–बदलू एवं स्वार्थी जन प्रतिनिधियों को फटकार लगाता है, राजनीतिक दुर्व्यवस्थाओं की कमियों का पर्दाफाश करता है।

4- शक्ति निदान-

डॉ. आनन्द द्वारा किया गया आयुर्वेदिक ग्रन्थ **'माधव निदान'** का पद्यानुवाद **'शक्ति निदान'** नाम से जनवरी 1936 में प्रकाशित हुआ, जिससे आपके आयुर्वेदिक ज्ञान की परिपक्वता प्रतिभासित होती है। विभिन्न रोगों के लक्षण और निदान का परिपुष्ट ज्ञान बहुत ही सरल छन्दों में लिखकर आपने जन–जीवन का जो उपकार किया, उसे भुलाया नहीं जा सकता। इस ग्रन्थ से प्रभावित होकर आयुर्वेदाचार्य पं.जी. पी. शास्त्री लिखते हैं–

'आनन्द जी ने माधव निदान का पद्यानुवाद कर हिन्दी भाषावादी वैद्यों का जो उपकार किया है, इसके लिये भाषावादी चिकित्सा संसार की ओर से आप विशेष धन्यवाद के पात्र हैं। हम आशा करते हैं कि भाषावादी वैद्य 'शक्ति निदान' की सहायता से आयुर्वेद के गूढ़ विषय की विलक्षण शक्ति का अपूर्व परिचय देते हुए लेखक का श्रम सफल करेंगे।[1]

'शक्ति निदान' में सन्निपात, वात, पाण्डुरोग, राजयक्ष्मा, स्वरभेद, पित्त, कफ, अतिसार, अर्श, बवासीर, मन्दाग्नि तथा अजीर्ण आदि रोगों के लक्षण तथा निदान पर प्रकाश डाला गया है। वैद्य के लक्षण तथा रोगी के लक्षणों पर भी विचार किया गया है।

5- चीन और पाकिस्तान-

कवि की दृष्टि देशकाल वातावरण से सम्पृक्त तथा समसामयिक परिस्थितयों से प्रभावित होती है। कवि युग दृष्टा होने के साथ सचेतक भी होता है। **'हो रहा है जो जहाँ सो हो रहा' कवि केवल इतना ही नहीं कहता, वरन् ' किन्तु होना चाहिए कब, क्या, कहाँ'** भी कहकर परिस्थितियों के

1– भूमिका–शक्ति निदान– पं. जी.पी. शास्त्री, पृष्ठ 5

प्रति अपनी जागरूकता सिद्ध करता है। जब हमारे देश पर चीन ने आक्रमण करने की योजना बनाई, चीन की दुर्नीतियाँ भारत को आक्रान्त करने के लिए सन्नद्ध हो उठीं, तब अनाचार, दानवता और पशुता के आगे कभी न झुकने वाली कवि की लौह–लेखनी विध्वंश के लिये आकुल होने लगी। कवि–हृदय से आक्रोश की वेगवती धारा का स्रोत फूट पड़ा।

18 जनवरी 1963 को बम्बईः में बिड़ला मातुश्री सभागार में सम्पन्न चीन–विरोधी कवि सम्मेलन में डॉ. आनन्द ने खून खौलाने वाली यह कविता पढ़ी, उससे देश में क्रान्ति की लहर दौड़ गई। साम्यवाद पर तीखा प्रहार निम्न पंक्तियों में देखिये–

क्या साम्यवाद का है सिद्धान्त यहीं जिसमें,
दफ्नाया जाये वेगुनाह इन्सानों को।
क्या यहीं तुम्हारे साम्यवाद की चक्की है,
जिसमें पीसा जाये मजदूर किसानों को।।

यदि साम्यवाद आयेगा तो झोपड़ियो से,
यह तर्क हमारा व्यर्थ नहीं हो सकता है।
रण की भट्टी में झोंकाजाय गरीबों को,
यह साम्यवाद का अर्थ नहीं हो सकता है।।

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने चीन समर्थित साम्यवाद को निराधार खोखला एवं अस्तित्वहीन बतलाया है। इसी प्रकार जब अमेरिका और पाकिस्तान के बीच फौजी समझौता हुआ, भारत को लक्ष्य बनाकर दोनों ने सम्मिलित गठबंधन को साकार रूप दिया, तब कवि की लेखनी पुनः मचल उठी। कवि पाकिस्तान के समक्ष चुनौती पेश करता हुआ कहता है कि जब तुम्हारी गठबंधन–फौज भारत पर आक्रमण करेगी, तब वह नामोनिशान भी मिट जायेंगे, जिनके कारण पाकिस्तान को आज गर्व है। कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

इस जगह पहुँचकर समझौते का वायुयान,

मुमताज परी के घूंघट को जब लूटेगा।

कोई क्या जाने किस दिल पर क्या गुजरेगी,

जब ताजमहल का एक कंगूरा टूटेगा।।

अजमेर कि जिसके दर की है दुनियाँ फकीर,

वह लपटों में पड़कर जब होगा छार–छार।

तब क्या न कयामत टूट पड़ेगी दुनियाँ पर,

हिंचकियाँ भरेगा जिस दिन ख्वाजा का मजार।।

पाकिस्तान को सर्वनाश की याद दिलाने वाली, उसकी अस्मिता को घायल करने वाली उपरोक्त पंक्तियाँ आज भी रोंगटे खड़े कर देती हैं। ठीक इसी तरह **'पब्लिक इन्ट्रेस्ट'** तथा **'दारुलशफा'** रचनाएँ श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर अमिट छाप छोड़ने वाली हैं। 'वैश्या सती' अप्रकाशित नाठक है, जिसमें समाज की समस्याओं को उभार कर उनका समाधान प्रस्तुत किया गया है।

पंचम अध्याय :

वीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में साहित्य सर्जना
(1901-1950)

- साहित्यकारों का सामान्य परिचय
- कृतियों का समीक्षात्मक विवेचन
- भाषा और शिल्प
- साहित्यिक मूल्यांकन

पंचम अध्याय

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में साहित्य सर्जना (1901–1950)

जनपद जालौन में बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में साहित्य सर्जना पर विचार करने से पूर्व उस समय की परिस्थितियों का अवलोकन करना आवश्यक है। इस युग तक ऐसी स्थितियाँ निर्मित होने लगी थीं, जिनमें राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटनायें समाज और व्यक्ति को प्रभावित कर रहीं थीं। भारतीय समाज एक ओर तो औपनिवेशिक दासता में जकड़ा था और दूसरी ओर सामन्तवादी ढ़ाँचे का दबाव था। अपने गौरवशाली अतीत का स्मरण और उसी के साथ पश्चिम के नये विचारों की हवा का औत्सुक्य और खुलापन सुगबुगाहट पैदा कर रहा था। पूँजीवाद का उदय, औद्योगिक जागरण और प्रथम विश्वयुद्ध की घटनाओं के कारण व्यक्तिवाद अपनी जड़ें जमा रहा था। देश में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में स्वाधीनता आन्दोलन जन–जन में स्वतंत्रता की भावना अंकुरित कर रहा था। अंग्रेजी साहित्य का स्वच्छन्दतावाद भी अपना प्रभाव दिखा रहा था। कीट्स, शैली, वर्ड्सवर्थ और वायरन जैसे कवियों की कवितायें बंगला और हिन्दी कविता को प्रभावित कर रही थीं।

इन तमाम घटना चक्रों के बीच प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति और सर्वात्म–सत्ता के प्रति कौतूहल के साथ नये कवियों द्वारा आत्मानुभूति को नयी भाषा तथा नये रूपों में प्रकट करने की अभिलाषा स्वाभाविक ही कही जायेगी। 1900 ई. के पश्वात् रीतिकालीन परम्परा का प्राधान्य समाप्त होकर यूरोपीय प्रतीकवाद के अनुकरण पर छायावाद का प्रादुर्भाव हुआ। छायावादी काव्य में खड़ी बोली भाषा के साथ–साथ मुक्तक, अतुकान्त और तुकान्त जैसे छन्दों को देखा जाता है। इस काव्य में देश–प्रेम, प्रकृति चित्रण, राष्ट्रीय भावना, भक्ति तथा रहस्यवाद आदि को स्पष्ट किया गया है। छायावादी समर्थ सृष्टाओं ने इस काल में जिस काव्यधारा का सृजन किया, वह सांस्कृतिक और भावात्मक सम्पन्नता के कारण ही नहीं अपितु अपनी अभिव्यक्ति, काव्य–भाषा, प्रतीक तथा बिम्ब विधान के कारण हिन्दी कविता की अमूल्य निधि है।

हिन्दी साहित्येतिहास के काल–विभाजन के अनुसार यह समयप्रसाद युग अथवा छायावादी युग के नाम से पुकारा जाता है। छायावादी युग का काव्य वस्तुतः द्विवेदी युग की इतिवृतात्मकता (ऐतिहासिकता) की प्रतिक्रिया थी। कवि मानो विदेशी शासन के अत्याचारों से ऊबकर वर्तमान से दूर किसी काल्पनिक संसार में जाने को मचल उठा। अनुभूति की प्रबलता, सौन्दर्य भावना, वेदना, करुणा, प्रेम, श्रृंगार, प्रकृति का मानवीकरण, मानवतावाद और देश प्रेम आदि काव्य के विषय बने। जनपद जालौन की साहित्य सर्जना का सूक्ष्मावलोकन करने पर यह तथ्य दृष्टि में आता है कि साहित्य–सर्जना की दृष्टि से जनपद में महान आत्माओं ने जन्म लेकर जालवन (जालौन) भूमि को पावन किया है।

डॉ. आनन्द (1901ई.) ने अपनी काव्य प्रतिभा से साहित्य जगत को अनुपम देन के रूप में एक महाकाव्य तथा अन्य अनूठी रचनायें अर्पित कीं। **'झाँसी की रानी'** इनका ऐतिहासिक महाकाव्य है। वे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी रहे तथा जीवनान्त तक **'साप्ताहिक दुनाली'** का सम्पादन

करते रहे। कविवर दीनानाथ 'अशंक' (1901) ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज को नैतिक दिशा–दर्शन कराया है। शिक्षा सप्तशती, राष्ट्रीय सूत्र, देवलदेवी, दिव्यविचार, सेवासूत्र, कृषि कौमुदी, चारूचर्या, मणिरत्नमाला, नीतिशतक उतथा वैराग्य शतक आपकी प्रकाशित अनुपलब्ध रचनाएँ हैं।

पहाड़गाँव में जन्मे पं. सरयूप्रसाद शास्त्री (1903ई.) ने शकुन्तला नाटक तथा अन्य काव्य रचनाओं– शंकर शतक, दुर्गा अष्टोत्तरी तथा हनुमत्पताका का सृजन कर पौराणिक संदर्भों को उजागर किया। मोहनलाल शांडिल्य कोटरा (1903ई.) की परिजात तथा दिव्यालोक दो प्रकाशित कृतियाँ हैं। आप श्रेष्ठ कवि एवं कुशल संचालक थे। पं. कमलानंद 'कंज' (1903ई.) का जन्म ग्राम दहगुवाँ में हुआ। आपकी भक्ति और श्रृंगार विषयक फुटकर रचनायें उपलब्ध हैं। रामेश्वर दयाल द्विवेदी 'श्रीकर' (1904ई.) प्रौढ़कवि एवं हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान थे। पं. रामचरण लाल दीक्षित **'कुरकुरू'** (1905ई.) ने दानवीर कर्ण, अपनी भूल, हरिश्चन्द्र तथा वीर प्रानसिंह नाटक लिखे। इनका अपनी भूल नामक नाटक उन्नीस सौ छप्पन में जनपद में हुये हिन्दू मुस्लिम संघर्ष पर आधारित है।

पं. शिवसहाय **'आरण्यक'** (1908ई.) का चिंतन व्यापक था। आपके विचार प्रौढ़ तथा शैली परिष्कृत थी। आपकी डेढ़ दर्जन कृतियों में केवल सात कृतियाँ प्रकाशित हैं। इनकी **'देवव्रत'** रचना ही उपलब्ध है। हास्यरस के अद्‌भुत कवि गाँधीराम फोकस (1908ई.) की एक मात्र रचना लोट–पोट चालीसा है। पं. दशाराम मिश्र **'रामकवि'** दहगुवाँ (1910ई.) ने अश्वत्थामा बज्रपात, यमुना गुण मंजरी एवं कर्मचारी–कृषक आदि रचनाओं का प्रणयन किया। आप बुन्देली के मूर्धन्य रचनाकार थे। चतुर्भुज शर्मा उरई, स्वामी रामानन्द चाँदनी अपने समय के अप्रतिम रचनाकार थे। स्वामी रामानन्द जी की मुमुक्षचरिया विधान, गीता रामायण, उमाशब्दावली, उमावचन, ज्ञान ग्रंथावली तथा सन्तमत दिग्दर्शन मुख्य रचनायें हैं। इनकी छोटी बड़ी लगभग पचास कृतियाँ प्रकाशित हैं।

शिवराम श्रीवास्तव **'मणीन्द्र'** (1911ई.) स्वतंत्रता सेनानी पत्रकार तथा शीर्षस्थ अधिवक्ताओंमें थे। आपके गीत प्रौढ़ तथा विचार प्रधान है। आपकी शैव्या विलाप एवं हँसते फूल अन्यतम कृतियाँ हैं। पं. प्रभूदयाल द्विवेदी **'दयालु'** (1912ई.) की रचनाओं में वन्दीस्वर, धनंजय विजय, वीर बालक, सुमनांजलि तथा परशुराम (महाकाव्य) प्रमुख हैं। आपकी रचनाओं का वैशिष्ट्य राष्ट्रीय चेतना तथा सांस्कृतिक वैभव है। पं. भगवानदास शुक्ल **'दास'** कोंच (1912–1985) की रचनाओं में प्रांजलता तथा प्रेम की पीर है। गीता–गीत तथा गीता–रामायण आपकी प्रकाशित कृतियाँ हैं।

पं. कन्हैयालाल मिश्र **'कमलेश'** (1913ई.) के अमरलता, अंतर्ज्योति तथा विजयिनी काव्य संग्रह हैं। आपके गीत चिंतन प्रधान हैं। रामेश्वर दयाल श्रीवास्तव **'प्रमत्त'** (1913ई.) गाँधीवाद से प्रभावित थे। इनकी रचनाओं में गाँधीवाद का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित है। विश्वनाथ गुप्त कोंच (1913ई.) का सम्पूर्ण सृजन राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त एवं सियारामशरण गुप्त से प्रभावित था। आपकी **'लक्ष्मण विसर्जन'** प्रकाशित कृति है तथा **ज्ञान गंगा, चैतन्य–चेतना, आन–बान** तथा **अश्वमेध** अप्रकाशित रचनाएँ हैं। पं.रामसहाय पटसारिया कोंच (1913ई.) का वैचारिक चिंतन उच्चकोटि का था। **'समुद्बोधिनी'** आपकी प्रकाशित उत्कृष्ट रचना है। मातादीन पोरवाल जालौन (1914ई.) ने स्फुट काव्य–सृजन किया।

बालकृष्ण शर्मा **'विकास'** कोंच (1915ई.) की पर्वगीत तथा गुलदस्तये गजल दो प्रकाशित रचनाएँ हैं। स्वर्गीय पं. बाबूराम गुबरेले हदरूख (1918ई.) के चार महाकाव्य, सात खण्डकाव्य तथा एक मुक्तक काव्य प्रकाशित हैं। इन काव्यों की विषय वस्तु प्रायः पौराणिक रही है। श्री रामबाबू अग्रवाल (1920ई.) के **'आलोक दर्शन'** ग्रंथ में चिंतन की प्रगाढ़ता, भाषा की प्रांजलता तथा सरसता विद्यमान है। आपने बाल–साहित्य को संवर्द्धित कर अभूतपूर्व कार्य किया। इसी समय मूलचंद अग्रवाल **'कोटरा'** ने साहित्यिक पत्रकारिता में अद्भुत ख्याति अर्जित की। आप **'विश्वमित्र'** के

सम्पादक भी रहे। आचार्य भगीरथसिंह **'तकदीर'** ने पौराणिक आख्यानों को अपने काव्य के विषय बनाये। पुरू, दुर्योधन, रतिसंयोग, मिलबो न भूलियो, अंगलक्षण, प्रबोधिनी तथा युगावर्त आपकी उत्कृष्ट रचनाएँ हैं। ब्रह्मानंद मिश्र 'मीत' दहगुवाँ–जालौन के अनूठे गीतकार हुये हैं।

सच्चिदानंद **'कुसमाकर'** ने रीतिकालीन गीत परम्परा से जनपद की काव्यधारा को गतिप्रदान की। इसी काल खण्ड के चर्चित कवि श्रीकृष्ण दीक्षित **'विद्रोही'** के लक्ष्मीबाई, रत्नावली, कनकभवन तथा अंगद प्रसिद्ध काव्य ग्रंथ हैं। श्रेष्ठ गीतकार के रूप में प्रतिष्ठित रामस्वरूप **'सिन्दूर'** के **हँसते लोचन, रोते प्राण, सिन्दूर साँझ** तथा **तिरंगा जिंदाबाद** गीत संग्रह साहित्य प्रेमियों के आकर्षण केन्द्र हैं। भगवानदास शर्मा जालौन (1922ई.) संस्कृतनिष्ठ तथा उर्दू मिश्रित कविताओं के लिये विख्यात थे। रजी उर्रहमान सिद्दीकी **'तपिश'** (1923ई.) उर्दू रचनाओं में देशभक्ति एवं राष्ट्रीयता के लिये प्रसिद्ध हैं। अब्दुल हफीज अन्सारी (1929ई.) उर्दू गजल के क्षेत्र में स्वनाम धन्य शायर हैं।

डॉ. रामस्वरूप खरे, उरई (1932ई.) एक प्रसिद्ध कवि, आलोचक समीक्षक, निबन्धकार, कहानीकार तथा लोक संस्कृति के उद्भट् विद्वान हैं। आपकी चौदह पुस्तकें प्रकाशित हैं। पं. पूरनचन्द्र मिश्र मधुर गीतकार एवं अभिनय कला मर्मज्ञ हैं। रामरूप स्वर्णकार 'पंकज' कोंच वीररस के अनुपम कवि हैं। 'हरदौल' इनका प्रकाशित खण्डकाव्य है। शिवानन्द मिश्र बुन्देला, उरई बुन्देली के सिद्ध कवि हैं, इनकी देखो जी पीरो पट' प्रकाशित रचना है। राधेश्याम योगी, हरिनारायण श्रीवास्तव 'विकल' जालौन, ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' जगम्मनपुर तथा राधेश्याम दांतरे कोंच इस समय वरिष्ठ रचनाकार के रूप में विख्यात हैं। ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' की धरती का कर्ज, देहरी–दीप, नदी में आग लगी है तथा फूल के अधरों पर पत्थर प्रकाशित रचनायें हैं। विकल जी जनपद के श्रेष्ठ व्यंग्यकार एवं हास्यरस के कुशल कवि हैं।इनकी उत्कृष्ट रचनाएँ 'सबकी खैर खबर' में एकल कवि के रूप में प्रकाशित हैं। श्री महावीर प्रसाद गुप्त, जालौन

(1934ई.) ने लगभग दो हजार पाँच सौ कुण्डलियाँ लिखकर जनपद जालौन की साहित्य–सर्जना में अनुपम योगदान दिया। अन्य सामयिक स्फुट रचनाएँ भी ज्ञातव्य हैं। पं. राममोहन शर्मा राष्ट्रीय कविताओं के लिए ख्याति प्राप्त हैं। मर्माहत अयोध्या इनकी लघुकृति है। राष्ट्रधर्म पत्रिका में इनकी रचनाओं का प्रकाशन प्रायः होता रहता है।

नरेन्द्र मोहन, कालपी (1934ई.) मुख्यतः आध्यात्मिक रचनाओं के लिये प्रसिद्ध हैं। आप की भारतीय संस्कृति धर्म और साम्प्रदायिकता, आज की राजनीति और भ्रष्टाचार, हिंदुत्व, दासत्व से उबारो और खोलो द्वार प्रकाशित रचनाएँ हैं। आप मूलतः पत्रकार थे। डॉ. हरीमोहन गुप्त, कोंच (1934ई.) की एकमात्र प्रकाशित रचना 'कुणाल' खण्डकाव्य है तथा राधेय, एकलव्य, अष्टावक्र तथा गोपीगीत अप्रकाशित रचनाएँ हैं। माया हरिश्याम पारथ की छोटी बड़ी कई रचनाएँ प्रकाशित हैं। आपका **'निर्बल के बलराम'** महाकाव्य उत्तम काव्य की श्रेणी में आता है। जनपद में छन्दशास्त्र के एकमात्र सर्जक श्री पारथ जी की काव्य प्रतिभा अनूठी है। विजय कुमार पाण्डेय, उरई के दोहे तथा मुक्तक समसामयिक एवं समस्या प्रधान हैं।

डॉ. रामशंकर द्विवेदी जनपद के श्रेष्ठ आलोचक, निबंधकार एवं अनुवादक हैं। बंगला भाषा के निष्णात विद्वान समालोचक डॉ. द्विवेदी की चौदह अनूदित रचनाएँ प्रकाशित हैं। यज्ञदत्त त्रिपाठी का **'तपस्या के प्रसून'** खण्डकाव्य पौराणिक गाथा पर आधारित है। डॉ. भगवान सिंह सेंगर काव्य गोष्ठियों में अपनी गम्भीर रचनाओं के लिये आकर्षण के केन्द्र हैं।

रसूल अहमद सागर, रामपुरा तथा रहमान शाह **'माहिर' सिम्हारा**, जालौन उर्दू शायरी तथा नातिया कलाम के लिये सुप्रसिद्ध हैं।

स्वर्गीय संतोष दीक्षित, उरई (1942ई.) अपनी समसामयिक प्रयोगवादी रचनाओं के लिये जाने जाते हैं। भवानीशंकर लोहिया, कोंच, शीतलाशरण श्रीवास्तव, भदारी तथा योगेश्वरी प्रसाद **'अलि'** ओजस्वी रचनाकार हैं। 'अलि' जी का **'बात कर गये नयन'** गीत संग्रह प्रकाशित है। जमील

अहमद **'जमील'** हिन्दी गजल के उदीयमान हस्ताक्षर हैं। संतोष सौनकिया **'नवरस'** मधुर गीतकार हैं। **'माण्डवी'** आपका अप्रकाशित खण्डकाव्य है। कैकेयी पर आपके कतिपय छन्द श्रोताओं को बरबस ही आकर्षित करते हैं। रबीन्द्र शर्मा, जालौन अखिल भारतीय स्तर के उत्कृष्ट गीतकार हैं। **'आहें'** इनका अप्रकाशित खण्डकाव्य है।

परमात्माशरण शुक्ल **'गीतेश'** उरई (1943ई.) जनपद के श्रेष्ठ गीतगार हैं। अयोध्याप्रसाद गुप्त **'कुमुद'** मूलतः पत्रकार हैं। लोकनाट्य, लोक रुचियाँ, लोकगीत तथा लोक परम्पराओं पर आपका सृजन आधारित है। आपकी छोटी–बड़ी आधा दर्जन कृतियाँ प्रकाशित हैं। 'सप्त दल' शीर्षक रचना में सात साहित्यिक विधाओं का संयोजन है। 'सारस्वत' पत्रिका का कुशल सम्पादन भी आप करते हैं।

डॉ. एन.डी. समाधिया, डॉ. दिनेशचन्द्र द्विवेदी, डॉ. जयश्री पुरवार तथा श्री मिथिलेश द्विवेदी की जनपदीय साहित्य–सृजन में अग्रणी भूमिका रही है। सुशील श्रीवास्तव 'फर्जी' हास्य रचनाओं के अतिरिक्त गम्भीर विचार प्रधान दोहे भी लिखते हैं। नरेन्द्र मोहन स्वर्णकार **'मित्र'** कोंच (1947ई.) का समसामयिक विषयों के अतिरिक्त चिन्तन परक रचनाओं में भी हस्तक्षेप है। आपकी कविताओं के विषय गम्भीर एवं मार्मिक हुआ करते हैं। स्वर्गीय आदर्श कुमार सक्सेना **'प्रहरी'** उरई (1950ई.) मर्मस्पर्शी एवं चुटीले मुक्तकों के लिए ख्याति प्राप्त हैं। **'प्यास लगी तो दर्द पिया है'** आपकी एकमात्र प्रकाशित उत्कृष्टतम् रचना है।

उपर्युक्त साहित्यकारों के संक्षिप्त विवरण के पश्चात् कुछ ऐसे प्रतिभाशाली एवं सशक्त रचनाकार भी हो सकते हैं, जो जनपद के पिछड़े क्षेत्रों में जन्मे पले हों तथा स्वान्तः सुखाय साहित्य–सृजन में संलग्न रहते हुये भी प्रकाश में न आए हों। जनपद जालौन की दीर्घ साहित्यिक परम्परा में बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जिन साहित्यकारों का प्रकाशित तथा अप्रकाशित साहित्य उपलब्ध हो सका है, उनका विशद विवेचन निर्धारित बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत है।

सामान्य परिचय एवं व्यक्तित्व

1- पं. दशाराम मिश्र

पं. दशाराम मिश्र **'कक्का जू'** का जन्म जनपद जालौन में 1910ई. में हुआ। गाँव की ग्राम्यता आपके निश्छल व्यक्तित्व में मुखरित होती है। आपका भक्तिरस से ओत–प्रोत भावुक हृदय सहृदय श्रोताओं को सरस रचनाओं के माध्यम से रसानुभूति ;कराने में सक्षम था। आपकी रचनाओं में सहज अनुभूतियाँ प्रतिबिम्बित हैं तथा मनोवैज्ञानिक चित्रणों के साथ कल्पनायें यथार्थ के धरातल पर तैरती हैं।

रस व्यंजना में सिद्धहस्त पं. दशाराम जी मिश्र 'कक्का' (रामकवि) जन–जन के मन में बैठकर एक सुवासित सुमन के रूप में जाने जाते हैं। ऊषा की लालिमा में बल्लरियों के मुस्कानें, फूलों के खिलने, गाँव की माटी के सौंधेपन में मान्यताओं और विश्वासों के साथ परम्पराओं की बहती धारा में कक्का डूबे हैं और डूबकर उतराये हैं। उनके हृदयोत्स से निःसृत भक्ति–काव्य–धारा में प्रकृति के साथ–साथ मानव–कृति का कहीं–कहीं सटीक तादात्म्य अनायास ही मिल जाता है।

मिश्र जी का ऊँचा कद तथा विशाल नेत्र, ऊँचा मस्तक, गले में तुलसी की माला, धवल कुर्ता–धोती उनके गरिमामय व्यक्तित्व को ओजस्विता प्रदान करते थे। कक्काजी के वर्णन में ओजस्विता, भक्ति एवं करुणा का प्रवाह अपने काव्य सौष्ठव की सबल अभिव्यक्ति के साथ हुआ है। उसकी छटा ही अनुपम बन गयी। शब्द, भाषा, अलंकार भावों के भार से दबते नहीं, स्वतंत्र उभरते ही दिखते हैं।

2- श्री शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र'

श्री शिवराम श्रीवास्तव **'मणीन्द्र'** का जन्म सं. 1968 वि. में जालौन जनपदान्तर्गत उरई नगर के निकटस्थ ग्राम रगेदा में हुआ था। आपके पूज्यनीय पिताजी का शुभनाम लाला जगन्नाथ प्रसाद था। मणीन्द्रजी के पूर्वज अपने भाईयों के साथ बनारस में निवास करते थे। वहाँ बनारस

स्टेट के वे दीवान थे। अपने स्वाभिमान की आन पर लाला जगन्नाथप्रसाद ने बनारस छोड़कर बुन्देलखण्ड के जालौन जनपदान्तर्गत उरई नगर के निकटस्थ ग्राम राहिया में कृषि योग्य भूमि खरीदकर खेती के कार्य को अपना व्यवसाय बनाया।

मणीन्द्र के गीत प्रौढ़ तथा विचार प्रधान हैं। आपके गीतों में प्रेम भावना की अभिव्यक्ति सरसता और सहजता के साथ हुयी है। आपगीतकार होने के साथ–साथ स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, पत्रकार तथा शीर्षस्थ अधिवक्ताओं में थे। घनाक्षरी तथा गीत–गजल और छन्दों के कुशल रचनाकार मणीन्द्र जी के काव्य–सागर में विशेष रूप से ओज, श्रृंगार और करुण रसों का समावेश रहा है। श्रृंगार रस की कविताएँ उनके सृजन का प्रतिनिधित्व करती हैं। करुण रस का जीवंत प्रस्तुतीकरण करने में भी मणीन्द्र जी दक्ष थे।

प्रेम में सर्वस्व निछावर करने की कठिनता तथा पीड़ाजन्य वेदना पर निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

''कठिन है यदि प्यार पर बलिदान होना
प्यार का बलिदान उससे भी कठिन है।

X X X

दर्द दिल का अंत कर देना सहज है
उम्र भर का दर्द दिल लेना कठिन है।''

मणीन्द्र जी छन्दों के कुशल चितेरे थे। घनाक्षरी छन्द तो उनकी लेखनी से निकलकर धन्य हो उठता था। उनकी घनाक्षरियों में वर्णित वर्ण्य–विषय चित्रात्मक शैली के माध्यम से मनोहारी रूप पा जाते थे। मणीन्द्र जी की अनूठी छन्द–श्रृंखलाबद्ध काव्य–कृति **''शैव्या–विलाप''** हिन्दी साहित्य की एक ऐसी अपूर्व–अमूल्य निधि है कि उस एक रचना के बल पर ही मणीन्द्र जी हिन्दी काव्यानुरागियों के सम्माननीय बने रहेगें।

'शैव्या विलाप' में करुण रस का ऐसा सशक्त परिपाक है कि मणीन्द्र जी स्वयं काव्य पाठ करते विह्वल हो जाते थे और श्रोताओं के नेत्र

सहज ही सजल हो जाया करते थे। कविता इसी बिन्दु पर आकर सार्थक स्वरूप प्राप्त कर लेती थी। इस रचना को वे कभी किसी काव्य–मंच पर पूरा नहीं पढ़ पाते थे, क्योंकि करुणा विह्वल स्वर कण्ठावरोध उपस्थित कर देता था।

छात्र जीवन में ही स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ने की बलवती लालसा जाग्रत हो गयी थी। युवा मणीन्द्र की चेतना में उनका विवेक पराधीनता को स्वीकार नहीं कर पा रहा था। इस समय छात्र शिवराम ने स्वतंत्रतारूपी राष्ट्रीय महायज्ञ में सम्मिलित होने का संकल्प ले लिया था।

मणीन्द्र जी ने शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् अधिवक्ता की जीविका चुनी और सभी प्रकार के मुकद्मे लड़े। धीरे–धीरे वे फौजदारी के प्रसिद्ध अधिवक्ता के रूपमें प्रसिद्ध होते गये। परन्तु कवि हृदय की भावुकता इस कार्य में आड़े आ गयी। एक हत्या के मुकद्मे में उनकी भावुकता ने औचित्य अनौचित्य के बीच हुये अन्तर्द्वन्द्व को सहन करने से अस्वीकार कर दिया और उन्होंने फौजदारी के मुकद्मों को विदाई दे दी।

संयोगवश उरई में परम लोकप्रिय, मेधावी तथा जागरूक जननेता पं. बेनीमाधव तिवारी के सान्निध्य में मणीन्द्र जी आये और उनके कुशल नेतृत्व में उन्होंने सन् 1930 में अपने साथियों सहित माहिल तालब के ऐतिहासिक घाट पर ब्रिटिश शासन को चुनौती देते हुये सार्वजनिक रूप से नमक बनाकर स्वदेशी स्वावलम्बन के स्वाभिमान का विजय ध्वज फहराया। अपने अज्ञातवास के समय क्रान्तिकारी दल के सम्राट वीर चन्द्रशेखर आजाद मणीन्द्र जी के निवास पर लम्बे समय तक रहे।

3- पं. श्री बाबूराम गुबरेले

श्री बाबूराम गुबरेले जी का जन्म सं.1975वि. में औरय्या मार्ग पर अवस्थित ग्राम हदरूख में हुआ। आपके पूज्यनीय पिताजी श्री हरप्रसाद जी थे। आपकी पूज्यनीया माताजी अल्पायु में ही दिवंगत हो गयीं। गृह में अर्थाभाव, अशिक्षा एवं संरक्षण के अभाव ने गुबरेले जी को स्वेच्छाचारी बना

दिया। कक्षा 3 से ही शिक्षा का क्रम विच्छिन्न हो गया। बस, अब श्री गुबरेले जी के दो ही कार्य थे पशुचारण कार्य तथा कुश्ती लड़ना। एक दिन भयंकर वर्षा हो रही थी। पण्डित जी घर लौटे और अपने पितामह से पढ़ने का आग्रह किया। उसी दिन से कक्षा 6 तक शिक्षा का क्रम बना रहा। अर्थाभाव ने शिक्षा क्रम को आगे नहीं बढ़ने दिया।

गुरू वर्ग की महान कृपा तथा पण्डित जी की भाग्यलिपि ने मिलकर आपके जीवन के अध्याय में ही परिवर्तन कर दिया। शिक्षा का व्यक्तिगत रूप से एम.ए. तक क्रम भंग नहीं हुआ। गुबरेले जी ने अभिमन्यु हाईस्कूल क्योलारी तथा इन्टर कॉलेज पहाड़ गाँव में अध्यापन कार्य किया वहीं से सेवानिवृत्त हुये। गुबरेले जी को हिन्दी तथा उर्दू पर समान अधिकार था। इसके अतिरिक्त संस्कृत तथा अंग्रेजी का भी ज्ञान सामान्य था।

स्वभाव से पण्डित जी अतीव भावुक, संवेदनशील तथा विनोदप्रिय थे। परन्तु कभी–कभी इनके स्वभाव में उग्रता तथा कोमलता का विचित्र समन्वय देखने को मिलता था। आपकी 12 रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें चार महाकाव्य, सात खण्डकाव्य तथा एक मुक्तक काव्य है। आपकी अधिकांश रचनाएँ संस्कृत वर्ण वृत्तों में हैं। उनकी विषय वस्तु भी प्रायः पौराणिक है। सरल भाषा में रचित कुण्डलिया शतक रचना अत्यंत मनोरंजक है। अभी तक गुबरेले जी के चार ग्रंथ प्रकाश में आये हैं जो महाभारत की कथा पर आधारित हैं। क्रान्तिदूत, युगपुरुष, वषुसेण तथा आंजनेय बन्धु।

4- **भगीरथसिंह 'तक़दीर'**

श्री भगीरथ सिंह **'तकदीर'** का जन्म सन् 1921 में नूरपुर (उरई) में हुआ। **'तकदीर'** जी स्वभाव से अत्यन्त सरल और धैर्यवान थे। जीवन के अनुभव व्यापक थे और कई विषयों का ज्ञान भी अगाध था। उनका भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वे कई शैलियों में कविता लिखने में सक्षम थे। **'तकदीर'** जी स्वाभिमानी थे तथा सादा जीवन और उच्च विचारों

में विश्वास रखने वाले महान व्यक्ति थे। इनके ऊपर स्वर्गीय श्री रामरत्न शर्मा **'रत्नेश'** जी का वरदहस्त था।

आपका **'मिलबो न भूलियो'** उद्धव शतक जैसा प्रकाशित मुक्तक ग्रंथ है। आचार्य भगीरथ सिंह **'तकदीर'** ने पौराणिक आख्यानों को अपने काव्य का प्रतिपाद्य बनाया। पुरू और दुर्योधन उनके प्रबंध काव्य हैं। **'रति–संयोग'** तथा **मिलबो न भूलियो'** ब्रजः में लिखे गये सरस काव्य हैं। अंग–लक्षण प्रबोधनी नामक नवीनतम कृति में सामुद्रिक–शास्त्रीय ज्ञान के दर्शन होते हैं। युगावर्त में जनपद जालौन का स्वतंत्रता संग्राम वर्णित है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन में **'दुर्योधन'** पर उन्हें पुरस्कृत किया गया था। यह काव्य सम्मेलन की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में भी निर्धारित रहा है। आचार्य जी **'देवापगा'** नामक लघु पत्रिका भी प्रकाशित करते थे।

यद्यपि श्री भगीरथसिंह जी को बचपन से ही ग्राम में रहना पड़ा, फिर भी ग्रामीण वातावरण में इन्होंने अपने कवित्व को क्रियाशील बनाये रखा। कवि की शिक्षा–दीक्षा हिन्दी तक ही सीमित नहीं रही वरन् उर्दू, अंग्रेजी, बंगला तथा मराठी भाषा का भी उन्हें सम्यक् ज्ञान था। ब्रज माधुरी तथा सरयूपारी के तो आप मर्मज्ञ ही थे। उनमें एक महाकवि की प्रतिभा विद्यमान थी। उनके छन्द स्वयं उनका परिचय देते हैं।

''बिसर चुकीं वे बातें ब्रह्मज्ञानी उद्धव की,
थक चुकीं वे आखें मथुरा को पथ देख देख।''

कवि ने **'मिलबो न भूलियो'** नामक रचना में राधा कृष्ण के एक दीर्घकालीन वियोग के बाद पुनर्मिलन दर्शाया है। आपने महाभारत, श्रीमद्भागवत तथा सूरसागर में दिये गये प्रसंगों को काव्य बद्ध किया है। कवि ने घनाक्षरी छन्दों में माधुर्य को व्यक्त किया है। आपने प्रेम की रीति व नीति विषय को प्रधानता देकर प्रकृति तथा पुरुष के विप्रलम्भ तथा संयोग वर्णन प्रस्तुत किये हैं। कवि का वास्तविक लक्ष्य राधा–कृष्ण–प्रेम में निमग्न होकर छन्द रचने का था।

5- श्री रामबाबू अग्रवाल

श्री रामबाबू अग्रवाल का जन्म 1 जुलाई सन् 1920 ई. को उद्दालक नगरी (उरई) में हुआ। आप इस जनपद के बाल साहित्य के प्रणेता थे। बच्चों के लिये आपने प्रेरणास्पद गीतों का सृजन किया। आपकी रचनाओं में आशावाद का स्वर झलकता है। भाषा में सरलता और भावों में सहजता आपकी विशेषतायें हैं।

'आलोक दर्शन' श्री अग्रवाल जी का प्रमुख काव्य है। उनका काव्य युग की पुकार को ध्वनित करता है, जो राष्ट्रीय चेतना के प्रति जागरूक होने का सशक्त प्रमाण है। अग्रवाल जी का काव्य अनूठे सौन्दर्य, अनुपम शब्द योजना, अद्भुत रचना चातुर्य एवं अप्रतिम राष्ट्रीय चेतना के स्वर को अपने अंचल में समेटे हुये है।

अग्रवाल जी का ऊँचा कद, दीर्घ ललाट, विशाल नेत्र, सिर पर टोपी तथा उत्तम स्वास्थ्य उनके महान व्यक्तित्व को प्रकट करता था। ऐसे ओजस्वी व्यक्तित्व श्री रामबाबू अग्रवाल कुशाग्र बुद्धि, प्रतिभावान लेखक तथा चतुर प्रवक्ता का दायित्व निर्वाह करते रहे। जीवन के अन्तिम चरणों में आप ईश्वरीय भक्ति में लीन हो गये।

6- डॉ. रामस्वरूप खरे

युग निर्माण योजना के मूर्धन्य कवि, जन जागृति के उद्घोषक, भावों के कुशल चितेरे, मधुर एवं मृदुल व्यक्तित्व के धनी डॉ. रामस्वरूप खरे का जन्म 1 सितम्बर सन् 1932 ई. में गुढ़ा (झाँसी) में हुआ था। 1966ई. में आप द.वै.महा.वि. उरई में प्राध्यापक होकर आये और अपने मधुर तथा रचनात्मक स्वभाव के कारण यहाँ के जीवन में रच बस गये। आपने आते ही **'अभिनव साहित्य परिषद'** की स्थापना कर यहाँ नियमित काव्य गोष्ठियाँ आयोजित करवाकर स्थानीय युवा हस्ताक्षरों को प्रेरित–प्रोत्साहित किया।

आपके कवि व्यक्तित्व की मूल संवेदना एक गीतकार की है। युग निर्माण योजना मथुरा से बहुत समय तक जुडे रहने के कारण आपकी

अन्य कविताओं की प्रेरणा भूमि आदर्श और नैतिक मूल्य परक है। आपके मुक्तकों में प्रेरणा और जीवन विषयक दिशा निर्धारण की अपूर्व शक्ति है। **'शतमन्यु'** पौराणिक उपाख्यान पर आधारित लम्बी कविता है, जिसका ढाँचा एक खण्डकाव्य का है। द्विवेदी युगीन नैतिक मूल्यों और आदर्श की प्रेरणा आपकी गीत से इतर कविताओं का वैशिष्ट्य है। अभिव्यक्ति में सहज प्रवाह है।

'काँपती परछाइयाँ' एक प्रकार से आपकी आत्म कथा है। इसके गद्य का वैशिष्ट्य बुन्देली के ठेठ प्रयोग तथा छोटे–छोटे वाक्यों पर निर्भर है। जहाँ आप सामासिक शैली के चक्कर में पड़े वहाँ आपकी रचना लड़खड़ा गयी और अभिव्यक्ति भी बाधित हुयी।[1] आपका गद्यकाव्य **'अधखिले फूल'** अपनी संवेदना और काव्य रूप में माँजकर लिखी गयी कृति है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि डॉ. रामस्वरूप खरे बुन्देलखण्ड में जनपद जालौन के स्वनाम धन्य हस्ताक्षर हैं। आपके गीतों की भाषा सशक्त, सरस एवं सुगठित है, जिसमें भावों की सहज अभिव्यक्ति, गेयता एवं साधक हृदय की आकुलता सन्निहित है।

7- ओम्प्रकाश चतुर्वेदी 'पराग'

'गाजियाबाद गौरव सम्मान' तथा **'साहित्य शिरोमणि'** उपाधि से अलंकृत, मनीषी सम्मान को प्राप्त करने वाले श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' का जन्म 4 मई 1933ई. ग्राम जगम्मनपुर, जनपद–जालौन में हुआ था। आपके पूज्यनीय पिताजी स्व.श्री दामोदरदास चतुर्वेदी तथा माता श्रीमती विद्यादेवी चतुर्वेदी थीं। आपने एम.ए. (हिन्दी) वैद्य विशारद तक विद्या प्राप्त की। आप उ.प्र. के विशिष्ट अभिसूचना निदेशालय में मनोरंजन प्रभाग के उपनिदेशक/उपायुक्त पद से सेवा निवृत्त होकर साहित्य सर्जन एवं सामाजिक कार्यों में संलग्न हुये।

1– जालौन जनपद की साहित्यिक परम्परा, डॉ. रामशंकर द्विवेदी, सबकी खैर खबर– त्रैमासिक पत्रिका, संपादक–नासिर अली नदीम, पृष्ठ 16

श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी **'पराग'** जी काव्य की उत्कृष्ट परम्परा में संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के गहरे अर्थ व्यंजित करते हुये लय, गति एवं गीतात्मकता के नित नये सोपानों पर चढ़ते रहे हैं। वे युगीन चेतना के अद्‌भुत चितेरे हैं। अपनी प्रतिभा के चरम पर पहुँचे हुये अधिकतर मनीषी, अपने भावों की अभिव्यक्ति के प्रति गहराई के साथ प्रतिबद्ध रहते हैं। **'पराग'** के लिये भी यह बात पूर्णतः प्रासंगिक है। पराग जी हिन्दी गजल में सरल अभिव्यक्ति के ऐसे गजलकार हैं जो अपने अशआर में कलात्मकता के गुण को बनाये रखने का हुनर जानते हैं।

8- **डॉ. रामशंकर द्विवेदी**

डॉ. द्विवेदी जी का जन्म जनपद जालौन के ग्राम सिहारी पड़ैया में सन् 1937 में हुआ। कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिवार में जन्में द्विवेदी जी की स्नातकोत्तर तक की शिक्षा जालौन तथा उरई में सम्पन्न हुई। आगरा विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर (हिन्दी) परीक्षा में स्वर्ण पदक प्राप्त करके आप दयानंद वैदिक महाविद्यालय, उरई में हिन्दी विभाग में प्राध्यापक रहे और यहीं से सेवा निवृत्त हुये।

साहित्य–सृजन के क्षेत्र में डॉ. द्विवेदी का जनपद में विशिष्ट स्थान है। आपकी लेखनी पर्याप्त समय से साहित्य सृजन में संलग्न है। आलोचना, समीक्षा, अनुवाद, निबंध तथा समसामयिक समस्याओं पर आप का लेखन सततरूप से चल रहा है। आपने अपने स्फुट निबंधों में राजनीति, शिक्षा, समाजनीति, भाषा, पत्रकारिता तथा नई पीढ़ी का सोचआदि विषयों पर बेबाकी से अपने विचार प्रस्तुत किये हैं।

बँगला विशेषज्ञ के रूप में ख्याति प्राप्त डॉ. रामशंकर द्विवेदी ने लगभग 10 पुस्तकों का बँगला से हिन्दी में अनुवाद किया है। बँगला अनुवाद के क्षेत्र में सन् 2005 का साहित्य एकादमी सम्मान भी आपको प्राप्त हुआ है। आपने **'साहित्य और सौन्दर्य बोध; रवीन्द्र तथा निराला के सौन्दर्यबोध पर तुलनात्मक शोध समीक्षा'** ग्रंथ का प्रणयन कर शोध क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है।

सरस्वती, परिषद, नवनीत, राष्ट्रधर्म, ब्रजभारती, साक्षात्कार, अक्षरा, वीणा तथा दस्तावेज में आपकी शोध समीक्षायें तथा संस्मरण आदि प्रकाशित हुये हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी आपका योगदान रहा है। **'बांग्लाय विप्लववाद'** का धारावाहिक अनुवाद प्रकाशित हुआ है। पत्र साहित्य तथा डायरी लेखन पर टिप्पणियाँ और आँचलिक साहित्येतिहास पर आपने विशेष रूप से अनुसंधान किया है।

'दस्तक' आपका समसामयिक निबन्धों का संकलन है। इन निबंधों का मुख्य उद्देश्य पाठकों को एक विशिष्ट दिशा में सोचने के लिये बाध्य करना है। इस प्रकार कुल मिलाकर डॉ. द्विवेदी की बारह पुस्तकें प्रकाशित हैं, जिनमें अनुवाद ग्रन्थों की संख्या सर्वाधिक है।

अन्त में कहा जा सकता है कि डॉ. द्विवेदी के लेखन में विस्तार तो है ही, गहराई भी है।आपका सम्पूर्ण प्रकाशित साहित्य उपलब्ध नहीं हो सका है, किन्तु जो भी प्राप्त हुआ है, वह इस विचार को पुष्टि प्रदान करता है कि डॉ. द्विवेदी जनपद जालौन के श्रेष्ठ साहित्यकार हैं।

रचनाएँ

1- पं. दशाराम मिश्र

पं. दशाराम मिश्र **'कक्का'** जी काव्य प्रतिभा, साहित्य की विधि–विधाओं और सफल अभिव्यक्तियों से सुकवियों की कोटि में गिने जाते हैं। **आंजनेय गौरव, अश्वत्थामा, बज्रपात, यमुना गुण मंजरी एवं कर्मचारी कृषक आपके गम्भीर, चिन्तन प्रधान काव्य है।**[1] इनके काव्य में रस की विविधता, अलंकारों की चमत्कारिता तथा भाषा की प्रांजलता अनोखे ही रूप में दिखायी देती है।

आंजनेय गौरव में कवि ने विविध रसों का वर्णन किया है। उनके काव्य में वीर रस प्रमुख है, शान्त, श्रृंगार और अद्भुत रसों का भी

1– जालौन जनपद; साहित्य और पत्रकारिता–अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' पृ.15

परिपाक हुआ है। उनकी इस कृति में अलंकारों की प्रचुरता है, अनुप्रास यत्र–तत्र उपलब्ध है। यमक, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति, संदेह और व्यतिरेक इत्यादि अलंकारों का खुलकर प्रयोग हुआ है।[1] मिश्र जी का यह काव्य दोहा, सोरठा और सवैया आदि छन्दों में रचित है। आंजनेय गौरव में कवि ने कथानक को मार्मिक स्थलों से जोड़कर भावपूर्ण बना दिया है। आपने अश्वत्थामा काव्य का कथानक व्यांसकृत महाभारत से लिया है। कवि ने अपनी रचना अश्वत्थामा में द्रोणात्मज महारथी अश्वत्थामा का चरित्र चित्रण किया है। इस कृति में महावीर अश्वत्थामा के चरित्र–चित्रण पर न्याय दिलाने के लिये कवि सतत् प्रयत्नशील दिखायी देता है।

कवि का कथन है कि बड़े–बड़े धर्म–विरुद्ध योद्धाओं को क्षमा प्रदान कर केवल अश्वत्थामा को ही सतत् कुष्ठी होने की शाप–रचना क्यों कर ली जाती है? जिसने राज्य सभा में द्रोपदी के चीर–हरण की अशुभ और दारुण बेला पर भीष्म, द्रोण तथा धृतराष्ट्र से भी अधिक साहस का प्रदर्शन कर परम् मित्र दुर्योधन को धिक्कारा था और राज्य सभा का परित्याग कर दिया था। उदाहरण दृष्टव्य है–

जब चींर द्रोपदी का खींचा।
धर सका नहीं मैं धैर्य वहाँ।।
कह भला बुरा दुर्योधन को।
क्षण एक रुका मैं नहीं वहाँ।।[2]

पं. दशाराम मिश्र जी की यह कृति न्यायप्रियता पर आधारित है। इस कृति के अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि मिश्र जी अन्याय के घोर विरोधी थे।

1– भूमिका–आंजनेय गौरव–डॉ.राजाराम पाण्डेय, शक्ति प्रिंटर्स बैठगंज, जालौन

2– उपरिवत्,

2- श्री शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र'

गीत, गज़ल छन्दों के कुशल रचनाकार मणीन्द्र जी के काव्य– आगार में विशेष रूप से ओज, श्रृंगार और करुण रस का समावेश रहा है। श्रृंगार रस की कवितायें उनके सृजन का प्रतिनिधित्व करती हैं, साथ ही करुण रस का जीवंत प्रस्तुतीकरण करने में मणीन्द्र जी दक्ष रहे हैं। **'शैव्या विलाप'** आपका लघु प्रबन्ध काव्य है।[1] मणीन्द्र जी की यह कृति हिन्दी साहित्य की एक ऐसी अपूर्व–अमूल्य निधि है कि उस एक रचना के बल पर हिन्दी काव्यानुरागी मणीन्द्र जी को सतत् आदर देते रहेंगे। मणीन्द्र जी के **'शैव्या विलाप'** में करुण रस का ऐसा सशक्त परिपाक है कि मणीन्द्र जी स्वंय काव्य पाठ करते–करते विह्वल हो जाते और श्रोताओं के नेत्र सहज ही सजल हो जाया करते थे। कविता इसी बिन्दु पर आकर सार्थक स्वरूप प्राप्त कर लेती थी।

इस रचना को मणीन्द्र जी कभी किसी काव्य मंच पर पूरा नहीं पढ़ पाते थे, क्योंकि अतिशय कारुणिकता के कारण कण्ठावरोध हो जाया करता था। श्री मणीन्द्रजी ने ब्रजभाषा और खड़ीबोली दोनों में रचनाएँ कीं।[2] आप छन्दों के कुशल चितेरे थे। घनाक्षरी छन्द तो उनकी लेखनी से निर्मल होकर धन्यहो उठता था। उनकी घनाक्षरियों में वर्णित वर्ण्य विषय चित्रात्मक शैली के माध्यम से मनोहारी रूप पा जाते थे। आपकी द्वित्तीय प्रकाशित कृति **'हँसते फूल'** है। इस गीत संग्रह में कवि की चुनी हुई श्रृंगारिक रचनाओं का संकलन है। **रूप मधुरिके, वन्दी लोचन, मिलन, प्रेम पर वलिदान, मिलन रात, अभियुक्त नयन** तथा **यौवन मधु** आदि रचनायें पूर्णतः श्रृंगारिक हैं। इसके अतिरिक्त चीन, माँ त्रिवेणी, कवि से, आवाहन आदि रचनायें राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत हैं। कवि की यह प्रौढ़तम कृति है। इस कृति से मणीन्द्र जी जनपदीय साहित्य क्षेत्र में विशिष्ट स्थान उपलब्ध कर सके थे।

1– जालौन जनपद; साहित्य और पत्रकारिता–अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' पृ.15

2– जालौन जनपद की साहित्यिक परम्परा–डॉ. रामशंकर द्विवेदी, पृष्ठ 7

3- **बाबूराम गुबरेले**

श्री बाबूराम गुबरेले जी की बारह रचनायें प्रकाशित हो चुकीं हैं जिनमें चार महाकाव्य और सात खण्डकाव्य तथा एक मुक्तक काव्य है। आपकी अधिकांश रचनायें संस्कृत वर्ण वृत्तों में हैं। उनकी विषय वस्तु भी प्रायः पौराणिक है। '**अगर आपने अपनी प्रतिभा का उपयोग समसामयिक समस्याओं के चित्रण में किया होता और युगानुरूप काव्य–विधा को अपना कर काव्य भाषा को भी आधुनिक मुहावरे में महारत हासिल की होतीं तो आप इस जनपद के पांक्तेय कवि होते।**'[1] आपकी सरल भाषा में लिखी '**कुण्डलियाँ शतक**' रचना बड़ी मनोरंजक है।

पंण्डित जी को हिन्दी तथा उर्दू पर समान अधिकार प्राप्त था।[2] इनके अतिरिक्त संस्कृत तथा अंग्रेजी का भी सामान्य ज्ञान था। गुबरेले जी के काव्यों का अवलोकन करने पर विदित होता है कि लेखनी का अधिकार हिन्दी तथा जिह्वा का अधिकार उर्दू पर है। श्री गुबरेले जी का आंजनेय बन्धु (खण्डकाव्य) अपने में स्वतंत्र खण्डकाव्य है। अतः आंजनेय बन्धु एवं अश्वत्थामा काव्यों में ऐतिहासिक भूमि में समानता हो परन्तु फिर भी कुछ न कुछ भिन्नता लाने की चेष्टा की गयी है। '**इस काव्य पुस्तिका को सुखान्त बनाने की दृष्टि से अन्तिम सर्ग 'युधिष्ठर का यज्ञ' काल्पनिक ही समझना चाहिये।**[3] इसमें कुधान्य सेवन की भर्त्सना की गयी है। इस पुस्तिका के छः सर्गों में पराक्रमी भीम के जीवन वृत्त से लगाकर उनकी विशिष्ट घटनाओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। इस काव्य की ऐतिहासिक–पृष्ठभूमि का सम्बंध महाभारत से है।

4- **रामबाबू अग्रवाल**

'**आलोक दर्शन**' श्री अग्रवाल जी की महान काव्य कृति है। इस काव्य रचना में राष्ट्रीयता, उसकी उत्कृष्टता एवं उत्सर्ग की सहज

1– जालौन जनपद; साहित्य और पत्रकारिता–अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' पृ.15

2– आंजनेय बन्धु की भूमिका–राहुल द्विवेदी, भदौरिया प्रकाशन, कोंच

3– आंजनेय बन्धु–श्री बाबूराम गुबरेले– प्राक्कथन

प्रवृत्ति और सार्वजनिक कल्याण की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इस रचना के माध्यम से कवि ने समाज को दुष्प्रवृत्तियों एवं दुराग्रहों की कुण्ठाओं के शमन की प्रेरणा प्रदान की है। यह काव्य चंचल प्रतिमानों से असम्प्रक्त युग की पुकार को ध्वनित कर रहा है। **'राष्ट्रीय चेतना के प्रति जागरूक होना कवि के सजग होने का सशक्त प्रमाण है।'**[1] अनुपमेय सौन्दर्य, असीम काव्य कौशल, अनुपम शब्द–योजना और अद्‌भुत रचना–चातुर्य से पूरित यह काव्य–संकलन आज के बदलते युग के संदर्भ में सार्थक सिद्ध हुआ है।

चेतना पर वस्तु सत्य का प्रभुत्व, यद्यपि अवचेतन में आत्म सत्य की सत्ता का अन्त नहीं हुआ है। यह परिस्थितियों की प्रतिक्रिया मात्र है और बौद्धिक स्वीकृति से अधिक कुछ भी नहीं है, किन्तु जिन परिवेशों में विचार सारिणी को प्रस्फुटित होने की थोड़ी सी भी राह मिली है उसे कवि की उदान्त भाव कल्पना ही माना गया है। समाज में फैली कुरीति कालिमा युक्त प्रतिच्छाया को कवि ने काव्य दर्पण में दिखाने का सार्थक प्रयास किया है। कवि अपनी काव्य कृति **'आलोक दर्शन'** में आज की बौद्धिकता एवं कुण्ठाग्रस्त अभावों में भी अपने आशा प्रसूनों को मलिन नहीं होने देता है।

5- श्री भगीरथसिंह 'तकदीर'

ब्रजभाषा और खड़ीबोली के सिद्ध कवि आचार्य भगीरथसिंह **'तकदीर'** ने पौराणिक आख्यानों को अपने काव्य के विषय बनाये। **'पुरु' और 'दुर्योधन' आपके प्रबन्ध काव्य हैं।'**[2] **रति संयोग तथा मिलबो न भूलियों' ब्रज में लिखे गये सरस काव्य हैं।' अंग लक्षण प्रबोधिनी'** नामक नवीनतम् कृति में सामुद्रिक शास्त्रीय ज्ञान के दर्शन होते हैं। युगावर्त में जिला जालौन का स्वतंत्रता संग्राम वर्णित है।

1– आंजनेय बन्धु–श्री बाबूराम गुबरेले– प्राक्कथन

2– जालौन जनपद; साहित्य और पत्रकारिता–अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' पृ.17

हिन्दी साहित्य सम्मेलन में दुर्योधन काव्य के लिये उन्हें पुरस्कृत किया गया। यह काव्य सम्मेलन की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में भी निर्धारित रहा है। कवि ने महाभारत का मंथन कर अपने लिये एक कहानी चुनी फिर उसे क्रम से सजाया और भावनाओं को उस पर अर्पित किया। इस काव्य का क्रम पुरानी परिपाटी पर है।[1] आप सहज घनाक्षरी लिखने में दक्ष थे। ऐसा उनके समकालीन कवियों ने स्वीकार कर लिया था। अब तक लिखे गये ग्रंथों में राधा–कृष्ण के वियोग को उभारा गया है किन्तु इस काव्य पुस्तक का उद्देश्य मिलन है। इसलिये कवि इसमें घनाक्षरी मिलन के सुमनों को समर्पित करता है।

इस काव्य कृति का उत्तरार्द्ध भावों की दृष्टि से गम्भीर तथा संवरा हुआ है। मिलन के मुहूर्त की पृष्ठभूमि में प्रकृति के मनमोहक चित्रों को उभारा है। इस काव्य की कथावस्तु में प्रेम–रीति, प्रेम–नीति विषय लेकर प्रकृति पुरुष के प्रेम, विप्रलम्भ तथा संयोग का वर्णन है।

6- डॉ. रामस्वरूप खरे

डॉ. खरे जी की रचनात्मक साहित्य सम्बन्धी छोटी बड़ी बारह पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं। आपकी रचनाओं में **अर्चना** (गीत संग्रह), **शतमन्यु** (खण्डकाव्य), **मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र** (मुक्तक), **चिन्तन के मोती** (विचार संग्रह), **कांपती परछाइयाँ** (आत्म चित्रण), **अधखिले फूल** (गद्यकाव्य) मुख्य हैं। **'संध्या हो गई'** नाम से एक कहानी संग्रह भी प्रकाशित हुआ है।[2] अर्चना और मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र की मूल प्रेरणा प्रणय सम्बन्धी आत्मानुभूति है।

मुक्तकों में कहीं–कहीं प्रेरणा और जीवन विषयक दिशा निर्धारण की अपूर्व शक्ति है। **'शतमन्यु'** पौराणिक आख्यानों पर आधारित लम्बी कविता है जिसका ढाँचा एक खण्डकाव्य का है। द्विवेदी युग के

1– मिलबो न भूलियो–भगीरथसिंह 'तकदीर', नव संस्करण भूमिका, डॉ. रामशंकर द्विवेदी, प्रकाशक– साहित्य मधुवन, नूरपुर, उरई

2– सबकी खैर खबर– पृष्ठ 16

नैतिक मूल्यों और आदर्श की प्रेरणा आपकी गीत से इतर कविताओं का वैशिष्ट्य है। अभिव्यक्ति में सहज प्रवाह है। **'कांपती परछाइयाँ'** एक प्रकार से आपकी आत्म कथा है। इसके गद्य का वैशिष्ट्य बुन्देली के ठेठ प्रयोग तथा छोटे–छोटे वाक्यों पर निर्भर है। डॉ. रामशंकर द्विवेदी ने लिखा है कि– **'जहाँ आप सामासिक शैली के चक्कर में पड़े वहाँ आपकी रचना लड़खड़ा गयी है और अभिव्यक्ति भी बाधित हुयी।**[1]

आपका गद्यकाव्य **'अध खिले फूल'** अपनी संवेदना और काव्य रूप में माँजकर लिखी गयी कृति है। डॉ. रामस्वरूप खरे बुन्देलखण्ड में जनपद जालौन के स्वनामधन्य हस्ताक्षर हैं। आपके गीतों की भाषा सशक्त, सरस एवं सुगठित है जिसमें भावों की सहज अभिव्यक्ति, गेयता एवं साधक–हृदय की आकुलता सन्निहित है।

7- **ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग'**

श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी **'पराग'** की प्रकाशित कृतियाँ– **धरती का कर्ज** (गीत संग्रह), **देहरी दीप** (कविता संग्रह), **नदी में आग लगी है** (गजल संग्रह), **फूल के अधरों पर पत्थर** (गजल संग्रह), **अनकहा ही रह गया** (कविता संग्रह), **दर्रों का देश लद्दाख** (यात्रावृतांत) हैं।

पराग जी के गीत ढर्रे के संकलनों से हटकर हैं। गीतों की भाषा सरल और सहज है– फिर भी गीतों ने अपनी विषय–वस्तु का विस्तार किया है। जो बातें समकालीन सरोकारों से सम्बद्ध हैं, उन्हीं को समर्थ रचनाकार पराग जी ने गीतों की लय में निबद्ध किया है। गीत तो आत्मा का कालजयी छन्द है, वह न कभी आउट डेटिड हुआ, न होगा। वह तो धरती के प्राणों में बसी वह गूँज है जो चिरकाल से प्राणों में बसी हुयी है। प्रकृति में भी एक छन्द है, एक गीत है, वही सृष्टि का मूल है।

श्री पराग जी ने **'विदुरा नीराजन'**, **'निर्धन विभा'**, **भोर जगी कलियाँ**, **नूपुर अन्तर्मन के** और **गीतायन** आदि पत्रिकाओं का सम्पादन किया।

1– सबकी खैर खबर– पृष्ठ 16

कविताओं के अतिरिक्त कहानी, लेख व्यंग्य पत्र—पत्रिकाओं के अतिरिक्त कहानी, लेख व्यंग्य पत्र—पत्रिकाओं में प्रकाशित तथा आकाशवाणी से प्रसारित हैं। श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी **'पराग'** जी काव्य की उत्कृष्ट परम्परा में संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के गहरे अर्थ व्यंजित करते हुये लय, गीत एवं गीतात्मकता के नित नये सोपानों पर चढ़ते रहे हैं। वे युगीन चेतना के अद्भुत चितेरे हैं। अपनी प्रतिभा के चरम प्रर पहुँचे हुये अधिकतर मनीषी अपने भावों की अभिव्यक्ति के प्रति गहराई के साथ प्रतिबद्ध रहते हैं। पराग जी के लिये भी यह बात पूर्ण प्रासंगिक है।

पराग जी हिन्दी गजल में सरल अभिव्यक्ति के ऐसे गज़लकार हैं जो अपने अशआर में कलात्मकता के गुण को बनाये रखने का हुनर जानते हैं।

भाषा और शिल्प

1- पं. दशाराम मिश्र

पं. दशाराम मिश्र के प्रमुख ग्रंथ—आंजनेय गौरव तथा अश्वत्थामा हैं। आपके गंथों में रीतिकालीन ब्रजभाषा की अनुपम माधुरी छटा झलकती है। 'आपने बुन्देली और पद शैली में भी रचनायें कीं।'1 आंजनेय गौरव काव्य में कवि का कहीं—कहीं प्राकृतिक वर्णन में परिगणात्मक शैली का प्रयोग दृष्टव्य है।—

लखत लवंग कुन्द बकुल अनारन कीं।

पाकर कपित्थ आम उरझ अँधेरिन में।।[1]

पं. दशाराम मिश्र की रचनाओं में विविध रसों का परिपाक है। वीर रस आपकी काव्य कृतियों में स्पष्ट दिखायी देता है। पं. मिश्र जी ने आंजनेय गौरव में दोहा, सोरठा, घनाक्षरी, सवैया छन्द का प्रयोग कर कृति को अनुपम बना दिया। यह कृति भक्ति और श्रंगार रस से ओत—प्रोत है। यमक, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति, सन्देह और व्यतिरेक

1— सबकी खैर खबर— पृष्ठ 9

अलंकार आंजनेय गौरव में स्पष्टतः दिखायी देते हैं। इनके उपयोग से काव्य कृति प्राणवान हो गयी।

कवि इस खण्ड काव्य को साक्षात् वीर रस का अवतार सिद्ध करने की चेष्टा करता है। रामकवि के हनुमान में भक्ति रस की छटा दिखायी देती है।—

बंद रघुनंद पद नंदन प्रभंजन को।

दलन चलौ है गर्व सुयश सुरारी को।।[1]

आपके घनाक्षरी छन्द की क्रियात्मक संज्ञायें जैसे— आऊ भौन मिटाऊजा, दिखाऊजा, बनाऊजा तथा भविष्यकालिक कृदन्त—मिलाओ, कहाओ, दिखाओ, पाओ आदि मिलते हैं। दीन, हीन, छीन आदि जैसे प्रत्यययुक्त शब्द इस खण्डकाव्य में सरलता से उपलब्ध हैं। अश्वत्थामा (खण्डकाव्य) में कवि ने श्री हरि के चरणों की वन्दना करते समय उपमा अलंकार का प्रयोग करते हुये लिखा है— हे कमलनयन जगदीश हरे। श्रीकृष्ण के कर्मों की विशेषताएँ मनमोहन, करुणेश, कंस निधन अधम उवारन आदि शब्दों के माध्यम से स्पष्ट की हैं। राज—साज, जम्बुक समाज प्रिय प्रानों से, बंक वीर, काल कराली दुखद दृश्य भभक कढ़ी गिर लाबा सी आदि में पद मैत्री के अनुपम प्रयोग इनके काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि करते हैं।

2- शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र'

मणीन्द्र जी प्रणीत खण्डकाव्य **'शैव्या विलाप'** तथा गीत संग्रह **'हंसते फूल'** दोनों की भाषा खड़ी बोली है। वैसे आपका सम्पूर्ण प्रकाशित तथा अप्रकाशित रचना संसार खड़ी बोली में ही रचा गया है। आपकी भाषा भावानुगामिनी होकर भावों को सहज संप्रेष्य बनाती है। यदि श्रृंगारिक रचनाओं में कवि ने कोमलकान्त पदावली का प्रयोग किया है तो राष्ट्रीय कविताओं में ओजस्वी वाणी मुखरित हुई है। जहाँ कवि गीतों में प्रणय जन्य

2— आंजनेय गौरव— पं. दशाराम मिश्र, पृष्ठ 4

अनुभूतियों की अभिव्यक्ति करता है, वहाँ शब्दों की सरस माधुरी स्वतः स्फुरित होने लगती है। आपके प्रणय गीतों में तरलता, सौन्दर्यानुभूति की स्निग्धता, शिल्प की चारुता तथा भाषा की सहजता का अद्‌भुत सम्मिलन दृष्टव्य है।

मणीन्द्र जी स्वतंत्रता सेनानी भी रहे हैं। राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लेकर कवि जन–साधारण के बीच चेतना की लहरें उत्पन्न करने वाले गीतों का सृजन करता है। उनकी वीरत्व व्यंजक रचनाओं का स्तर पर्याप्त ऊँचा है और इस ऊँचाई को स्थायित्व प्रदान करने में उनकी समृद्ध भाषा पूर्णतः सहायक हुई है।

मणीन्द्र जी का **'हंसते फूल'** गीत संग्रह भाषा और शिल्प की दृष्टि से उत्कृष्ट रचना है। इस संग्रह में गीति तत्व प्रधान है। मणीन्द्र जी मंच पर जब अपने गीतों का सस्वर गायन करते थे, श्रोता मंत्रमुग्ध होकर आत्म विस्मृत हो जाते थे। आपकी कुछ रचनायें विचार प्रधान हैं, जिनमें चिंतन का विशिष्ट आग्रह है। आप जब राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत रचनायें पढ़ते थे, वीररस छलक उठता था तथा अनेकबार हिन्दू–मुस्लिम विवाद भी भड़क उठता था।

आपकी रचनाओं में अभिव्यक्ति की सौन्दर्य–भंगिमा शब्दों के कुशल प्रयोग के कारण विद्यमान है। अलंकार आपकी अभिव्यंजना में सहायक होकर आये हैं। कहीं भी कृत्रिमता का आभास नहीं मिलता। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, यमक और अनुप्रास स्वाभाविक रूप से काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि करते हैं। लाक्षणिक उक्तियाँ भी यत्र–तत्र उपलब्ध होती हैं। कथ्य की दृष्टि से आपके दोनों प्रकाशित काव्य सराहनीय हैं। **'शैव्या विलाप'** में करुणरस का अनूठा सौन्दर्य है तो **'हंसते फूल'** में प्रेम और राष्ट्रीयता का युगपत् सौन्दर्य प्रतिबिम्बित है।

मणीन्द्र जी की भाषा पाठकों को सहज रूप से बोधगम्य है तो शिल्प उसमें अनूठा आकर्षण उत्पन्न कर देता है। दोनों का अद्‌भुत सामंजस्य कवि एवं पाठक में एक सूत्रता स्थापित करता है।

पं. श्री बाबूराम गुबरेले

पं. बाबूराम गुबरेले की 12 रचनायें प्रकाशित हैं। जिनमें चार महाकाव्य और सात खण्डकाव्य तथा एक मुक्तक काव्य है। आपका आंजनेय गौरव विधा की दृष्टि से खण्डकाव्य के अन्तर्गत है। आपके काव्य की भाषा संस्कृत बहुला है। यह काव्य छः सर्गों में विभक्त है। कहीं–कहीं शाब्दिक भिन्नता के बावजूद भावसाम्य दिखायी पड़ता है। वीर रस इस कृति का मुख्य रस है। द्रुत वंशस्थ, मन्दाक्रान्ता, मालिनी आदि छन्दो का खुलकर प्रयोग है। गुबरेले जी की काव्य भाषा आलंकारिक सौन्दर्य से युक्त तथा अर्थ–द्योतन क्षमता में विशेष महत्वपूर्ण है। पहुप–पूरित, पादप मालिका, ललाम, लोनी लतिका प्रशोभिनी तथा मंजु–मालती में अनुप्रास इनके काव्य की शोभा को द्विगुणित करते हैं।

रस–प्रवाह की दृष्टि से गुबरेले जी की कविता में श्रृंगार तथा वीर रस के अतिरिक्त अन्य रस लगभग नहीं के बराबर हैं। आपकी रचना में वीर रस दृष्टव्य है–

छलांग मारी वर भीमसेन ने,
प्रमत्त पंचानन ज्यों गजेन्द्र पै।
प्रबुद्ध होके पुनि युग्म वीर ही,
निलिप्त ही थे निज बाहु युद्ध में।[1]

आपके काव्य में संस्कृत बहुल भाषा के स्वतः ही स्पष्ट दर्शन होते हैं–

मृगेन्द मातंग जहाँ प्रकीड़ते,
विहार शीला शश सिंह शावकः।
कलाप केकी निरता स्व नृत्य में,
कुरंग–माला जहँ है प्रशोभिती।2

1– आंजनेय गौरव– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 37

2– उपरिवत् – पृष्ठ 69

इस ग्रंथ में वीरत्व व्यंजक भावनाओं को प्रधानता दी गयी है। वीर भीम की गौरव गाथा को उभारकर वीरता का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया गया है। पण्डित जी का हिन्दी तथा उर्दू भाषा पर समान अधिकार था। इनके अतिरिक्त संस्कृत तथा अंग्रेजी पर भी पण्डित जी की लेखनी चली है। इनके काव्यों में उग्रता तथा कोमलता का विचित्र समन्वय देखने को मिलता है।

4- **श्री रामबाबू अग्रवाल**

आपका **'आलोक दर्शन'** काव्य उपलब्ध है। इस ग्रंथ में आशावादी भावनाओं की प्रधानता है। वीरों की गौरव–गाथा को उभारकर वीरता का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया है। आपने कुण्डलिया छन्द में वीर रस बिखेर कर काव्य की अप्रतिम छटा प्रदर्शित की है।

उठो सिंह के शावको रोक सके पथ कौन,
तुम मृगेन्द्र वनराज हो गरज उठो तज मौन।
गरज उठो तज मौन, संभालो अपनी सत्ता,
गीदड़ वृक, बाराह श्वान लोलुप, मदमत्ता।[1]

इनके काव्य की भाषा दुरूह एवं संकेतात्मक है। आपने इसमें सरल तथा सुबोध शब्दों का प्रयोग कर काव्य को बोधगम्य बनाया है। आपकी कविता में अलंकारों का यथेष्ट प्रयोग उपलब्ध है। 'त्यागी, तपसी, तत्व वेत्ता, जग में जीवन जाना, सात्विक, सत्य, शील, समता, में तथा दीन, दुखी, दारिद की यातनायें, सत्य शिव, सुन्दर भरी हैं। 'भावनाये' में अनुप्रास अलंकार की छटा दर्शनीय है। प्रकृति वधू, मलय–पवन, सुख–सुषमा, रक्त–रश्मियाँ तथा मलयज मुसंग में रूपक अलंकार विद्यमान है। आतप, ताप, प्रताप घटे में पद मैत्री की शोभा देखने योग्य है।

आलोक दर्शन काव्य में तुकान्त शब्द–रसाल बौराये, कछार, लहराये, पवन इतराये तथा महक उठी चाँदनियाँ गूज उठी रागनियाँ तथा

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, रवि प्रकाशन उरई, पृष्ठ 93

रूपमयी यामिनियाँ आदि उपलब्ध हैं। कहीं–कहीं तत्सम शब्दों का प्रयोग भी अच्छा बन पड़ा है।

डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री ने काव्य की भूमिका में लिखा है– **'इस युग का काव्य जिस सीमित परिवेश में बौद्धिकता एवं दुरूहता से आक्रान्त होकर अध्येता की मनःस्थिति में उद्वेलन उत्पन्न करने में अक्षम होता जा रहा है। उसके विपरीत इस काव्य संग्रह में काव्य का प्रांजल रूप मुखरित हुआ।**[1]

5- श्री भगीरथसिंह 'तकदीर'

श्री भगीरथसिंह **'तकदीर'** की प्रौढ़तम कृति **'मिलबो न भूलियो'** है। आपके इस ग्रंथ की भाषा ब्रज है। कवि ने घनाक्षरी छन्द का प्रयोग कर कृति को प्राणवान बना दिया है। उन्होंने प्राक्कथन में स्वयं लिखा है–

कछु भागवत सों कछुक महाभारत सों,
कछु सूरसागर सों मथ कै कहानी लई।
भारती की प्रेरना सों कछु–कछु कल्पना सों,
कछु गुरूजनन सों सुन–सुन बानी लई।।
उनकी कथा है बेई व्यापक है लेखनी में,
जानें उनहीं ने कैसे लिख मन मानी लई।।[2]

आपके छन्दों में क्रियात्मक संज्ञायें जैसे–चलबो, विकल दो, गलबो, पिघल दो, अनिरुध के विरुध के, युद्ध के और सुधि के तथा भविष्य कालिक कृदन्त–दीष्यो, ह्वैगो, लिख्यौ, निचोरो मिलते हैं। विहंगिनियाँ, बूढेन्ह, सरोवरन, नैनन, वैनन, पटरानिन जैसे बहुवचन, गुहराई, शब्दन जैसे प्रत्यय युक्त शब्द ग्रंथ में हैं। स्नेह का सनेह, यशोदा का यशुदा, पुतली का पुतरी, निर्दय का निरदै, निष्ठुर का निठुर, होली का होरी, भाग का भाज, कूबडी का कूबरी जैसे शब्द ब्रजभाषा के प्रभाव को परिलक्षित करते हैं। घरन–घरन, चार–चार, कंप–कंप, सेज–सेज, मधुर–मधुर, जूरी–जूरी, श्याम–श्याम जैसे तुकान्त अत्यन्त आकर्षक बन पड़े हैं।

1– भूमिका– आलोक दर्शन, डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री

2– प्राक्कथन–मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह –तकदीर'

'मिलबो न भूलियो' में श्रृंगार रस के दोनों पक्ष संयोग और वियोग का बड़ा मनोहारी चित्रण मिलता है। यहाँ संयोग पक्ष का उदाहरण दृष्टव्य है–

> **कृष्ण देखी राधे राधिका ने पूर्व ब्रह्म देख्यौ,**
> **संगम समागम भौ चारौं अखियांन को।**
> **आसन बसन त्याग दौक दामिनी सी दौर,**
> **लोट लपटानि घनश्याम घन प्रान को।**[1]

रस प्रवाह की दृष्टि से तकदीर की रचना में श्रृंगार के दोनों पक्षों के अतिरिक्त अन्य रस नहीं के बराबर हैं। सवैया तथा पद इस कृति में उपलब्ध है। लक्षणा एवं व्यंजना शब्द–शक्तियाँ अपने–अपने रूप को उजागर करती प्रतीत होती हैं। **'तकदीर'** जी की काव्य–भाषा अलंकारों से युक्त है। अनुप्रास, यमक, रूपक, व्यतिरेक, उपमा आदि अलंकार सरलता से उपलब्ध हैं। पकर पदुम पानि, पद्मा गई लै जहाँ, तथा 'पद्म–प्रसून परयंक पै बिछाये हैं' में अनुप्रास तथा पखेरुनी सी, सावरी सी तथा दामिनी सी में उपमा। उत्प्रेक्षा तथा रूपक यत्र–तत्र दिखाईदेते हैं। 'घरन–घरन घूमै चर विश्वकर्मा के' तथा –गैयन की गोरस की दधि की दिवारी की' में अनुप्रास के अनुपम प्रयोग इनके काव्य सौन्दर्य की अभिबृद्धि करते हैं।

6- डॉ. रामस्वरूप खरे

डॉ. रामस्वरूप खरे जनपद के उन कवियों में अग्रगण्य हैं, जिन्होंने **'अभिनव साहित्य परिषद'** की स्थापना कर यहाँ नियमित काव्य गोष्ठियाँ आयोजित करवाकर स्थानीय युवा हस्ताक्षरों को प्रेरित–प्रोत्साहित किया। आपके गद्य का वैशिष्ट्य बुन्देली के ठेठ प्रयोगों से पूर्ण है। आपकी शैली छोटे–छोटे वाक्यों पर निर्भर है।

अभिव्यक्ति में सहज प्रवाह है। आपके **'अर्चना'** गीत काव्य में गीतों की भाषा सशक्त, सरस एवं सुगठित है, जिसमें भावों की सहज

1– मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर' पृष्ठ 52

अभिव्यक्ति, गेयता एवं साधक हृदय की आकुलता सन्निहित है। इस प्रकार इन गीतों में शिवत्व के साथ–साथ सत्य की सम्यक् अभिव्यंजना हुयी है।

आपके गीतों में भाषा अलंकारिक सौन्दर्य से युक्त है तथा लयात्मक छन्दों का प्रयोग बड़े ही मार्मिक ढंग से किया गया है। अलंकारों में अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा और उपमा अलंकार स्पष्ट रूप से दर्शनीय है। रूपक अलंकार का उदाहरण दृष्टव्य है– :

देह दिया निःश्वास वर्तिका–

पाकर स्नेह तुम्हारा पावन,

उर–मन्दिर में सहज जलेगा–

युग–युग तक मेरे मन भावन।[1]

'अध खिले फूल' (गद्य गीत संग्रह) में कवि की भाषा गद्य गीतों से पूर्ण है। ईश्वरीय सत्ता को कवि सर्वोपरि स्थापित करना चाहता है।

राम नाम सत्य है।

और सब अनित्य है।[2]

7- **श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग'**

श्री पराग जी की **'धरती का कर्ज'** में छन्द बद्ध तथा गेय कवितायें देखने को मिलती हैं। **'देहरी दीप'** में गीतों के अतिरिक्त अनेक रचनायें मुक्त छन्द में हैं। **'धरती का कर्ज'** की कविताओं में श्रृंगार एवं वीर रस की प्रधानता दिखलाई देती है। आपकी **'अनकहा ही रह गया'** रचना में श्रृंगार रस की प्रधानता है। इस कृति की अन्य रचनाओं में धर्म, दर्शन, समाज तथा राजनीति आदि विषयों को कथ्य बनाया गया है। संग्रह की कुछ कवितायें मुक्त छन्द में भी हैं। ये कवितायें छन्द के बन्धन से मुक्त होकर भी सहजता, सुगमता तथा प्रवाह के कारण अपनी सम्प्रेषणीयता अक्षुण्ण रखती हैं।

1– अर्चना– डॉ. रामस्वरूप खरे, पृष्ठ 1

2– अधखिले फूल– डॉ. रामस्वरूप खरे, पृष्ठ 77

आपके गीतों में शब्दालंकार तथा अर्थालंकार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। **'पात–पात में पीर पगी है'**, **'पत्र–पुष्प पतझर को अर्पण'**, तथा **'जय जननी जय हिन्द, जय जगद्‌गुरू'** में अनुप्रास।[1] **'विरह वेदना'**, **अर्थ काम की बसंती'**, **'मोक्ष मणि की साध'** में तथा **'सुख–सदन'** में रूपक अलंकार हैं। दूर–दूर साथ–साथ, चलते–चलते, घर–घर जैसे तुकान्त अत्यन्त आकर्षक बन पड़े हैं।

श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी **'पराग'** जी का गजल संग्रह **'फूल के अधरों पर पत्थर'** की गजलों में भाव प्रवणता, मानवीय संवेदन, युक्ति–युक्त दृष्टि और गजब का संतुलन है। गजलों में गुम्फित शब्दावली पाठक के मन–मस्तिष्क को झकझोर कर रख देने वाली है।–

आज काँटे भी मेहरबान हैं फूलों की तरह,

कल दुआओं का असर शाप से बढ़कर होगा।[2]

इस संग्रह की ग़ज़लों में रागानुभूति का अभाव नहीं है, पर जीवन के चुभने वाले अनुभवों और विद्रूपताओं ने ग़ज़लों को एक अलग तरह का रंग प्रदान किया है। इस ग़ज़ल संग्रह की भाषा शुद्ध हिन्दी है। 'पराग' जी को सरल अभिव्यक्ति का नहीं, बल्कि ग़ज़ल की सरल किन्तु कलात्मक अभिव्यक्ति का ग़ज़लकार कहा जा सकता है।

कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन

1- पं. दशाराम मिश्र (रामकवि)

श्री दशाराम मिश्र की साहित्यिक प्रकाशित कृतियाँ आंजनेय गौरव तथा अश्वत्थामा हैं। आपके दोनों ग्रंथों का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत है।

1– अनकहा ही रह गया– श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', पृष्ठ 30

2– फूल के अधरों पर पत्थर– श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', पृष्ठ 14

1-1 आंजनेय गौरव

भक्ति–निरूपण– आंजनेय गौरव में श्री रामचरित मानस के सुन्दर काण्ड की तरह हनुमान द्वारा श्रीराम की भक्ति का निरूपण किया गया है। श्रीराम की साकार मूर्ति 'राम कवि' के मानस पटल पर अंकित है। भक्ति से ही ईश्वर की प्राप्ति, भक्ति ही जीवन तथा भक्ति में ही ईश्वर का निवास है। इस सिद्धान्त में विश्वास रखने वाले पं. दशाराम मिश्र 'रामकवि' अपने आराध्य के प्रति हनुमान की भक्ति भावना प्रस्तुत करते हुये कहते हैं–

परौ दंड इमि पवनसुत प्रभु चरणन धर सीस,
भरे अंक गद्–गद् गिरा भेंटत करुणा धीश।[1]

हनुमानजी जब माता जानकी को खोजने में सफल नहीं होते, तो **'रामकवि'** अपने आराध्य श्रीराम के चरणों की वंदना श्री हनुमान जी के द्वारा करवाते हैं–

बंद रघुनंद पद नंदन प्रभंजन को।[2]

अपने आराध्य श्रीराम में जिन–जिन गुणों को कवि देखता है, उन सभी को प्रकट करता है। इस प्रकार साक्षात् परब्रह्म परमात्मा की स्नेहमयी भक्ति में तन–मन को अनुरंजित रखने की कामना करता हुआ कवि कहता है–

बिहँस कही हनुमन्त ने रे दशमुख अज्ञान।
सृजन प्रलय पालन करन जासु सुगति अनुमान।।
तासु दया अब तक जिये रहौ चंद दिन और।
न तु आजहिं जातौ अधम पिता पुत्र इक ठौर।।[3]

कवि ने परमपिता परमात्मा श्रीराम के अनन्य भक्त हनुमान और विभीषण का लंका में सम्मिलन कराकर तथा दोनों भक्तों के मुख से

1– आंजनेय गौरव– पं.दशाराम मिश्र 'रामकवि', शक्तिप्रिंटर्स, बैठगंज जालौन,पृ.36

2– उपरिवत् – पृष्ठ 4

3– उपरिवत् – पृष्ठ 26

श्रीराम नाम की महिमा एवं अपने आराध्य के सृष्टि–व्यापी प्रभाव और अपने परिचय को इस प्रकार दिया है–

रामकवि मानस में राम रमैं दोउनके।

रसना से राम नाम मंत्र जपै दोऊ हैं।।

उपर्युक्त छन्द में कवि का अन्तर श्रीराम की भक्ति में सराबोर प्रतीत होता है। भक्ति–सरिता में निमज्जित: कवि आत्मविभोर होकर श्रीराम के अनन्य भक्त विभीषण के मुख से अपने आराध्य के नाम का प्रातः स्मरण कराकर पुरातन कालीन परम्परा की झाँकी प्रस्तुत करता है–

प्रात विभीशन राम जपै हर्षै कपि कौन पियूष को घोलै।

कविराम चहूँ दिश चौंक रहो अभिलाषै किमंत्र यहीं पुनि बोलै।

राम हरे जगदीश हरे दशकन्ध को वन्धु रटै पट खोलै।[1]

विभीषण का श्रीराम– नाम स्मरण कर अपने भवन के पट खोलना, ईश्वरीय सत्ता के प्रति अगाध प्रेम का परिचायक है। अपने आराध्य के नाम–स्मरण में ही भक्त विभीषण प्रभु के दर्शन का रसास्वादन करते हैं। इस प्रकार मानव जीवन को सफल बनाने में कवि पूर्णतः प्रवृत्त दिखायी देता है।

प्रकृति चित्रण– पं. दशाराम मिश्र के काव्य में प्रकृति का मनोहारी वर्णन उनके प्रकृति प्रेम को प्रकट करता है। पृष्ठभूमि के रूप में किया गया प्रकृति वर्णन आकर्षक तो है ही, मन में घड़कन कम्पन, स्पंदन और सिहरन भी उत्पन्न करता है। कवि ने प्रकृति के सजीव एवं रमणीय चित्र प्रस्तुत किये हैं। देखिये–

लसत लवंग कुंद बकुल अनारन की।

पाकर, कपित्थ, आम उरझ अंधेरिन में।[2]

1– आंजनेय गौरव– पु. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 11

2– उपरिवत्– पृष्ठ 6

उपर्युक्त छन्द में कवि प्रकृति के श्रृंगारिक आभूषणों की शोभा का वर्णन करता है, तो कहीं प्रकृति को उद्दीपन रूप में प्रस्तुत करता है–

पद्म पराग छांडे जा दिन से आई कपि,
लगत जुन्हाई निशकाल दुखदाई सों।
गगन अंगारन सीं तारक निहारत हीं,
पावै उर दाह प्राण चहत विदाई सों।[1]

इस छन्द में कवि माता जानकी की विरह व्यथा को स्पष्ट करते हुये कहता है कि श्रीराम के चरण कमलों के बिना माता जानकी को अशोक वाटिका की अनुपम शोभा तथा चन्द्रमा की शीतलता भी काल के समान प्रतीत हो रही है। आकाश में तारों के समूहों को लखकर किशोरी जी का हृदय अपने प्राणों को विदाई देना चाहता है। यहाँ पर कवि की विरहानुभूति की गहराई एवं सूक्ष्म निरीक्षण क्षमता व्यंजित हो रही है।

कवि लंका की अनुपम शोभा का वर्णन विविध प्रतीकों के माध्यम से करता है। कभी वह 'झिल्ली झनकार भरी मृदुल पुकारें पुरी' तो कहीं 'कुहक कलापी मिल मदन जगावै हैं' कहकर लंका पुरवासियों के हृदयों को मयूरों की कुहक से आनन्दित करता है। इस छन्द में कवि ने लंका की अनुपम छटा को प्रदर्शित किया है। हृदय में बसे प्रकृति के अलौकिक सौन्दर्य को कवि ने अपने कथन के माध्यम से उजागर किया है। यह कवि का प्रकृति प्रेमी होने का सशक्त प्रमाण है।

रस योजना– पं. दशाराम मिश्र की इस कृति में विविध रसों का परिपाक हुआ है। वीर रस प्रमुखता ग्रहण किए है। शान्त, श्रृंगार तथा अद्भुत रसों के वर्णन भी प्राप्त होते हैं।

1– आंजनेय गौरव– पु. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 20

वीर रस-

केशरी किशोर कर कोप कोट कंचन सैं।
अंगहिं उछाल दशभाल भौन पे गयौ।।
बाड़व सक्रोध जनु पवन पयोध कढ़।
शोध सुर द्रोही पुर पारन प्रलय ढयौ।।[1]

अलंकार योजना- रूपक-

वीणा तार गुंजन मैं प्रखर प्रभा के पुंज,
प्रतिभा मयंक काव्य चन्द्रिका सी चारु दे।[2]

उत्प्रेक्षा-

मंद करन निज गति मरुत नभ धाये हनुमान,
सुरपति कर छूटो मनहुँ वज्र लंक गिर जान।[3]

अनुप्रास-

गहब गुलाब गुल नार नव डार पात,
भ्रमर समूह व्यूह मुखर निहारो है।[4]

अतिशयोक्ति-

'कपि धावत दिग्गज डोल उठे फन फैल उठे सहसानन के'
'हाँक दे हठीले हनुमान नभ छाये तब'
'धरकी धरा है घोर घर फहरानौ है।'

संदेह-

कनक कँगूर पै लंगूर वीर वालधी या,
लीलन को लंक काल जीह का पसारी है।
अवनि अकाश त्रास ताप देख रावण को,
विधि ने सकेलि वन्हि धार विस्तारी है।[5]

1— आंजनेय गौरव— पु. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 28

2— भूमिका – आंजनेय गौरव

3— उपरिवत्,

4— आंजनेय गौरव— पु. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 5

5— उपरिवत्, पृष्ठ 28

उक्त उदाहरणों से यह व्यक्त होता है कि कवि ने अपनी भाव सबलता के प्रभाव–परिवर्द्धन के लिये जिन प्राकृतिक उपादानों को लिया, उसमें उसे पूर्ण सफलता मिली है। इस प्रकार खण्ड काव्य में भक्ति–निरूपण, वीर–भावना, प्रकृति–चित्रण तथा आलंकारिक सौन्दर्य के विभिन्न उदाहरण उपलब्ध हैं। कहा जा सकता है कि पं. दशाराम मिश्र **'रामकवि'** का **'आंजनेय गौरव'** (खण्डकाव्य) एक शुद्ध वीर–भक्ति काव्य है।

1-2 अश्वत्थामा

पं. दशाराम मिश्र ने व्यासकृत महाभारत का गहन अध्ययन कर अश्वत्थामा नामक कृति की रचना की। महाभारत का जब–जब कवि ने अध्ययन किया तो उसे महाछली अश्वत्थामा की जगह महाबली अश्वत्थामा के दर्शन हुये। महाबली अश्वत्थामा के चरित्र–चित्रण की विशेषताओं को उद्घाटित करने के लिये कवि अश्वत्थामा काव्य की रचना कर डालता है। इस कृति की विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

मंगलाचरण की शास्त्रीय परम्परा–

पं. दशाराम मिश्र ने अश्वत्थामा खण्डकाव्य के प्रारम्भ में माँ शारदा एवं गोपेश्वर की वंदना करके मंगलाचरण की शास्त्रीय परम्परा का निर्वाह किया तथा पौराणिक पात्र वीर अश्वत्थामा के उज्ज्वल चरित्र को प्रकाशित किया। इससे सिद्ध होता है कि कवि शास्त्रीय परम्परा के अनुसरण का समर्थक है–

माँ हंसवाहिनी आ जाओ,
सेवक हित हो हृद आसीना।
झंकार तन्त्रि के तार–तार,
हुंकार उठे वाणी बीना।[1]

1– अश्वत्थामा– पं. दशाराम मिश्र 'रामकवि' कंज प्रकाशन, उरई, पृष्ठ 1

हे कमल नयन जगदीश हरे।

मनमोहन माधव गिरधारी।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि माँ शारदा की वंदना करता हुआ कहता है कि हे माँ आप मेरे हृदय में विराजमान होकर अपने वीणा के तारों की झनकार से मेरे अज्ञान को समाप्त कर दो। श्री माधव बिहारी के चरण कमलों की स्तुति करके कवि उनके लोक़रंजन कारी रूप का रसपान करता है। बाँके बिहारी को कवि **'जय गुणातीत करुणेश विभो'** कहता है, तो कहीं जय अधम उवारन राधावर' कहकर उनके सर्वव्यापक स्वरूप का उद्घाटन करता है।

वीरता की भावना–

पं. दशाराम मिश्र महाभारत के पात्र महाबली अश्वत्थामा के पराक्रम से प्रभावित होकर वीरता के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करने में नहीं चूकते हैं। वीरत्व की भावना पात्र को कर्तव्य, पराक्रम तथा साहस का बोध कराती है। इस रचना में आदि से अन्त तक अश्वत्थामा के वीरत्व एवं पराक्रम का उद्घाटन है। इस कृति में वीरता की भावना लोगों के लिये आदर्श प्रतिमान के रूप में दृष्टव्य है–

खुल गये नेत्र ज्यों जलज लाल,

महिं पटक मरोरे भुज विशाल।

मैं सदा शत्रु को दिला ताल,

मरता पर पग नहिं सकूँ टाल।[2]

इस छन्द में कवि वीरों की वीर भावना का वर्णन करके उनके दृढ़ प्रतिज्ञ होने का संकेत कर रहा है। दुर्योधन असहाय पड़ा कराह रहा है, लेकिन कृपाचार्य के करुणा प्लावित वचनों को सुनकर उसका अंतःकरण उत्तेजित हो उठता है। वीर पुरुष संकट से नहीं डरते और अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहते हैं।

1– अश्वत्थामा– पं. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 7

2– उपरिवत् – पृष्ठ 29

पूर्व धारणा का त्याग–

कवि पं. दशाराम मिश्र ने अपने अश्वत्थामा काव्य में सज्जनों की लीक से हटकर महाबली अश्वत्थामा के चरित्र पर प्रकाश डाला है। सज्जनों के चित्त में द्रोणात्मज कुष्ठी तथा महाछली के रूप में विद्यमान था किन्तु **'रामकवि'** ने व्यासकृत महाभारत का गहन अध्ययन करके द्रोणात्मज को महाछली के स्थान पर महाबली पाया और उसके पराक्रम का भी उद्घाटन किया–

को दण्ड साध तव गुरू सुत ने,
शर खण्ड–खण्ड सब कर डारे।[1]

रस एवं अलंकार–

पं. दशाराम मिश्र **'रामकवि'** की इस कृति में वीर रस प्रधान है। उनके इस काव्य में महाबली अश्वत्थामा की वीरता का चित्रण है। इस रचना में आदि से अन्त तक कड़ाके की ध्वनि है जो वीरों को उत्तेजित करती है। वीरत्व व्यंजक भावनायें वीर रस का संचार करके लोगों को अपने धर्म और कर्तव्य का बोध कराती हैं। इसका उदाहरण दृष्टव्य है।–

वीररस– **को दण्ड साध तब गुरू सुत ने,**
शर खण्ड–खण्ड सब कर डारे।
निस्तेज हो गये वीर सभी,
रवि उदित गगन में ज्यों तारे।।[2]

अलंकार सौन्दर्य के निम्न उदाहरण प्रस्तुत हैं–

उत्प्रेक्षा अलंकार–

ध्वनि रक्तधार हो भौंर परें
जनु अम्बु अग्नि भिड़ रार करें।[3]

1– अश्वत्थामा– पं. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 29

2– उपरिवत् – पृष्ठ 29

3– उपरिवत् – पृष्ठ 4

रूपक अलंकार-

कुछ चिंतित चित अरू भ्रान्ति लिये
तन शिथिल मनो मधु कान्ति पिये।[1]

अनुप्रास अलंकार-

द्रोणी ने देखा दुखद दृश्य
दुर्योधन दुख में तड़प रहा।[2]

2- शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र'

मणीन्द्र जी असाधारण व्यक्तित्व सम्पन्न कवि थे। उनका अधिकांश लेखन भारत माता के वैभव को रेखांकित करता है।

मणीन्द्र जी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे। भारत माता के विदेशी चंगुल से मुक्ति हेतु उन्होंने अनेक असहनीय कष्टों का सामना किया। देश–प्रेम तो उनके रग–रग में विद्यमान था। आपने विभिन्न कविताओं के माध्यम से राष्ट्रीय प्रेम को जन–जन में संचार करके अनूठा कार्य किया है। मणीन्द्र जी के कार्य–कौशल से सभी क्रान्तिकारी नेता प्रभावित थे। उनके निवास पर चन्द्रशेखर आजाद लम्बे समय तक रहे और उनके साथ जो भ्रातृप्रेम जुड़ा वह आजीवन स्मृति की मंजूषा की अमूल्य धरोहर बन गया। कला–क्षेत्र की समस्त विधाओं के प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति यहाँ आकर मणीन्द्र जी का स्नेहातिथ्य ग्रहण किये बिना इस जनपद से चुपचाप निकल गये हों, ऐसा सम्भव नहीं था।

मणीन्द्र जी की अनूठी छन्द–श्रृंखला–बद्ध काव्य कृति **'शैव्या विलाप'** करुण रस से ओत–प्रोत है। 'हँसते फूल' इनकी द्वितीय प्रकाशित कृति है। उनका रचना संसार अत्यन्त विशद है, किन्तु मात्रदो ही रचनायें उपलब्ध हो सकी हैं। शेष अप्रकाशित रचनायें अनुपलब्ध हैं। मणीन्द्र जी

1– अश्वत्थामा– पं. दशाराम मिश्र 'रामकवि', पृष्ठ 40

2– उपरिवत्, पृष्ठ 5

जब मंच पर राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत घनाक्षरियाँ पढ़ते थे, तो श्रोता मंत्र–मुग्ध हो जाते थे। उनके निवास पर प्रायः कवि गोष्ठियाँ होती रहती थीं। जिससे तत्कालीन कवियों में विचारों का आदान–प्रदान होता रहता था। उनकी प्रकाशित कृति शैव्या विलाप का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न प्रकार प्रस्तुत है–

2-1 **शैव्या विलाप** :

प्रकृति वर्णन

मणीन्द्र के काव्य में प्रकृति की मनोहारी छटा दृष्टिगोचर होती है। काव्य के प्रारम्भ में किया गया प्रकृति वर्णन ह्रदय में स्पंदन पैदा करने वाला है। कवि प्रकृति को मानव की सहचरी के रूप में दर्शाता है। प्रकृति के सजीव एवं रमणीय चित्र प्रस्तुत हैं–

सघन घटाओं से घिरा था नभ चारों ओर,
घोर घन घोष से घनेश घहराता था।
विसुध विनिद्रा व्याप्त विश्व करता था शैन,
चैन से उलूक निशि–गुन–गन गाता था।
विभव विहीन वसुधा कर सुधाकर का,
धूमिल सा बिम्ब नभ बीच छिपा जाता था।
सरल सलौना उस क्षण हाय शैव्या का,
मृदुल खिलौना चन्द्र छौना छुटा जाता था।[1]

प्राकृतिक संवेदना को भी कवि मनोहारी ढंग से प्रस्तुत करता है–

कमल नयन बरसाते करुणा के अश्रु,
मुख प्रिय रोहिताश्व नाम रट लाता था।
निठुर सुरेश भी विलाप सुन शैव्या का,
वारिद बहाने द्रव वारि बरसाता था।

1– शैव्या विलाप– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' पृष्ठ 4

चपल प्रकाश चपला का नभ मध्य मानो,

गगन कठोर का कलेजा फटा जाता था।

उलट रहा था अनुशासन बसुन्धरा का,

विधि चतुरानन का आसन हिला जाता था।[1]

उपर्युक्त छन्दों में कवि प्राकृतिक उपमानों का सजीव चित्रण करता है। कवि बादलों की सघन घटाओं एवं उनकी गर्जनाओं का वर्णन करके शैव्या के घोर विलाप का सजीव चित्रण करता है। कवि ने इन छन्दों में प्राकृतिक संवेदना का भी वर्णन किया, जिसमें मानव के दुखी होने पर प्रकृति भी दुख का अनुभव करती है। शैव्या के कारुणिक विलाप से द्रवित होकर इन्द्र निष्ठुर होने पर भी जल बरसाने के बहाने आ जाता है। और कठोर हृदय–बादल का कलेजा भी शैव्या के विलाप से विदीर्ण हुआ जा रहा है।

वात्सल्य भाव-

मणीन्द्र जी के काव्य में वात्सल्य भाव सहज में ही दृष्टिगोचर होता है। आपने शैव्या द्वारा अपने पुत्र रोहिताश्व की दशा पर विलाप करने से वात्सल्य उजागर किया है। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

जननि भुजांक में अचेतन छौना का तन,

मानो लतिका में नव–पुष्प कुम्हलाता था।

तन अभिराम श्याम पटुता गरल से था,

शशि पूर्णिमा का राहु द्वारा ग्रसा जाता था।

विषम व्यथा से विष करता प्रकोप घोर,

मुख से हा श्वेत विष फेन बहा आता था।

जननि सभीत–चीत्कार करती थीं हाय,

बेटा मुझसे क्या चार दिन ही का नाता था।[2]

1– शैव्या विलाप– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' पृष्ठ 5

2– उपरिवत् – पृष्ठ 5

उपर्युक्त छन्द में कवि ने रोहिताश्व की करुण दशा को देखकरविलाप करती शैव्या का वात्सल्य भाव प्रदर्शित किया है। कवि ने माँ शैव्या रूपी लतिका में रोहिताश्व रूपी नव–पुष्प का जहर के कारण कुम्हलाना बतलाया है। अनेक उपमानों से शैव्या और रोहिताश्व का चिर–वियोग दिखाया गया है।

इससे स्पष्ट होता है कि कवि का हृदय वात्सल्य–भाव से परिपूर्ण था, जिसके कारण इस कृति को पूरा पढ़ने में कवि कण्ठावरोध अनुभव करता था।

वेदना की गम्भीरता

मणीन्द्र जी के इस काव्य में वेदना की चरमावस्था है। शैव्या का विलाप वेदना की गहराई का करुण स्पर्श है। विलाप करती शैव्या सभी देवों तथा आदि–शक्तियों का आह्वान करती है, लेकिन उसकी करुण पुकार कोई नहीं सुन रहा है। उदाहरण देखिये–

किसको मनाऊँ ध्यान किसका लगाऊँ आज,
अमर समाज भी गरल से थर्राता है।
करते न कान देव–विनय विनम्र मेरी,
दृश्य सिन्धु मन्थन का स्मृति में आता है।
सभय महेश शेष करते गले में वास,
पास का विशेष बैर–भाव भय लाता है।
सुनते पुकार कमलेश भी न लेश मात्र,
क्योंकि शेष–शैय्या पे उनको सुलाता है।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि शैव्या की वेदना को अपने काव्य में गम्भीरता प्रदान करता है। शैव्या विलाप के माध्यम से कवि देव समाज का निष्ठुर होना प्रदर्शित करता है। शैव्या अपने पुत्र की रक्षा हेतु सारे उपाय करती है, किन्तु वह असफल ही रहती है।

1– शैव्या विलाप– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' पृष्ठ 7

दानवीरता-

शैव्या विलाप में दानवीरता की गौरव—गाथा मुखरित होती है। शैव्या क्षत्राणी है, वह राजा हरिश्चन्द्र की धर्मपत्नी है। कवि हरिश्चन्द्र की दानवीरता के उच्च आदर्शों को अपनी कृति के माध्यम से उद्घाटित करता है तथा शैव्या के बलिदान का उत्कर्ष भी प्रस्तुत करता है। दानवीरता का उत्कृष्ट उदाहरण दृष्टव्य है—

भय है न किन्तु क्षत्राणी बलिदानी हूँ,
दानी पतिदेव की मैं शपथ उठाती हूँ।
दान करती थी दान मांगूगी कदापि नहीं,
विश्व दया दान को सरोष ठुकराती हूँ।
सुत परित्याग किन्तु सत्य का न होगा त्याग,
सत्य बलिवेदी पे सहर्ष बलि जाती हूँ।
धन—दान, तन—दान सजन—सनेही दान,
सुत का भी आज बलिदान मैं चढ़ाती हूँ।[1]

उपर्युक्त छन्द में रानी के त्याग, बलिदान, सत्य और क्षत्राणी के गौरव का चित्रण किया गया है। रानी सत्य के रक्षार्थ धन, तन तथा स्वजनों का दान करना भी सहर्ष स्वीकार कर लेती है। यहाँ तक कि पुत्र—बलिदान के लिए तत्पर हो जाती है।

कवि ने समाज के समक्ष रानी शैव्या का उत्तम चरित्र प्रस्तुत करके प्रत्येक भारतीय नारी को शैव्या के अनुकरण के लिये प्रेरित किया। कविवर मणीन्द्र जी ने शैव्या—विलाप का सृजन कर नारी समाज में दानवीरता, वत्सलता तथा सत्य के प्रति विश्वास जाग्रत किया है।

2-2 हँसते फूल

कविवर मणीन्द्र जी की द्वितीय कृति **'हँसते फूल'** है। इसमें कवि ने मानवता का भरपूर समर्थन किया है। वह देश की अनुपम प्राकृतिक

1— शैव्या विलाप— शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' पृष्ठ 9

शोभा को निहारकर इतना प्रफुल्लित है कि देश के समग्र सौन्दर्य को अपनी कृति में संजोकर रख देता है। **'हँसते फूल'** का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न प्रकार प्रस्तुत है।–

सौन्दर्य वर्णन

मणीन्द्र जी ने नयनाभिराम सौन्दर्य की अभिव्यंजना चन्द्रमा को नारी के समकक्ष रखकर तुलनात्मक रूप: से की है। कवि ने नायिका के सौन्दर्य का अनूठा वर्णन किया है। नायिका के नेत्रों का मिलाप गुप–चुप भाषा में होता है।

वस्तुतः सौन्दर्य में अतीव आकर्षण होता है, रिझाने की शक्ति होती है। उसके दर्शन से मानवी चेतना में एक विचित्र भाव–दशा का संयोजन होता है। भावात्मक विकास की कल्पनातीत प्रक्रिया का उदय होता है। कवि नायिका के सौन्दर्य का वर्णन करता हुआ कहता है–

वह कैसी थी मधुमय बेला,
जब तुमसे नेत्र मिलाप हुआ।
मूकों की गुप–चुप भाषा में,
कुछ गुपचुप मूकालाप हुआ।

पट घूँघट से विधु–वदन छिपा,
विधु–वदने! पुनि तुम लुप्त हुयीं।
संध्या की तिमिर तारिका सी,
तुम विश्व गगन में गुप्त हुयीं।

मैं चकित भ्रमित स्तम्भित सा,
अब न तुम नादान री सखि।[1]

इस छन्द में कवि ने नायिका के अनुपम सौन्दर्य का वर्णन किया है। कवि नायिका की नेत्र–सुषमा से उत्साहित होकर मूक–भाषा में वेसुध नेत्र–मिलाप कराता है। नायिका का मुख चन्द्रमा के समान है। वह नायिका के रूप सौन्दर्य को प्राकृतिक उपमानों से स्पष्ट करता है। नायिका के सौन्दर्य से प्रकृति भी प्रभावित है।

1– हँसते फूल– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' बुन्देल कला संगम, उरई, पृष्ठ 16

प्रकृति वर्णन-

मणीन्द्र जी के काव्य में प्रकृति का मनोहारी वर्णन उनके प्रकृति–प्रेम को दर्शाता है। **'हँसते फूल'** में **'मलय पवन'**, **'नभ के तारे'**, **'सरित के किनारे'** आदि कविताओं में कवि ने प्रकृति के सजीव एवं रमणीय चित्र प्रस्तुत किये हैं। उदाहरण दृष्टव्य है–

ये तारे सितारे से क्या हैं? गगन में।
मगन हो विहंसते हैं, क्यों मन ही मन में?
प्रिय! जब प्रथम दिन मुझे तुम मिली थीं,
विहंस कर जुही की कली सी खिली थीं।
तुम्हारे मधुर हास का चित्र लेकर,–
धवल चन्द्रिका चन्द्र से हिल मिली थी।
ये श्रम बिन्दु उसके झलकते हैं तन में–
सितारे नहीं है सजनि! ये गगन में।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने प्राकृतिक उपमानों से साम्य स्थापित करके नायिका का अद्‌भुत सौन्दर्य–वर्णन किया है। कवि निम्न पंक्तियों में रात्रि के समय फैली चाँदनी के प्रकाश में नदी की सुन्दरता का वर्णन करता है–

रजनि अपनी समय अपना, सलोनी चाँदनी अपनी।
नवाशाओं से परिपूरित, सरिता उन्मादिनी अपनी।।
तरंगों! मत उलझकर डालना उलझन मेरे मन में।
रवानी आपकी पर है जवानी जोश में अपनी।।
सजनि! देखो सरित है और सरि के दो किनारे हैं।
हृदय दो प्राण इक, यह तो सहज अनुहार हैं अपनी।।[2]

1– हँसते फूल– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' बुन्देल कला संगम, उरई, पृष्ठ 25

2– उपरिवत् – पृष्ठ 34

उपर्युक्त छन्द में कवि रात्रि को मानव की सहचरी बतलाता है। वह नदी की अनुपम सुन्दरता का वर्णन करने के लिये नदी को चाँदनी से अलंकृत करता है। वह नदी के दो किनारों को दो ह्रदय तथा उसमें एक ही प्राणस्पंदन बतलाता है।

प्रेम की महत्ता-

प्रेम ही ईश्वर है, प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही परमपिता के सन्निकट पहुंचने का एक मात्र साधन है।[1] इस सिद्धान्त में विश्वास रखने वाले मणीन्द्र जी ने **'सम्राट एडवर्ड का प्रेम के पीछे राज का परित्याग कर देना'** अपनी कविता के माध्यम से प्रस्तुत किया है। उदाहरण दृष्टव्य है–

है सत्य प्रेम के मन्दिर में,
कुछ छुआछूत की आन नहीं।
प्रेमी की पागल दुनिया में,
अपमान नहीं सम्मान नहीं।

ओ सखे! तुम्हारा प्राण बाल–रवि
नभ में बिम्बा कार हुआ।
गृह–गृह, कोने–कोने में उज्जवल
प्रेम किरण विस्तार हुआ।
कोई बोलो इस दुनिया में
अब दीनों का उद्धार हुआ।

पर उन्हें मरण में शान्ति मिली
जीवन में तुमने सुख पाया।
है किसे प्रेम कहते जग को
आदर्श अनूठा दिखलाया।
वह कोहनूर मणि जटिल ताज
का तुम्हें न किंचित लोभ हुआ।

इक मिट्टी का ढेला था मानो
हँसते–हँसते ठुकराया।[2]

1– रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश' प्राक्कथन, नेशनल प्रेस, कानपुर

2– हँसते फूल– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' पृष्ठ 29

इस छन्द में कवि ने प्रेम का उच्च आदर्श प्रस्तुत किया है तथा प्रेम के पीछे राजसिंहासन के त्याग का चित्रण किया है।

मातृभूमि प्रेम-

कवि ने राष्ट्र–भक्ति से प्रभावित होकर देश की गौरव गाथा को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करते हुये देश के पावन स्थलों का सजीव चित्र खींचा है। **'मणीन्द्र'** जी की **'जयमाला सी गंगा यमुना की धारा माता के वक्षस्थल पर लहराती है।'** जैसी उक्तियाँ भारत–भूमि को पावन सिद्ध करने के लिये पर्याप्त हैं। राष्ट्र–भक्ति ने कवि को देश–गान के लिये प्रेरित किया। पावन–पुण्यमयी भारत माता की एक झलक पर कवि न्यौछावर हो जाता है। –

ओ शिव के कैलाश, सरोवर मानस के,
भारतीय संस्कृति के तुम उद्‌गम थल हो।
जिस पर विहरे पावन चरण शिवा के हैं;
उस अनन्त माता के पाले भूतल हो।।
मानस के मृदुकूल किनारों की निधियाँ,
ब्रह्म पुत्र भारत में लेकर आती है।
जयमाला सी गंगा यमुना की धारा,
माता के वक्षस्थल पर लहराती है।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम प्रकट करते हुये कहा है कि कैलाश पर्वत तथा मानसवरोवर हमारे देश की संस्कृति के उद्‌गम स्थल हैं। कवि पुनः कहता है कि गंगा, यमुना तथा सरस्वती जैसी पावन नदियाँ माँ के वक्षस्थल पर जयमाला के समान शोभा पाती हैं। यहाँ विदेशियों को स्मरण कराता हुआ कवि कहता है कि हम उसी भारत माता के सपूत हैं, जहाँ पर शिव, ब्रह्मा, विष्णु आदि देवताओं ने जन्म लेकर संसार का उद्धार किया है।

1– हँसते फूल– शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र' पृष्ठ 48

कथन का तात्पर्य है कि कवि मातृभूमि के प्रेम से ओत–प्रोत है। उसमें मातृभूमि के प्रति इतना अगाध प्रेम है, कि वह अपने देश का गुणगान करके समाज के प्रति एक नवादर्श प्रस्तुत करता है।

3- पं. बाबूराम गुबरेले

पं. बाबूराम गुबरेले के साहित्यान्तर्गत प्रकाशित रचनाओं में **'आंजनेय बन्धु'** ही श्रेष्ठ काव्य ग्रंथ है। प्रस्तुत कृति में **'आंजनेय बन्धु'** अर्थात् महाभारत के प्रसिद्ध पात्र, वीरता की साक्षात् मूर्ति भीम के युद्ध– कौशल एवं उनकी वीरता का चरमोत्कृष्ट वर्णन है। कवि ने पौराणिक कथानकों से हटकर विचित्र कल्पनायें प्रस्तुत की हैं, विभिन्न घटनाओं से भीम के वीरत्व व्यंजक चरित्र को निखारा गया है। कवि की लेखनी से उद्भूत विचारों की नवीनता एवं भावों की उच्चता सराहनीय है। **'आंजनेय बन्धु'** खण्डकाव्य के काव्य–सौष्ठव को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है।

3-1 आंजनेय बन्धु

बहु विवाह का खण्डन–

पं. गुबरेले ने अपनी काव्य कृति **'आंजनेय बन्धु'** में बहु विवाह का खण्डन करते हुये एक ही विवाह को स्वीकार किया है। यद्यपि उस समय राजाओं के कई विवाह होने की प्रथा थी, जिसके कारण समाज में भारतीय संस्कृति की गरिमा समाप्त हो चुकी थी। इसी का विरोध करता हुआ कवि कहता है–

अनेक नारी रखते स्व–सदन में।

प्रशान्ति पाने निज काम–शक्ति से।

न शान्ति होती फिर भी कुवासना।

कालमयी केलि– कला प्रसंग से।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि का मन्तव्य राजाओं के भारतीय संस्कृति के विपरीत आचरण करने से है। कवि अपने काव्य से समाज में

1– आंजनेय बन्धु– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 6

ऐसा आदर्श प्रस्तुत करता है कि जिससे सामाजिकता शुद्ध वातावरण से पूर्ण हो सके। लेकिन इतना कहने पर भी कवि का हृदय धैर्य धारण नहीं कर पा रहा है इसलिये आगे और भी राजाओं के बहु–विवाह से होने वाली क्षति का वर्णन करता है–

विराम देते निज काम भाव को
न देख पाते सुख अन्य वंश के।
सदैव हो रक्षित सैन्य– शक्ति से
प्रमोद पाते तुम रक्त–पात में।[1]

कवि राजाओं को कामवासना में इतना लीन बतलाता है कि वे भोग–बिलास के कारण मृत्यु के वरण को भी तैयार रहते हैं। राजाओं की ऐसी दयनीय दशा पर कवि का हृदय पीड़ा से त्रस्त है। भारतीय संस्कृति की क्षति से कवि का मन खिन्न सा दिखायी देता है। इस खण्डकाव्य के माध्यम से कवि समाज में अनैतिक कार्यों को रोकने के लिये प्रयासरत है।

नारी में विचार शक्ति-

पं. बाबूराम गुबरेले ने इस कृति के माध्यम से महान नारियों की विचार शक्ति को स्पष्ट किया है। महारानी कुन्ती महाराज पाण्डु से विनम्रता पूर्वक अपनी भावना व्यक्त करती हैं–

कुन्ती बोली व्यथित पति से शान्तिकारी स्व–वाणी।
मेरे स्वामी दुखित मत हो मर्म–भेदी–व्यथा से।
मैंने पाई मुदित मन हो देव–कर्षी क्रिया है।
श्रद्धा देके विगत मद हो पूज्य आचार्य हीं से।[2]

कवि का तात्पर्य है कि जब महर्षि किन्दम द्वारा अभिशापित महाराज पाण्डु पीड़ा से छटपटाने लगे और वंश–वृद्धि के बारे में शोक मग्न हो गये, महारानी कुन्ती ने महाराज पाण्डु को गुप्त रहस्य से अबगत

1– आंजनेय बन्धु– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 6

3– उपरिवत् – पृष्ठ 8

कराकर नारियों में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त किया तथा देश की महानता को उजागर किया। इससे कवि का नारियों के प्रति श्रृद्धा–भाव झलकता है।

वीरता का समावेश-

इस खण्डकाव्य में वीरता तो कूट–कूटकर भरी है। भीम को हनुमान के समान वीर तथा युद्धकला में निपुण बताया है। कवि भीम को प्रबल साहस की मूर्ति, कहीं प्रबल दानव–देव तो कहीं महावीर कहने से नहीं चूकता है। इसका एक उदाहरण दृष्टव्य है–

प्रबल साहस की प्रति मूर्ति था।
गति कहीं उसकी रुकती नहीं।
प्रबल दानव देव अदेव हो,
अभय हो लड़ता यह भी कहीं।[1]

कवि की इतने वीरत्व वर्णन से तृप्ति नहीं होती, वह आगे भी वीर भीम के वीरत्व को उजागर करने के लिये उत्साहित दिखायी पड़ता है।–

प्रलम्ब शाखा युत पेड़ शिशुंपा,
उपारता था निज बाहु शक्ति से।
कभी गयन्दादिक वन्य केसरी,
निपातता था कर घात मुष्टिका।[2]

उपर्युक्त छन्द में कवि भीम को अनेक पर्याय शब्दों से सम्बोधित करता हुआ उसके अदम्य वीरता व्यंजक चरित्र को उद्घाटित करता है। कवि अभय, प्रबल, तथा साहस की मूर्ति आदि शब्दों से उस महावीर के चरित्र को बड़ी सतर्कता से स्पष्ट करता है।

अयोग्य शासक की निन्दा-

कवि इस खण्डकाव्य में अयोग्य शासकों को अस्तित्व विहीन बतलाता है। अयोग्य शासक राज्य में शान्ति व्यवस्था संचालित नहीं कर

1– आंजनेय बन्धु– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 11

2– उपरिवत् – पृष्ठ 19

सकता। इसके फलस्वरूप दिनों दिन अपराधों की संख्या बढ़ती जाती है और प्रजा में शोक व्याप्त रहता है। दुखित होकर कवि कहता है–

जब प्रशासक आश्रय दे सकें,
मलिन को खल को अति नीच को।
तब कभीं नहिं रक्षित हो सके,
निपुणता शुचिता वर न्याय भीं।
नहीं व्यवस्था नहिं शान्ति हो सके,
अशान्ति हो व्याप्त समग्र राज्य में।
अवश्य हों भ्रष्ट सु–नीति–वीथियाँ,
मलीन होवे शुचि धर्म मार्ग हीं।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि एक अयोग्य शासक की निन्दा तथा सत्यता को स्पष्ट करता हुआ कहता है कि अस्तित्व विहीन शासकों के कंधों पर प्रशासनिक दायित्व रख देना केवल अशान्ति प्राप्त करना है। सुव्यवस्था तो राज्य की सीमा को स्पर्श कर ही नहीं सकती। कवि का उद्देश्य देश में कुशल शासकों के नेतृत्व में राज्य सत्ता को सौंपना तथा प्रजा को सुख–शान्ति प्रदान करना है। कवि ने अपने खण्डकाव्य के माध्यम से कुशासक दुर्योधन के दुश्चरित्र को रेखांकित किया है।

वात्सल्य भाव-

इस कृति में वात्सल्य भाव के दर्शन होते हैं। कवि का हृदय वत्सलता से ओत–प्रोत होकर माता कुन्ती से अपने पुत्र भीम के प्रति अगाध स्नेह प्रस्तुत कराता है। माता कुन्ती अपने पुत्र के दर्शन पाकर उसे अपनी गोदी में लेने के लिये आतुरता प्रकट करती हैं–

हर्षोत्फुल्ला जननि उर थीं देख के पुत्र ही को।
भींगे दोनों नयन वर थे मातु के प्रेम ही से।।
भूलीं सारीं हृदय तल की मर्म भेदी व्यथा थीं।
दौड़ीं लेने निज तनय को गोद में प्रेम ही से।।[2]

1– आंजनेय बन्धु– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 19

2– उपरिवत्, पृष्ठ 26

इसी प्रकार—

प्रवाह माना सरिता सनेह कीं।
न बोल पातीं सुत के समक्ष हीं।।
अतीव प्रेमाकुल मंजु मातु ने।
स्व—पुत्र को था उर से लगा लिया।।[1]

इन छन्दों में माता का पुत्र के प्रति स्नेहाधिक्य झलकता है। माता कुन्ती अपने पुत्र भीम को देखकर इतनी हर्षोत्फुल्ल हैं कि उनकी वाणी की गति समाप्त हो जाती है और वह मुख से कुछ न कहकर अपने पुत्र को प्रेम से गोदी में समेटना चाहती हैं। कवि माता के प्रेम को सरिता का प्रवाह बतलाता है,जो कभी न रुककर आबाध गति से प्रवाहित रहता है।

कवि ने अपने खण्डकाव्य में वात्सल्य का मनोहारी वर्णन किया हैं। समाज में माँ—बेटे का नाता बड़ा ही पवित्र है। माँ का हृदय अपार प्रेम का सागर है। जिसमें बेटा गोता लगाकर स्नेह से सराबोर हो जाता है।

भ्रातृ प्रेम-

कवि ने बन्धुत्व प्रेम से प्रभावित होकर भाई—भाई में अगाध प्रेम को प्रदर्शित करते हुये भ्रातृत्व के आदर्श को उपस्थित किया है। बन्धुत्व प्रेम ने कवि को भ्रातृ—प्रेम प्रदर्शित करने के लिये प्रेरित किया है। भ्रातृ—प्रेम की एक झलक पर कवि न्यौछावर है। एक उक्ति देखिये—

सधीर बोले पुनि धर्म—पुत्र हीं।
कहाँ बसे थे निज देश छोड़ के।।
विपत्ति मग्ना करके स्वमातु को।
दुखी बना के इस पाण्डु—वंश को।।

अवश्य है ज्ञान सु भोजनादि का।
समोद बोले तब भीमसेन थे।।
प्रबुद्ध हीं था वर नाग—लोग में।
न जान पाई गति थीं प्रयाण कीं।।[2]

1— आंजनेय बन्धु— पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 26

2— उपरिवत्, पृष्ठ 26

इन छन्दों में कवि भ्रातृत्व प्रेम को उजागर करता है। भीम के समयानुसार घर न लौटने पर युधिष्ठर चिन्तित हैं। जब भीम घर को लौटते हैं, तो धर्मराज बड़े स्नेह के साथ भीम से विलम्ब का कारण पूछते हैं। यहाँ कवि भाई–भाई में अगाध प्रेम की व्यंजना करता है। सामाजिक दृष्टि से भ्रातृत्व प्रेम का आदर्श प्रस्तुत करने में कवि पूर्ण निष्णात दिखायी देता है।

श्रृंगार निरूपण-

गुबरेले जी का श्रृंगार वर्णन अद्वितीय एवं अनूठा है। उनका संयोग वर्णन चित्ताकर्षक है। कवि हिडिम्बा राक्षसी की सुन्दरता को वर्णित करता है। हिडिम्बा राक्षसी के शोभनीय अंगों की सुन्दरता का वर्णन करता हुआ कवि कहता है–

सुनील–नेत्री, कल–कण्ठ कोकिला।
विमोहिनी मानस मंजु मानवी।।
निशाचरी थी पर मंजु–भाषिणी।
कृशोदरी थी पृथुला– पयोधरी।।
दुकूल नीला वपु पै विराजिता।
सु–कण्ठ में थी गज मुक्त–मालिका।।
सु पीन जंघा गज मत्त गामिनी।
गई अभीता वर–भीम सामने।।[1]

कवि उपर्युक्त छन्दों में हिडम्ब की बहिन के शारीरिक सौन्दर्य को विभिन्न उपमानों से प्रकट करता है। उसके नेत्र नीले तथा कण्ठ कोयल के समान है, वह अपने गले में गज–मुक्ता माला धारण किये है। उसकी सुन्दरता का वर्णन करते हुये कवि श्रृंगार रस में सराबोर है।

1– आंजनेय बन्धु– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 46

प्रकृति चित्रण-

काव्य में प्रकृति का मनोहारी वर्णन कवि का प्रकृति प्रेम दर्शाता है। काव्य कृति के प्रथम सर्ग में किया गया प्रकृति वर्णन बड़ा ही चित्ताकर्षक है। कवि ने प्रकृति के सजीव एवं रमणीय चित्र प्रस्तुत किये हैं।

नियति की सुषमा अवलोक के।
हृदय हर्षित था शुचि पाण्डु का।।
विचरते लखते शुचि सौम्यता।
गिरि, नदी, वन, कानन कुंज की।।

सघन–कानन–कुंज–हरीतिमा।
विलसती अति ही मनभावनी।।
पहुप–पूरित पादप–मालिका।
लस रही लतिका परिवेष्टिता।।[1]

उपर्युक्त छन्दों में कवि प्राकृतिक उपमानों का सजीव चित्रण करके ऋतुराज का आभास कराता है। प्रकृति की सुषमा से हर्षित राजा का हृदय उत्साहित है। वह नदी, तालाब, वन, उपवनों की अनुपम शोभा से प्रफुल्लित है। यहाँ पर कवि की अनुभूति की गहराई एवं सूक्ष्म निरीक्षण क्षमता अभिव्यंजित हो रही है।

रस एवं अलंकार-

वीर रस-

त्वरित ही मुठिका पर भीम से।
वसुमती पर कुण्ठित हो गयी।।
पुनि सचेत हुयी कर जोड़ के।
विनत होकर यों कहने लगी।।[2]

1— आंजनेय बन्धु— पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 1

2— उपरिवत् — पृष्ठ 48

करुण रस-

विनाश लीला अवलोक सद्म की।
सपुत्र कुन्ती दुखिता अतीव थी।।
हुयी विपन्ना अति भीति संकुला।
विलोक ऐसी अपनी विडम्बना।।[1]

भयानक रस-

अति भयानक काल, कराल से।
फण उठा फणि ही फुफकारते।।
त्वरित आकर ही भट भीम का।
दशन से वपु दंशित था किया।।

अनुप्रास अलंकार-

पवन पोषित है मम गात भी,
पवन के तुम पावन पुत्र हो।[2]

उत्प्रेक्षा अलंकार-

प्रलम्ब थीं बाहु गजेन्द्र शुण्ड– सी,
सु–जंघ मानो युग लौह खम्भ हीं।[3]

रूपक अलंकार-

इधर थी जननी अति आकुला।
व्यथित मानस– मंजु मराल था।

4- **रामबाबू अग्रवाल**

आपका **'आलोक दर्शन'** काव्य–ग्रंथ उपलब्ध है। इस काव्य ग्रंथ में वीरत्व व्यंजक भावनाओं को प्रधानता दी गयी है। आपने वीरों की गौरव–गाथा को उभारकर वीरता का अनुपम आदर्श प्रस्तुत किया है। कवि

1– आंजनेय बन्धु– पं. बाबूराम गुबरेले, पृष्ठ 42

2– उपरिवत् – पृष्ठ 22

3– उपरिवत् – पृष्ठ 46

ने मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम प्रकट कर नवपीढ़ी के समक्ष आदर्श प्रस्तुत किया है। **'आलोक दर्शन'** ग्रंथ का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न प्रकार प्रस्तुत है।

मातृभूमि प्रेम-

रामबाबू अग्रवाल जी मूलतः मातृ–भूमि के उपासक थे। मातृभूमि के प्रति भक्ति–भावना उनमें कूट–कूटकर भरी थी। कवि समाज में व्याप्त मातृभूमि के प्रति अश्रृद्धा से पीड़ित है। वह मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम प्रस्तुत करता है–

समय जुझारू जब आ जाता होड़ लगी बलिदान की।
मर मिटना है नई सर्जना, माटी हिन्दुस्तान की।
हर संकट पर हुये समर्पित, रक्षक बनकर झेला है।
हो शत कोटि भुजायें तत्पर, युद्ध खेल सा खेला है।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि राष्ट्र के प्रति श्रृद्धावनत होकर मातृभूमि के प्रेम में देशवासियों के बलिदान की होड़ को प्रकट करता है। देश के नवयुवक मातृभूमि की रक्षा के लिये इतने उत्साहित हैं कि उन्हें यह प्रतीत नहीं होता कि वे युद्ध लड़ रहे हैं या खेल खेल रहे हैं। कवि का मातृभूमि से प्रेम देशवासियों में भारत माता के प्रति प्रेम का आदर्श बनकर उभरा है।

जन-जाग्रति -

कवि भारत माता की गोद में पोषित सपूतों की वीरता का वर्णन करता है–

सोया यौवन जाग उठा है अब तो हिन्दुस्तान का।
उत्साह उमंगें भाव जगा, राष्ट्रीय अभिमान का।।
धरती माता की रक्षा को वीरों की हैं टोलियाँ।
जन मानस में आज गूँजती, इंकलाब की बोलियाँ।।[2]

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, पृष्ठ 16

2– उपरिवत्, पृष्ठ 17

इस छन्द में कवि ने क्रान्ति में बल, विश्वास तथा साहस का भाव व्यक्त किया है, जिससे क्रान्तिकारी दलों में उत्साह की अभिवृद्धि होती है। भारत माता की रक्षा हेतु क्रान्तिकारियों के समूह के समूह दृष्टिगत होते हैं। भारत माता के सम्मान को सुरक्षित रखने के लिये देश का हर एक नवयुवक उत्साहित होकर कटिबद्ध है।

देश की व्यापकता-

कवि ने देश की सीमाओं का रेखांकन करके विशिष्ट स्थलों के अनूठे सौन्दर्य का वर्णन भी प्रस्तुत किया है। अनुपम सौन्दर्य सम्पन्न देश के सीमान्त प्रदेश मातृभूमि को गौरवान्वित करते हैं और भारत भूमि को विश्व श्रृंखला में सर्वोपरि परिगणित करते हैं–

काश्मीर से केरल तट तक, देश हमारा हिन्दुस्तान।
असम, आन्ध्र, गुजरात, हिमांचल देश हमारा हिन्दुस्तान।।
पूरब में सूरज की लाली, बंग, मगध की है हरियाली।
उत्कल का इतिहास जानती, अनि अशोक की बलशाली।।[1]

यहाँ कवि ने देश का सीमांकन करते हुये असम, आन्ध्र, गुजरात और हिमांचल राज्यों की अनुपम प्राकृतिक शोभा का वर्णन किया है। एक ओर पूर्व दिशा का लालिमायुक्त सौन्दर्य तथा हरीतिमायुक्त भूमि का आकर्षक अँचल है तो दूसरी ओर बंगाल तथा मगध प्रान्तों की अनुपम छटा विद्यमान है। वह देश की संस्कृति, सभ्यता और पवित्र नदियों का भी उल्लेख करता है।–

मध्य प्रान्त में खानें सारी, विन्ध्य भूमि है शोभा न्यारी।
उत्तर गंगा यमुना तट तक, काशी मथुरा प्यारी प्यारी।।
एक संस्कृति एक सभ्यता, देश हमारा हिन्दुस्तान।
काश्मीर से केरल तट तक, देश हमारा हिन्दुस्तान।।[2]

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, पृष्ठ 18

2– उपरिवत्, पृष्ठ 18

कवि देश की विविधता को प्रकाशित करता है। वह भारत भूमि को रत्नों की खान तथा पवित्र भूमि बतलाता है और विभिन्न जाति, वर्ण और सम्प्रदाय होते हुए भी यहाँ की संस्कृति की एक्यता प्रदर्शित करता है।

अकर्मण्यता का विरोध-

व्यसनों में लीन व्यक्तियों को कवि फटकारता भी है। वह अकर्मण्यता के कारण उपस्थित विनाश की लीला से प्रभावित समाज का वर्णन करता है।–

हम खड़े सदूर पर उदास देखते रहे।
डूबते जहाज का विनाश देखते रहे।।
समक्ष सृष्टि घन सघन, तम गगन बिखेरते।
प्रचंड कर दिनेश के निःसहाय हेरते।।[1]

कवि उपर्युक्त छन्द में आलस्य में लीन देश की जनता को धिक्कारते हुये कहता है, कि जहाज पानी में डूब रहा है, लेकिन उसको बचाने का उपाय नहीं किया जा रहा है। तुम्हारे हांथों में अपरिमित शक्ति है। तुम सभी क्यों चुपचाप खड़े हो। तुम्हारी स्थिति उसी तरह से है जिस तरह सूर्य के समक्ष अंधकार। इसलिये देश के सपूतो, अकर्मण्यता को त्यागकर अपने–अपने कार्यों में संलग्न हो जाओ और अपनी बाहु शक्ति से भारत माता की यश पताका फहराओ।

राष्ट्रीय भावना-

यहाँ स्मरणीय है कि राष्ट्रीयता में वीरता हो सकती है, प्रायः होती है पर केवल वीरता का नाम राष्ट्रीयता नहीं होता। रामबाबू अग्रवाल की श्रेष्ठतम् कृति **'आलोक दर्शन'** में राष्ट्रीय भावनायें वीर रस के माध्यम से अभिव्यक्त हैं। राष्ट्रीय भावनाओं से ओत–प्रोत वीर पुरुष हँसकर मृत्यु का वरण कर लेते हैं तथा राष्ट्र के प्रति बलिदान को ही सर्वोपरि मानते हैं। उदाहरण दृष्टव्य है–

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, पृष्ठ 31

देश धर्म पर प्राण निदावर, किये बिना अहसान के।

उस शहीद की शुचि समाधि पर अर्पित फूल जहान के।।

पूत धरा का रक्षा में रत, सुख सुविधायें त्याग दीं।

राखी त्यागी प्यार भुलाया, त्यागी माँ की याद भी।।[1]

यहाँ कवि ने मातृभूमि पर प्राणों का बलिदान करने वाले शहीद की समाधि पर संसार के अमूल्य सुमनों का समर्पण वर्णित किया है। वे अमर शहीद, जो देश की रक्षार्थ माँ की याद, बहिन की राखी तथा पत्नी का प्यार तक विस्मृत कर देते हैं, कितने महान होते हैं ?

प्रकृति वर्णन-

रामबाबू अग्रवाल के काव्य में प्रकृति का अनूठा वर्णन उनके प्रकृति प्रेम को दर्शाता है। ऋतुराज– संदेश के रूप में किया गया प्रकृति वर्णन आकर्षक तो है ही, मन में सजीव चित्र भी उपस्थित कर देता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

मंजरी महक उठीं, अमवाँ के गाँव में।

मेंहदी रची सजी, धरती के पाँव में।।

केसर की बगिया में

टेसू की पगिया में

लतिका की अँगिया में

किसलय में उपवन में फैले सुरंग लो।

सोये हर सरि तट को कल–कल तरंग दो।।[2]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने बसंत ऋतु की पृष्ठभूमि में प्राकृतिक उपमानों का सजीव चित्रण करके ऋतुराज के संदेश का आभास कराया है। मोतियों में सूर्य के समान प्रकाश है। मंजरी पूर्ण विकसित होने पर महकने लगी है। आम में बौर आ चुकी है। मेंहदी की शोभा धरती के चरणों

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, पृष्ठ 15

2– उपरिवत् – पृष्ठ 32

में विद्यमान है। कवि प्रकृति–चित्रण में पूर्ण परिपक्व सा दिखायी देता है। वह अपनी काव्य कृति में प्रकृति की अनुपम छटा को बिखेर देता है।

उपदेशात्मक विचार-

आपके काव्य में यत्र–तत्र उपदेश परक विचार भी दृष्टिगत होते हैं। आपने 'सावधान युवक' कविता के माध्यम से समाज की युवा पीढ़ी को उपदेश देकर उत्साहित किया है। कवि ऊँचे पदों पर विराजमान मठाधीशों के विषय में चिंतित सा दिखायी देता है। वह शिखरों के माध्यम से उच्च पदाधिकारियों की ओर संकेत करता हुआ कहता है–

सावधान हो भटके राही उत्कर्षों की राह निहारो।
शिखर धरा में धँसते जाते, दायित्वों की चाह सवाँरो।।
युवक चेतना के प्रतीक तुम शक्ति सम्पदा के स्वामी।
सही दिशा में पैर बढ़ाना, बन विवेक के अनुगामी।।
द्विग भ्रम से पथ भ्रष्ट न होकर, अनियंत्रित उत्साह निवारो।
सावधान हो भटके राही उत्कर्षों की राह निहारो।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि अपनी मानसिक वेदना की छटपटाहट से व्याकुल होकर समाज को चेतना प्रदान करता है तथा सामाजिक शक्ति संबर्द्धन की प्रेरणा देता है। कवि अपने उद्‌बोधन से अनियंत्रित शासन व्यवस्था को सुनियंत्रित करना चाहता है।

रस एवं अलंकार-

वीर रस-

तिनका रोक सकेगा कैसे वेग बढ़े तूफ़ान का।
सोया यौवन जाग उठा अब तो हिन्दुस्तान का।।
वह देखो चेतक पर राणा तलवारों की छाप में।
वीर व्रती आर्यों का शोणित दौड़ रहा हर गाँव में।।[2]

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, पृष्ठ 63

2– उपरिवत् – पृष्ठ 17

अनुप्रास अलंकार-

शुचि, शील, सुजान सुबुद्धि मिले।
बरसें मुख बैन सुधा रस से।।[1]

उपमा अलंकार-

पक्षी सा हर प्राणी बोला।
मलय पवन सा प्रमुदित ड़ोला।।[2]

5- भगीरथसिंह 'तकदीर'

भगीरथसिंह **'तकदीर' को हिन्दी का ही नहीं वरन् उर्दू, अंग्रेजी, बंगला तथा मराठी का भी सम्यक् ज्ञान था। ब्रजमाधुरी, बुन्देलखण्डी तथा सरयूपारी के तो आप मर्मज्ञ ही थे।**[3] आपकी चमत्कारिक कृतियाँ मिलबो न भूलियो, दुर्योधन, युगावर्त, पुरू, संयोग तथा अंग–लक्षण प्रबोधिनी हैं। भक्ति–भावना उनमें कूट–कूटकर भरी है। इनके वाक्यों में कहीं उनका ह्रदय दुसह वियोग की वेदना से तड़प उठा है, तो कहीं प्रभास तीर्थ में राधा–कृष्ण के मिलन से प्रफुल्लित हो उठा है। इनके काव्य में भक्ति तथा सामाजिक सद्भावनाओं के मणिकांचन योग के कारण एक विशिष्ट दीप्ति प्रज्ज्वलित होती है। आप अपनी प्रवाहपूर्ण शैली तथा मार्मिक काव्य–सृजन के कारण काव्य–क्षेत्र में अपना अद्वितीय स्थान रखते हैं। भगीरथ सिंह 'तकदीर' की कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन निम्न बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत है–

5-1 मिलबो न भूलियो

मातृभूमि से प्रेम-

कवि को मातृभूमि से अगाध प्रेम है। कृष्ण द्वारिका में अपार वैभव के बीच थे, किन्तु उनके मन में ब्रज घुमड़ता रहता था। मातृभूमि स्मरण के उन क्षणों को निम्नवत् उकेरा गया है–

1– आलोक दर्शन– रामबाबू अग्रवाल, पृष्ठ 10

2– उपरिवत्, पृष्ठ 24

3– भूमिका–मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर'

वंशी बट छांह की करीरन के कुंजन की,

गैयन की गोरस की, दधि की दिवारी की।

दान की बसंतन की, होरी की धमारन की,

आई सुधि घालन, अचूक पिचकारी की।

झूलन हिंडोरन की, सावन मलारन की,

रास–रस–रूठन की कीरति कुमारी की।[1]

उपर्युक्त छन्द में स्मृतियों से कृष्ण की मानसिक दशा विचित्र हो जाती है। कृष्ण रुक्मिणी से अपनी मन की व्यथा कहते हैं, कि सब कुछ है, फिर भी वट की छाया, करील–कुंजों की सघनता, गायों का गोरस, दधि, होली उत्सव, झूला, रास तथा कीरति कुमारी के बिना मन खिन्न रहता है। तात्पर्य यह है कि कवि का मन मातृभूमि में अनुरक्त है। वह **'मिलबो न भूलियो'** में मातृभूमि के प्रति अगाध प्रेम के आदर्श को प्रस्तुत करता है।

भक्ति निरूपण-

'मिलबो न भूलियो' में महाभारत, भागवत, सूरसागर के समान राधा–कृष्ण की भक्ति का निरूपण किया गया है। प्रेम ही ईश्वर है, प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही परमपिता के सन्निकट पहुंच सकने का एक मात्र साधन है।[2] इस सिद्धान्त के अनुगामी भगीरथ सिंह **'तकदीर'** राधा–कृष्ण की प्रेम मयी भक्ति में अनुरक्त, कृष्णनाम की महिमा एवं अपने आराध्य के सृष्टि व्यापी प्रभाव को इन शब्दों में स्पष्ट करते हैं–

जय–जय जीवन, जयति जग रूप जय,

जय जय जाह्नवी के जन्म दिवैया जय।

जयति अनंत सिर जयति अनंत बाहु,

जयति अनंत पाद प्रकृति नचैया जय।

1– मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 26

2– रत्नेश शतक– प्राक्कथन, पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'

जय जय श्यामा कास, जयति निनाद तत्व;

जय घनश्याम वर बेनु के बजैया जय।

अंतर में अन्त में औ आंखिन में दृष्टि रूप;

जयति जयति कृष्ण कुँवर कन्हैया जय।।[1]

इस छन्द में कवि श्री कृष्ण की जय–जयकार बोलता है। उनके विविध रूपों, अनन्त कार्यों का गुणगान करता हुआ भक्ति रस में सराबोर है। परम शक्ति–स्वरूपा राधा के चरणों में एक निष्ठ होकर समर्पण भाव व्यक्त करते हुये कवि अपनी आराध्या का प्रशस्ति गायन करता है तथा अपनी आस्था को अभिव्यक्त करता है। उदाहरण प्रस्तुत है–

विश्वाधारा, विश्वात्मिका, विश्वाश्रया, विश्वमाया,

सिन्धुजा, सहस्र, सिन्धु–स्रोतसि अमाधिका।

श्याम पुतरीन के समक्ष, श्यामा श्याम बरा,

शत–शत संतन की सुरति उपाधिका।

गोपी, गोप, गाय सचराचर ब्रज महीके,

जीवन की विश्व में अखण्ड साध साधिका।

भानुजा की भक्ति वृष–भानु की महानुरक्ति,

जय बरसाने में समूर्ति–मान राधिका।[2]

अपनी परम् वन्दनीया राधा में जिन–जिन गुणों का समुच्चय कवि देखता है, वह एक–एक कर सभी का वर्णन करता है।

विरह वर्णन-

भगीरथ सिंह **'तकदीर'** का विशुद्ध श्रृंगार वर्णन अद्वितीय एवं अनूठा है। उनका संयोग वर्णन जितना चित्ताकर्षक है, वियोग वर्णन उतना ही मर्म स्पर्शी है। नायिका नायक के विरह में खिन्न मन और चिन्तित है। नायिका कहती है कि जिस दिन कृष्ण ब्रज से मथुरा गये, उनके रथ की

1– मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 19

2– उपरिवत् – पृष्ठ 19

उड़ती धूल बहुत दूर तक ब्रजवासी देखते रहे। उन्हें पहुंचाने वाले भी लौट आये, किन्तु कृष्ण के लौटने की कोई बात ही न रही। इसी से नायिका विरहाग्नि से पीड़ित होकर कहती है–

जा दिन सों सिधारे श्याम मथुरा कों,
दूर लौं उड़त धूर रथ की दिखात रही।
वे तो लौट आये जो गये ते पहुँचावन कों,
पै उन्हें लियावन की बस की न बात रही।
कलपत बीते दिन कलप समान ब्रज,
गिन–गिन तारे रात युग सी सिरात रही।
रात कटीं ज्यों–ज्यों प्रात छेड़त पथिक कटे,
कहत सनेश सौ सौ जीभ न थकात रही।[1]

उपर्युक्त छन्द में विरहिणी के मनोभावों का कितना सटीक वर्णन है, देखते ही बनता है। अनुभूति की गहराई भगीरथसिंह **'तकदीर'** के काव्य को उत्कृष्ट्ता प्रदान करती है।

संयोग वर्णन-

कवि यदि विरह के पक्ष का मनोहारी वर्णन करने में दक्ष है तो संयोग में भी कम नहीं है। राधा–कृष्ण के दीर्घ मिलन से एक–दूसरे के अंगों पर पड़े प्रभाव का वर्णन **'तकदीर'** जी भावुक होकर करते हैं। राधा, कृष्ण को देखती है, कृष्ण, राधा को देखते हैं, दोनों एक–दूसरे को बाहुपाश में भेंटते हैं–

कृष्ण देखीं राधे, राधिका ने पूर्व ब्रह्म देख्यौ,
संगम समागम भै चारौ अखियांन को।
आसन वसन त्याग दौक दामिनी सी दौर,
लौट लपटानि घनश्याम घन प्रान को।

1– मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 21

भुज भर भेंटे कटि–कटि सों ह्रदे सों ह्रदें,

मिल अधरन रस फट्यो मुस्कान कौ।

मूँदे दृग दोउन, वधिर भये दोऊ मूक,

दोउ भए जड़ से विसार ध्यान कान को।[1]

'तकदीर' ने राधा के अप्रतिम सौन्दर्य का मनोहारी वर्णन किया है। राधिका की मुस्कान से दशों दिशायें बिजली के समान देदीप्यमान हो जाती हैं। राधिका के रुख को देखकर मेघ बरस जाते हैं। राधा के रूप–सौन्दर्य से प्रभावित होकर प्राकृतिक वस्तुयें संचालित होती हैं।

जौन राधिका के मुस्कात कौंधें दशों दिशा,

जौन राधिका को रुख देख मेघ बरसैं।

तौन विश्व प्रेमिका के ब्रह्म–मय दीप्यौ विश्व,

कृष्ण–कृष्ण कहैं लागी सृष्टि चराचर सैं।

कृष्णमय ह्वैगो ब्रज ब्रजमय ह्वैगे कृष्ण,

द्वारिका लौं जाय वन चित्र लगे दर सैं।

समुझ न पावै पहचान मैं न आवै कछु,

दीख परैं पंजर पलक जब परसैं।[2]

कवि ने उपर्युक्त छन्द में राधा के रूप सौन्दर्य से प्रभावित होकर प्राकृतिक वस्तुओं का गतिशील होना दिखाया है।

लोकाचार-

कवि लोकाचार में विश्वास रखता है। वह अपने काव्य में नायिका द्वारा लोकाचार का पूरा निर्वाह कराता है। नायिका को अपने प्रियतम के मिलन से पहले शुभ शकुन होते हैं, जिससे नायिका को आनन्द की अनुभूति होती है। उसी लोकाचार को कवि निम्न प्रकार प्रकट करता है–

1– मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर', 53

2– उपरिवत्, पृष्ठ 24

ब्रज नायिका को उर औचक उचक आयौ,

भरत उसाँस अनायास आँगी दर कीं।

पालतू पखेरुनी–सीं बड़ी–बड़ी कजरारीं,

पलक– पिंजरिया मैं बायीं आँख फरकीं।

फरक फरक उठी दूबरी विशाल बाँह,

हुमस मसीली भई चूरीं कस करकीं।

सुधि ही करत अनुराग जाग्यौ कामिनी को,

उठत अचानक ही नीवीं गाँठ सरकीं।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने लोकाचार की परम्परा को सुरक्षित किया है। मानव समाज में कार्य के सम्पादन होने से पूर्व शुभ शकुन होना भारतीय संस्कृति के अनुकूल है। राधा को कृष्ण के महामिलन से पूर्व शुभ शकुन होते हैं। जैसे– भुजा फड़कना तथा चूड़ीं करकना आदि।

5-2 वय बोधिनी

'तकदीर' जी ने एक छोटी सी रचना **'वय–बोधिनी'** में शरीर के बदलते स्वरूप का वर्णन किया है। कवि कहता है कि वृद्धावस्था का भय किशोरावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक लगा ही रहता है, जिसके निवारण हेतु सब कुछ करता हुआ देह स्थित प्राणी विवश होकर समय पर वृद्ध होने लगता है, तब बुद्धि उसे पूर्व कर्माभ्यासों से मोड़ लेने के लिये प्रेरित करती है। उदाहरण प्रस्तुत है–

प्रज्ञा आवतु बुढापौ समुझइ बार–बार कहौ,

आगे मग समुझ समुझ पग धारियो।

करै जो ढठाली बाल प्रौढ़न की लीजौ सह,

मान कै बुराई कटु बैन न उचारियो।

1– मिलबो न भूलियो– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 36

धारियो क्षमा पै कहूँ धीरज विसारियो न,

आवै सर संकट तौ हिम्मत न हारियो।

सम वैश वारिन सो हँस बोल लीजौ काऊ,

नवल नवोदन पै दीठ मत डारियो।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने बताया है कि वृद्धावस्था आने पर मानव को गहन–विचार पूर्वक किसी कार्य को सम्पन्न करना चाहिये। कवि–कथन का तात्पर्य है कि नवयुवकों से होने वाले हास–परिहास को चुपचाप सह लेना बुद्धिमत्ता का परिचय होगा। शरीर स्थित जीव, बुद्धि के आश्रित होता हुआ आगे को बढ़ता है। बुद्धि प्राकृतिक शिक्षिका बनती है–

आओ लाल चलबो सिखावे तुम्हें पायन सों,

गिर न परौ कहूँ अँगुरिया पकर लेहु।

ठुमुक–ठुमुक नैकु नैकु पग धर लेहु,

हुमुक–हुमुक लाम्बी–लाम्बी डग भर लेहु।

नाप डारौ आँगन औ नाप डारौ पौर पूरी,

बाहर निकस नाप द्वार और डगर लेहु।

आँजें नीले नैनन में बिम्बित कै नीलाकाश,

नापवे को वामन ह्वै बढ़ कै सम्हर लेहु।[2]

कवि ने प्रकृति को माँ का पद दिया है। वह मानव के विकास में प्रकृति को सहायक बतलाता है। कवि कहता है कि प्रकृति शिशु को उँगली पकड़कर चलाने का प्रयास कर रही है। जिस तरह से जन्म देने वाली माँ अपने शिशु को सामाजिकता का बोध कराती है, उसी तरह से प्रकृति भी शिशु का पोषण करने में सहायता करती है। कवि इस क्रम में अपने काव्य में चमत्कार प्रदर्शन का उपक्रम करता है–

1– वय बोधिनी– भगीरथसिंह 'तकदीर' पृष्ठ 37

2– उपरिवत् – पृष्ठ 27

गिन लेहु एक, द्वय, तीन, चार, पाँच, षट।
सात, आठ, नव, दश, रट औ परख लेहु।।
ब्रह्म जीवमाया काल वेद महाभूत शास्त्र।
1 2 3 4 5 6
ऋषि वसु रस पुनि इन्द्रहिं परख लेहु।।
7 8 9
दश पै दशमलव, सून एक न लग।
बीसहुं अंगुरियन गिन बीस नख लेहु।।
स्वर श्वांस ही है वर्ण व्यंजन विभेद पढ़;
व्याकरण पिंगल अलंकरण लख लेहु।।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि एक से दश तक अंकों के महत्व का प्रदर्शन करते हुये कहता है कि –ब्रह्म एक ही है। जीव और माया दो का स्थान धारण करते हैं, काल को तीन, वेद चार, महाभूत पाँच, शास्त्र छैः, ऋषि सात, वसु आठ, रस नौ होते हैं। कवि ने अपने काव्य में गणितीय पद्धति के माध्यम से चमत्कार उत्पन्न किया है।

5-3 अंग लक्षण प्रबोधिनी

कवि भगीरथसिंह **'तकदीर'** ने अंग–लक्षण प्रबोधिनी में नारी एवं पुरुष के शुभ एवं अशुभ लक्षणों का वर्णन किया है। कवि कहता है कि पुरुष हो चाहे स्त्री युवावस्था में किसी अंग में कमी अथवा अधिकता का होना अशुभ सूचक है–

नारी हो अथवा पुरुष, न्यून अंग अति अंग।
इनकी जान विचित्र गति, कबहुँन करिये संग।।[2]

1– वय बोधिनी– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 27

2– अंग लक्षण प्रबोधिनी– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 8

उपर्युक्त छन्द में कवि कहता है कि अंगों की न्यूनता तथा अधिकता वाले पुरुष–स्त्री के संग से बचना चाहिये। नहीं तो ये हानि पहुँचाते हैं। कवि साहसी तथा उच्च वक्ष वाले पुरुष के लक्षण निम्न दोहे में स्पष्ट करता है–

बल पौरुष, साहस भरे, ऊँचे वक्ष दिखात।

दया, प्रेम अरु धर्म तै जनु पायें छपटात।।[1]

इस छन्द में कवि उच्च वक्ष वाले को दया, प्रेम, धर्म से पूर्ण बतलाता है। उम्र को स्पष्ट बता देने वाले शरीर के लक्षण भी कवि निम्न दोहे में स्पष्ट करता है–

वय न छिपाये छिप सकत, केश श्याम अरु सेत।

स्नायु, वर्ण, दृग ज्योति, त्वक आयु सत्य कह देत।।[2]

इस छन्द में कवि उम्र को स्पष्ट करने वाले कारक केशों का काला और सफेद होना, शरीर में सिकुड़न, आँखों की रोशनी कम हो जाना बतलाता है। नारी की सुन्दरता तथा उसके शुभ लक्षणों को कवि ने बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है–

सलज नयन, चितवन सरल, मन्द मधुर मुस्कान।

को न लहत सुख दरस कर, सुभ मुख इन्दु समान।।[3]

लज्जाशील नेत्र, सरल चितवन, मधुर मुस्कान से पूर्ण नारी के दर्शन से सुख होता है तथा ऐसी सुन्दर स्त्री का दर्शन कवि शुभ मानता है।

5-4 दुर्योधन

भगीरथसिंह **'तकदीर'** का **'दुर्योधन'** पौराणिक खण्डकाव्य महाभारत के कथानक पर आधारित है, इसमें कवि ने वात्सल्य भाव को ही

1– अंग लक्षण प्रबोधिनी– भगीरथसिंह 'तकदीर', पृष्ठ 8

2– उपरिवत्, पृष्ठ 8

3– उपरिवत्, पृष्ठ 8

सजीव ढंग से प्रस्तुत किया है। माता गाँधारी अपने पतिव्रत के कारण सदैव अपने नेत्रों में पट्टी चढ़ाये रहती हैं, लेकिन पुत्र के युद्ध में जाने से पहले उसके दर्शन कर लेने के लिये वात्सल्य भाव उमड़ पड़ता है–

पुनि माँ गान्धारी बोल उठीं,

आ सुत! बलि जाऊँ बार–बार।

जीवन में पहली बार आज,

आ एक बार तो लूँ निहार।[1]

उपर्युक्त छन्द में कवि ने वात्सल्य रस को प्रस्तुत करके समाज में वात्सल्य भाव का आदर्श उजागर किया। गाँधारी ने जीवन पर्यन्त पतिव्रत को निभाया, जिसे कवि ने अपने काव्य में इस प्रकार निबद्ध किया है–

जब से आई हूँ यहाँ ब्याह,

मैंने जाना पति दृग विहीन।

उस दिन से पट्टी बाँध रहीं,

फिर अब तक खोल सकी कभी न।[2]

इस छन्द में कवि ने पातिव्रत धर्म का निर्वाह करना स्पष्ट किया है। इस कथानक को काव्यबद्ध करके कवि ने नारियों को भारतीय संस्कृति से अवगत कराने की चेष्टा की है, जो समाज के लिये आदर्श सिद्ध हुयी। कवि ने पुत्र को माता के समक्ष शिशु बताया, पुत्र चाहे जितनी उम्र का हो लेकिन माँ के सामने तो शिशु ही होता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

दृग भर देखा फिर बोल उठीं,

रे भोले तू भोला ही है।

तेरा यौवन तेरा ही था,

मुझको तो तू छौना ही है।[3]

1– दुर्योधन– भगीरथसिंह 'तकदीर' पृष्ठ 22

2– उपरिवत् –पृष्ठ 22

3– उपरिवत् –पृष्ठ 23

उपर्युक्त छन्द में कवि माँ और पुत्र के मध्य मर्यादा के आवरण को दूर करने की बात कहता है। शिशु आजीवन माँ के लिये शिशु ही रहता है। इस संदर्भ को प्रस्तुत कर कवि ने समाज में माँ और पुत्र के पावन सम्बन्धों को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

6- डॉ. रामस्वरूप खरे

डॉ. रामस्वरूप खरे जनपदीय साहित्यकारों में एक वरिष्ठ हस्ताक्षर हैं। आप कुशल अध्यापक, कर्मठ समाज सेवी तथा गम्भीर साहित्यिक अभिरुचि के व्यक्ति हैं। डॉ. खरे माँ वीणा–पाणि के ऐसे वरद् पुत्र हैं, जिनकी लेखनी ने साहित्य की विभिन्न विधाओं पर चलकर साहित्य जगत में एक आदर्श प्रतिमान उपस्थित किया है। कवि स्वरूप हिन्दी साहित्यजगत के सर्वतोमुखी प्रतिभा सम्पन्न युग कवि है। आपका भावुक हृदय राष्ट्रसेवा के लिये सदैव लालायित रहता है। आपने कई साहित्यिक संस्थाओं में संगठनात्मक भूमिका का निर्वाह किया है। आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में भी आप अग्रगण्य रहे।

कवि स्वरूप जी का मृदुल व्यवहार, निश्छल प्रेम तथा अंतरंग स्नेह सम्पर्क में आने वाले को अपनत्व भाव से परिपूरित कर देता है। कवि की लेखनी से गद्य और पद्य समान रूपसे निःसृत हुये हैं। खण्डकाव्य एवं अनेक स्फुट रचनायें इनके पद्य भण्डार के अन्तर्गत हैं। निबन्ध, कहानी, संकलन, अनुवाद तथा विचार संग्रह आपकी गद्य रचनाओं में सम्मिलित हैं। कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन निम्नवत् प्रस्तुत है।

6-1 मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र

प्रस्तुत मुक्तक काव्य में शताधिक भाव–चित्रों को उकेरा गया है। इसमें श्रृंगारिक वृत्तियों का सूक्ष्म निदर्शन तो है ही साथ ही आदर्शोन्मुख यथार्थ की अभिव्यंजना भी है। आदर्श को अत्यधिक महत्व देते हुये कवि ने यथार्थ को भी अपना लक्ष्य निर्धारित किया है। रचना में कवि

डॉ. रामस्वरूप खरे ने संयोग–वियोग, राष्ट्रीयता तथा देश–प्रेम, वसुधैव कुटुम्बकम् आदि के भाव चित्रों को रूपायित किया है। कवि स्वरूपजी ने प्राचीन काव्य से लेकर छायावादी काव्य तक का प्रभाव अपनी इस कृति में समाहित किया है। उदाहरण दृष्टव्य है–

मुख पर मत चंचल अलकें बिखराओ।
नभ के चन्दा को यों मत शरमाओ।
भ्रमवश न कहीं वह राहु तुम्हें ग्रस ले–
आओ मेरी बाहों में छिप जाओ।।[1]

कवि स्वरूप प्रेम, सौन्दर्य, यौवन एवं मादकता को अनुपम काव्य कौशल के माध्यम से चित्रित करते हैं–

शोभा ही जिसके मृदु तन पर भार है।
यौवन की मदिरा का मधुर खुमार है।।
तोड़ो मत यह कली अभी अनजान है।
अन्तर में अनछुये प्यार का ज्वार है।।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने अपने जीवन में प्रेम पंथ की निराशा का वर्णन किया है। उसकी इन पंक्तियों में बिहारी के 'सूधे पाँव न धर परै, शोभा ही के भार' का प्रभाव परिलक्षित होता है। निराशा को प्राप्त कर कवि वेदना से छटपटाता सा प्रतीत होता है–

यह बेल प्रीति की सींच बढ़ा लेना।
अपने मनशिशु को खूब पढ़ा लेना।।
निकले जब तेरे पथ से यह अर्थी।
श्रद्धा के पावन फूल चढ़ा देना।।[3]

1– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, जनार्दन प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 45

2– मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र– डॉ. रामस्वरूप खरे, हिन्दी प्रचार सभा, मथुरा (उ.प्र.) पृष्ठ 12

3– उपरिवत् – पृष्ठ 21

कवि स्वरूप जी उपर्युक्त पंक्तियों के माध्यम से अपनी प्रेयसी को प्रेम के प्रति जागरूक कर रहे हैं। उनका हृदय अपनी प्रेयसी के प्रति इतना विभोर हो गया है कि वह उसका नाम स्मरण ही करता रहता है।

मुझे न इस दुनिया से कोई काम है।
मेरे अधरों पर बस तेरा नाम है।।
कितना ही बदनाम करले जगत।
किन्तु हमारी प्रीति, मीत! सरनाम है।।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि अपनी प्रेयसी के प्रति इतना आकर्षित है कि बाह्य जगत के रीति–रिवाज तथा मर्यादाओं का ध्यान ही नहीं रहता है। वह यहाँ तक कह देता है कि प्रेयसी के प्रति हमारी प्रीति सच्ची है, इसीलिये सरनाम है।

कवि स्वरूप जी के हृदय में बसुधैव कुटुम्बकम् की भावना बलवती होकर उन्हें राष्ट्रीय से अन्तर्राष्ट्रीय कवि बना देती है। उन्हें विश्व–प्रेम का भाव आत्म संतुष्टि प्रदान करता है। विश्व–प्रेम ही नर से नारायण बनाता है–

मन का भ्रम यदि सहज भाव से नर खो पाता।
और किसी की व्यथा, अश्रु अपना धो जाता।।
बन उठती सारी धरती परिवार एक शुभ–
इस जग का हर नर तब नारायण हो जाता।।[2]

कवि उपर्युक्त पंक्तियों में मानव से मन की भ्रामकता को त्यागने के लिये कहता है और दूसरे के साथ सहृदयता का भाव प्रदर्शित करने के लिये प्रेरित करता है। कवि सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होने के साथ साथ शिव–भक्ति में भी लीन दिखायी देता है–

1– मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र– डॉ. रामस्वरूप खरे, पृष्ठ 22

2– उपरिवत्, पृष्ठ 7

हँस–हँस करके अनगिन शूल उठाये हैं।

जग के पथ में अनगिन फूल बिछाये हैं।।

हमने बाँटी सतत् सुधा विषपान कर–

नीलकण्ठ बनकर त्रय शूल मिटाये हैं।।[1]

कवि उपर्युक्त पंक्तियों में परमार्थ का भाव स्पष्ट करता है। वह दूसरे की भलाई के लिये सतत् प्रयत्नशील दिखायी पड़ता है। कवि के कृतित्व से पूर्णतः स्पष्ट है कि वह परोपकारी, विश्वप्रेमी, प्रेम के प्रति आस्थावान तथा शिवोपासक है।

6-2 शतमन्यु

कवि स्वरूप जी के **'शतमन्यु'** खण्डकाव्य का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि कवि का हृदय मानव के अनैतिक, अमानवीय व्यवहार से त्रस्त है। वह अपने विचारों को केन्द्रित करके जीवन को आत्म त्याग, लघुत्व एवं निष्काम सेवा में सन्निहित करता है। जीवन की पूर्णता का उद्देश्य तब ही पूर्ण होता है, जब मनुष्य परार्थ में अपने प्राणों को न्यौछावर कर देता है। सच्चे सुख की अनुभूति त्याग में ही होती है। ठीक इसी प्रकार सच्ची शान्ति निष्काम सेवा में है–

यही है जागरूक का धर्म,

लड़े अन्याय अनय के साथ।

न्याय पर कर दे प्राणोत्सर्ग,

झुकाये कभी न अपना माथ।।[2]

उपर्युक्त पद्य में कवि ने न्याय के प्रति अपने प्राणों को न्यौछावर होने का आदर्श प्रस्तुत किया है। कवि स्वरूप जी कहते हैं कि मानव अपने आत्म विश्वास, त्याग की भावना से सम्पूर्ण विश्व में नवनिर्माण की धारा प्रवाहित कर सकता है–

1– मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र– डॉ. रामस्वरूप खरे, पृष्ठ 26

2– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 35

स्वयं कर सकता जन उद्धार,

स्वयं का, बन केवल चैतन्य।

अकेला ही उठ, चल मत देख–

आ रहे जन पीछे क्या अन्य।।[1]

कवि उपर्युक्त पंक्तियों में हनुमान के समान मानव को उसके बल, पौरुष का ध्यान दिलाता है। कवि के हृदय में एक अटल विश्वास विद्यमान है कि दुख के बिना सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। वह लोकोपकार करने वाले को कष्ट सहने की सलाह देता है–

लुटाता सौरभ वही प्रसून,

प्रथम जो खिलता काटों बीच।

वही दे पाता अभिनव ज्योति–

दीप जो हँसता तम के बीच।।[2]

कवि उपर्युक्त पद्य में मानव को कष्ट में भी प्रसन्न रहने की प्रेरणा प्रदान करता है, वह **'सुख–दुखे समे कृत्वा'** का भाव जागृत करता है। शतमन्यु के आत्म बलिदान करने पर वर्षा हुयी। सारी बसुन्धरा अपने प्राकृतिक आभूषणों से सुसज्जित हो गयी। खेतों में फसलों की मखमली चादर बिछ गयी। कवि का यह चित्रण मन को अत्यधिक लुभाने वाला है। यहाँ मानवीय करण का प्रयोग दृष्टिगत है–

धरा – बाला ने ओढ़ा चीर,

स्नान कर, सुलझा उलझे केश।

चली प्रमुदित मिलनातुर आज–

धार करके अपना वर – वेश।।[3]

1– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 36

2– शतमन्यु– डॉ. रामस्वरूप खरे, हिन्दीप्रचार सभा, सदर मथुरा, उ.प्र., पृष्ठ 28

3– उपरिवत्, पृष्ठ 33

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में कवि ने पृथ्वी को प्राकृतिक उपमानों से अलंकृत किया है। वह प्रेम की आतुरता को बड़े ही मानवीय ढंग से प्रस्तुत करता है।

6-3 ज्योति किरण

ज्योति किरण, नव सर्जन, नवीन इतिहास एवं नया विश्वास से पूर्ण काव्य है। इसमें कवि ने नवीन सृजनात्मक विचार प्रस्तुत करते हुये उपदेशात्मक संदेश को वाणी प्रदान की है–

सृजन हो नया, दृष्टि हो नयी,
लगन हो नई, नया विश्वास।
हृदय में ले अदम्य उत्साह,
रचें फिर से नूतन इतिहास।।[1]

कवि उपर्युक्त पद्य में नये दृष्टिकोंण से मानव में नवीन मानवीय मूल्यों को रूपायित करता है। वह समाज को अदम्य उत्साह लेकर नवीन कार्यों के लिये प्रेरित करता है। कवि के काव्य में ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह प्राचीन आर्यों की मंगल–कामना से उत्प्रेरित हो। वह सम्पूर्ण जगत की मंगल कामना करता हुआ कहता है–

सबका हो कल्याण,
सुखी हों सभी निरोगी हों।
पर–सेवा रत रहें सतत्,
सद्गुणी – सुयोगी हों,
हमारे पथ ज्योतिर्मय हों।
भावनायें मंगलमय हों।।[2]

दानवता पर मानवता, हिंसा पर अहिंसा, पाप पर पुण्य एवं अशान्ति पर शान्ति की विजय की कामना सम्पूर्ण कृति में प्राप्त है।[3] कवि के काव्य में कर्मयोग की प्रधानता रूपायित होती है।–

1– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ.दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 20

2– उपरिवत् – पृष्ठ 21

3– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ.दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 24

करो तुम मानवता का त्राण और नैतिकता का उत्थान।

सिखाओ कर्मयोग का ज्ञान, बढ़ाओ ऋषियों की सन्तान।।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि श्री मद्भगवद् गीता के कर्मयोग से प्रभावित होता सा प्रतीत होता है। वह मानव जाति का रक्षण करने हेतु नैतिकता का उत्थान करना चाहता है। नैतिकता का उत्थान कर्मयोग से ही सम्भव है। कवि की चेतना गाँधीजी, विनोवा भावे के विचारों से सम्पृक्त है–

करो कवि शत् शत् उन्हें प्रणाम

प्यासों को दे नीर,

क्षुधित को पवन, अन्न प्रासाद।

वस्त्रहीन को वस्त्र,

भूमिहीनों को भू प्रसाद।।

ग ग ग

दीप जला करता आलोकित,

पंथ जो होता तम से पूर्ण।

बहा करती सरिता अनवरत्,

धरा की रहे न प्यास अपूर्ण।।

करें सेवा जो हो निष्काम,

करो कवि शत् शत् उन्हें प्रणाम।।[2]

कवि उपर्युक्त पंक्तियों में संसार की भलाई में निष्काम भाव से लगे उन सभी सज्जनों का अभिनन्दन करता हुआ आभार प्रदर्शित करता है। कवि यहाँ **'कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्'** का भाव व्यक्त करता है। यहाँ कवि दीप, पंथ, सरिता तथा धरा के साथ सज्जनों के परोपकार को भी रूपायित करता है। कवि स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व, राष्ट्रीयता, एकता, अखण्डता, कर्मठता एवं क्षम इत्यादि की आधुनिकता को अपनी ओर खींचने

1– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ.दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 24

2– उपरिवत् – पृष्ठ 25

का प्रयास करता है। कथ्य में प्रसाद गुणमयी शैली के साथ–साथ ओज की भी झलक कहीं–कहीं चमत्कृत होती है। आपके गीत में लयात्मकता स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है।

6-5 अर्चना

अर्चना कवि का विशिष्ट गीति–काव्य है। कवि इस कृति में परम् तत्व से साक्षात्कार के लिये साधनारत है। यह कृति 24 गीतों का संग्रह है। सम्पूर्ण गीतों में वह परम् प्रभु को प्राप्त करने के लिये साधना–अर्चना में लीन रहता है। कवि काव्य के प्रारम्भ में कबीर की साखी में वर्णित 'कबिरा हरि के रूठते गुरू की सरनै जाय' के भाव से ओत–प्रोत होकर वह अपने गुरू से भव–सागर पार करने की प्रार्थना करता है–

श्री गुरु–चरण छोड़ कित जाऊँ?

भवसागर में डूबत नैया, को जेहिं आज बुलाऊँ।।

बाधा जन्म–मरण की छूटै, कृपा दृष्टि जो पाऊँ।

X X X

यश कीरत धन धाम बड़ाई चाह नहीं कछु पाऊँ।

होकर लीन तुम्हीं में गुरूवर, अब की तर जाऊँ।।[1]

उपर्युक्त पद में कवि गुरू से भवसागर पार कराने की याचना करता है। वह गुरू से कृपादृष्टि करने के लिये कह रहा है ताकि उसका संसार रूपी बाजार से जन्म–मरण का क्रय–विक्रय समाप्त हो जाये। कवि गुरू की स्तुति की प्रत्येक पंक्ति को ऐसे वर्ण से प्रारम्भ करता है कि समग्र कविता में प्रथम वर्णों को मिलाने से **'श्री भवानी शंकर जी की जय'** वाक्य बन जाता है।[2] डॉ. रामकुमार वर्मा के **'नश्वर स्वर से कैसे गाऊँ आज अनश्वर गीत'** की प्रतिध्वनि स्वरूप जी की कृति **'अर्चना'** के प्रथम गीत में दृष्टिगत होती है–

1– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ.दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 14

2– स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन– डॉ.दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, पृष्ठ 13

क्षण भंगुर सुमनों से कैसे–

अमर करूँ तेरा शुभ अर्चन।

मृण्मय नयन थके पथराये–

कैसे करें तुम्हारा दर्शन।।[1]

कवि उपर्युक्त पंक्तियों में गुरू के प्रति इतना श्रृद्धावान है कि वह गुरू के समक्ष सांसारिक वस्तुओं को क्षंण भंगुर बतलाता है। कवि के काव्य के कबीर की साखी में '**रामनाम के पट तरे देवे कों कछु नाहिं, क्या ले गुरू संतोषिए होंस रही मनमाहिं।**' पंक्ति का भाव दृष्टिगोचर होता है। कवि अद्वैतवाद का पक्षधर प्रतीत होता है–

प्यास बुझाने मैं जीवन की–

दौड़ा बारम्बार।

पर मरू–भू की मृगतृष्णा–

छल जाती थी हर बार।।[2]

अपने काव्य में कवि एकेश्वरवाद में विश्वास रखने का आदर्श प्रस्तुत करता है। वह मनुष्य को ईश्वर प्राप्ति के लिये इधर उधर न भटकने की बजाय आत्मलीन होने की सलाह देता है। कवि का संकेत मनुष्य के ह्रदय में विद्यमान उन दो साधनों की ओर है, जो परमात्मा से आत्मा का मिलन करवाते हैं। वे दो साधन–श्रृद्धा और प्रेम है। उदाहरण दृष्टव्य है–

निराकार ही जब बन जाये, श्रृद्धा पर साकार सुपरिचित।

उपर्युक्त पंक्ति में कवि का भाव है कि श्रृद्धा से निराकार साकार हो उठता है। श्रृद्धा ही मनुष्य को ईश्वर बना देती है। उदाहरण प्रस्तुत है–

श्रद्धा वही अटल जो करदे, नर को ही नारायण।[3]

1– अर्चना– डॉ. रामस्वरूप खरे, पृष्ठ 1

2– उपरिवत् – पृष्ठ 8

3– उपरिवत् – पृष्ठ 19

यहाँ कवि अटल ध्रुव की ओर संकेत करता हुआ कहता है कि श्रृद्धा में ही ऐसा स्थायित्व है जो मानव को ईश्वर बना सकती है। श्रृद्धा और प्रेम का जब चरमोत्कर्ष हो जाता है तो परम तत्व की प्राप्ति हो जाती है। कवि मानवीय वेदना को वाणी प्रदान करने के लिये प्रयासरत रहता है, क्योंकि उसका हृदय– कोष रिक्त है। प्रथम पुरुष का आश्रय ग्रहण कर लेने पर भी वह व्यथा–वेदना को विश्वसनीय बऩाने में असफल ही रहता है–

जल–जल कर ही मेरे मन की,
जलन मिटी है और मिटेगी।
झुका दिया यदि भाल कहीं तो,
प्रतिमा ही भगवान बनेगी।[1]

उक्त पक्तियों में कवि ईश्वर के प्रति पूर्ण आस्थावान दिखायी पड़ता है। ईश्वर को वह दयालु, भक्त वत्सल तथा दीनबन्धु आदि पर्यायों से विभूषित करता है। कवि का भाव है कि प्रभु के सामने नतमस्तक होने पर प्रतिमा में भी साक्षात् ईश्वर दर्शन हो सकता है। कवि की कृति में अनुभूति की व्यंजना तो है ही, साथ ही उपदेश वृत्ति भी परिलक्षित होती है। उद्धरण के लिये निम्न पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

थक जायेगी डगर इक दिन,
गति में यदि आये न शिथिलता।
मिल जायेगी शान्ति सुनिश्चित,
अधरों पर आये न विकलता।[2]

उक्त पंक्तियाँ संकल्प की दृढ़ता एवं गति की निरन्तरता का भाव समेटे हुये हैं। कवि अपने उद्बोधन से निराशा में भी आशा का भाव–संचार करता है। चेष्टा का सातत्य व्यंजित करता हुआ कवि प्रेरणा श्रोत बनकर पाठकों को प्रोत्साहित करता है और उनके सुसुप्त धैर्य को अपनी प्रेरणादायी वाणी से जागृत कर उन्हें चेतना प्रदान करता है।

1– अर्चना– डॉ. रामस्वरूप खरे, पृष्ठ 29

2– उपरिवत् – पृष्ठ 30

उपर्युक्त कृतियों के अतिरिक्त डॉ. रामस्वरूप खरे की अन्य साहित्यिक उपलब्धियाँ तथा स्फुट प्रकाशन हिन्दी साहित्य जगत के चिन्तनशील, मनीषी अध्येताओं के ज्ञान–भंडार को क्रमशः बढ़ाते रहे हैं। इन रचनाओं में **'हिन्दी भाषा का परिचयात्मक ज्ञान' 'भाषा विज्ञान', 'संध्या हो गई'** तथा **'चिन्तन के मोती'** जैसी उत्कृष्ट गद्य रचनायें एवं समीक्षाग्रंथ हैं। **'पूजा के फूल', 'काव्य दर्पण', 'गीता पद्यानुवाद'** तथा **'नये युग का अभिनव निर्माण'** जैसी श्रेष्ठ पद्य रचनायें जनपद जालौन की साहित्य–सर्जना में विशेष उल्लेखनीय हैं। डॉ. खरे की समस्त कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन एक पृथक शोध का विषय है।

7- ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग'

साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है। कवि अपने समय की सामाजिक परिस्थितियों, घटनाओं एवं प्रभावों का यथातथ्य वर्णन प्रस्तुत करता है। साहित्यकार अपनी रचनाओं में अपनी अनुभूतियों को सक्षम अभिव्यक्ति प्रदान करता है तथा सामाजिक सरोकारों से सम्बद्ध घटनाओं एवं स्थितियों का चित्रण भी करता है। ओमप्रकाश चतुर्वेदी **'पराग'** ने अपनी रचनाओं में ह्रदय के भावों, संवेदनाओं, आशाओं, आशंकाओं, आह्लादों और अवसादों को स्वर दिया है। कवि ने परानुभूतियों को आत्मसात् करके तथा स्वानुभूतियों का अवलम्ब लेकर बहुत कुछ कहने का प्रयास किया है। 'पराग' जी एक प्रतिभावान मनीषी की तरह अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के प्रति गहराई के साथ प्रतिबद्ध रहते हैं। आप काव्य–सृजन की उत्कृष्ट परम्परा में संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के गहरे अर्थ व्यंजित करते हुये गीत परम्परा में अनवरत् विकासशील रहे हैं। **'पराग'** जी अपने समय की सामाजिक चेतना के प्रतिभावान कलाकार हैं।

कविवर ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' की साहित्यिक कृतियों का तटस्थ मूल्यांकन निम्नतः प्रस्तुत है–

7-1 अनकहा ही रह गया

कविवर **'पराग'** अपनी काव्य कृति **'अनकहा ही रह गया'** के माध्यम से समाज को नयी दिशा देने के लिये प्रयासरत दिखायी पड़ते हैं। वह समाज में हो रहे भ्रष्टाचार से आक्रान्त हैं। कवि उन सभी दुराचारों को रेखांकित करता है–

नाम लेकर धर्म का संग्राम होते हैं यहाँ।
सरहदों पर रोज कत्लेआम होते हैं यहाँ।।
मोक्ष अधिकारी कहाते, बांट्ते जो मौत को।
अर्थ की आराधना में काम होते हैं यहाँ।।
मंत्र झूठे प्रेम के झूठीं अहिंसक आयतें।
भावनाओं के पुजारी, वंचनाओं ने ठगे।।[1]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में कवि का हृदय भ्रष्टाचार के विभिन्न तत्वों से पीड़ित है। वह धर्म के नाम पर हो रहे कत्ल, संग्राम, झूठे प्रेम आदि को बड़ी वेदना के साथ उजागर करता है। कवि समय को शाश्वत का मापदण्ड, अव्यक्त शक्ति, उत्थान–पतन का साक्षी आदि पर्यायों से प्रकट करता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

युग हो कालखंड हो आदि अंत की दूरी हो,
कर्म नियामक हो, सब धर्मों की मजबूरी हो।
हो उत्थान–पतन के साक्षी, कारण भी तुम हीं,
जीवन–मृत्यु चक्र की गति के लिये जरूरी हो।
तुम असीम हो, सीमित भी हो, परे हर गणित से,
सागर में गागर हो तुम, गागर में सागर हो।।[2]

1– अनकहा ही रह गया– ओमप्रकाश चतुर्वेदी'पराग', अखिल भारतीय प्रकाशन चर्खेवालान, दिल्ली, पृष्ठ 12

2– उपरिवत्, पृष्ठ 16

कवि उपर्युक्त पद्यांश में समय को सम्पूर्ण चराचर का नियंता बतलाता है। उसकी पंक्तियों में 'त्वमेव सर्व मम देव देवा' का भाव परिलक्षित होता है। कवि सांसारिक विडम्बना से थककर जिंदगी से और कहीं चलने के लिये कहता है–

कोयलों को मौन का अभिशाप,
कुल करों से मुक्त काग–प्रलाप।
मंदिरों में शोर है बेमाप,
खण्डहरों की चीख, भारी पाप।
सुख–सदन में है बहुत कम ठौर,
जिंदगी अब तो कहीं चल और।।[1]

इन पंक्तियों में कवि जग के इस अव्यवस्थित शोर–गुल से बहुत दूर जाना चाहता है। वह कहता है कि जहाँ हृदय को सच्ची सुखानुभूति होना चाहिए, वह स्थान भी शोर से पूर्ण है। कवि मनुष्य को सुख एवं दुख में प्रसन्न रहने के लिये प्रेरित करता है–

जन्म दिनों पर प्रिय परिजन ने जश्न मनाया है,
और वर्ष भर त्यौहारों ने मन बहलाया है।
सुख की घड़ियों में सौरभ के प्याले छलकाये,
दुख दुर्दिन में भी हमने हँस हँस कर गाया है।
रोते ही रहना तो है जीते जी मर जाना,
और मरण पर शोक मनाना भी नादानी है।।[2]

उपर्युक्त पद्य में कवि रोते हुये जीवन को व्यतीत करने के बिल्कुल विपरीत है। वह इस तरह के जीवन को चेतना से विहीन मानता है। कवि सच्चा मनुष्य उसे मानता है, जो कष्टों को झेलते हुये अपने

1– अनकहा ही रह गया– ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', पृष्ठ 22

2– उपरिवत्, पृष्ठ 25

अधरों की मुस्कराहट को लुप्त न होने दे। आज की राजनीति के छल को उजागर करता हुआ कवि कहता है–

कितने डॉन हो गये मंत्री, और माफिया कितने दल हैं,
इसकी गणना कौन करेगा, राजनीति में कितने छल हैं।[1]

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में कवि का भाव है कि जब शासन के संचालक ही डॉन, माफिया होंगे तो उस देश की शासन व्यवस्था कितनी स्वस्थ होगी? कवि देश के उन नागरिकों की ओर संकेत करता है जो अपनी संस्कृति, सभ्यता और पुरातन आस्थाओं आदि की ओर शंका व्यक्त करते हैं। उदाहरण दृष्टव्य है–

जिन्हें अयोध्या मात्र एक नगरी लगती है,
रामकथा पर जो शंका का डंक लगाते
जो संस्कृति, सभ्यता, पुरातन आस्थाओं पर
राजनीति के पंडालों में प्रश्न उठाते
जो इतिहास पढ़ रहे परदेशी चश्मे से
झूठ और सच की जिनको पहचान नहीं है।[2]

इस पद्यांश में कवि पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित मनुष्यों को फटकारता है। भगवान भक्तों की रक्षा हेतु अनेक रूप धारण करतेहैं, उन्हीं रूपों को कवि अपनी काव्य पंक्तियों के माध्यम से प्रकाशित करता है–

गोकुल छाँड़ि गये मथुरा, मथुरा हू को छाड़ि के द्वारिका धाये,
माखन चोर जू कंस को जोर उखारि के हू रनछोर कहाये।
बाँसुरी त्याग के चक्र धर्‌यो, अरु चक्र बिसारि के अस्व हँकाये,
साग के राग में ऐसे पगे, दुर्योधन के पकवान न भाये।[3]

उपर्युक्त पद्य में कवि भगवान श्रीकृष्ण की भक्त वत्सलता को उद्‌घाटित करता है। इन पंक्तियों में भगवान श्रीकृष्ण के मुखारबिन्द से

1– अनकहा ही रह गया– ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', पृष्ठ 31

2– उपरिवत् – पृष्ठ 35

3– उपरिवत् – पृष्ठ 43

उद्भूत श्लोक **'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे'** का भाव परिलक्षित होता है। कवि राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के त्याग, परिश्रम, कष्ट तथा सहनशीलता का वर्णन करता हुआ कहता है–

तुमने तकलीं लेकर तोपों को ललकारा
मुस्कानों से कटी बर्बरता की कारा।
पश्चिम कीं आँधी के तपते तूफानों पर–
बरसाई गंगा यमुना की शीतल धारा।
हिंसक भूचालों की गति पर रक्खा विराम,
बापू, तुमको शत–शत प्रणाम।।[1]

ये काव्य पंक्तियाँ कवि की त्याग भावना, राष्ट्र भक्ति, परिश्रम के प्रति विश्वास रखने का भाव स्पष्ट करती हैं। कवि गाँधी जी के सत्य तथा **'अहिंसा परमोधर्मः'** से ओत–प्रोत है। वह गाँधीजी द्वारा बताये गये मार्ग का ही अनुकरण करता है। कवि नारी के रूप सौन्दर्य को विभिन्न उपमानों से रूपायित करता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

बाड़े में थी पूर्ण चन्द्र की अनुपम छबि,
या कि सूर्य का रूप प्रभामंडल बिखरा
रश्मि लोक सा उज्ज्वल आनन था जैसे
गंगाजल में धुला हुआ दर्पण निखरा
अलकें लिपट रहीं मुख से कुछ थम–थम कर
पलभर ज्यों बदली ने विधु को ढाँप लिया।[2]

उपर्युक्त पद्यांश में कवि सौन्दर्य के प्रति आकर्षित दिखायी देता है। वह सौन्दर्य की आभा से इतना भ्रमित है कि वह यह भी नहीं समझ पा रहा है कि चन्द्रमा की अनुपम छवि है या सूर्य का प्रभा मण्डल बिखरा है। इस कृति में कवि सौन्दर्य का पुजारी प्रतीत होता है। तात्पर्य यह है कि

1– अनकहा ही रह गया– ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', पृष्ठ 52

2– उपरिवत् – पृष्ठ 74

कवि काव्य की उत्कृष्ट परम्परा में संवेदनात्मक अभिव्यक्ति के गहरे अर्थ व्यंजित करता है। **'अनकहा हीं रह गया'** कवि की अंतिम और वर्तमान की अनुभूतियों का सजीव, प्रभावशाली एवं सार्थक काव्य संग्रह है।

7-2 फूल के अधरों पै पत्थर

इस गजल संग्रह में कवि ने परम्परा का निर्वाह करते हुये भी पाखंड, झूठ और छल को नवीन सन्दर्भों में रूपायित–रेखांकित किया है। **'पराग'** जी आधुनिकता की चकाचौंध में समाप्त हो रही मर्यादाओं से क्षुब्ध हैं। वह भारतीय संस्कृति से परिपोषित मान–मर्यादाओं को जीवन्त रखने के लिये प्रयासरत दिखायी पड़ते हैं–

ये खुलापन तो दुःशासन हो गया,
जिन्दगी का चीर हर कर रख दिया।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि का भाव है कि सम्पूर्ण विश्व दुराचारों में मस्त है, उसे अपने नैतिक जीवन की चिन्ता से कोई मोह नहीं रह गया है। वह तो पतन की ओर अग्रसर है। कवि समय का सद्उपयोग करने का पक्षधर है। वह सभी कार्यों को समय के भीतर ही पूरा कर लेने के लिये प्रेरित करता है–

और कुछ देर चलो प्यार से बातें कर लें,
फिर न ये वक्त, न माहौल, न मंजर होगा।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में कबीर की साखी की पंक्तियें– 'काल्ह करै सो आज कर, आज करै सो अब, पल में परलै होयगी, बहुरि करैगो कब' का भाव परिलक्षित होता है। वह समाज को चेतावनी देता है कि बैर–भाव को छोड़कर सभी आत्मीयता से मिलें, फिर न ये समय न

1– फूल के अधरों पै पत्थर– ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', समय प्रकाशन दिल्ली, पृष्ठ 73

2– उपरिवत् – पृष्ठ 14

वातावरण और न मंजर प्राप्त कर सकोगे। कवि प्रेम में इतना सराबोर है, कि वह प्रेम पर अपना सब कुछ न्यौछावर करने को तैयार है–

अब गरल हो कि सुधा वारुणी या गंगाजल

जो मिला हमने पिया रंगे मयकशी की तरह।[1]

उपर्युक्त काव्य में कवि पूर्ण परिपक्व अवस्था को प्राप्त हो चुका है। वह कसौटी पर भी खरा उतरता है। कवि अच्छाई एवं बुराई को समान भाव से गले लगाने के लिये सहर्ष तैयार है। उसकी भावनायें समरूपता प्राप्त कर चुकीं हैं। कवि झूठे आश्वासनों से त्रस्त है और वह धीरे–धीरे निराशावादी होता जा रहा है। उदाहरण प्रस्तुत है–

आप कहते हैं कि बस दो चार दिन की बात है,

चार दिन की जिंदगी है, वो भी खाली जायेगी।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि मानव को सचेत कर रहा है कि ये मत सोच कि बहुत समय है जिन्दगी का, पता नहीं कब इसका अस्तित्व बिखर जाये। तात्पर्य यह है कि पराग जी के इस गजल संग्रह में भाव–प्रवणता, मानवीय संवेदन, युक्तियुक्त दृष्टि और गजब का संतुलन है। गजलों में गुम्फित शब्दावली पाठक के मन, मस्तिष्क को झकझोर कर रख देने वाली है। इन गजलों में कवि ने रमते हुये गहरी रसानुभूति के साथ अनुभव सम्पन्नता भी अर्जित की है।

1– फूल के अधरों पै पत्थर– ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', पृष्ठ 41

2– उपरिवत् – पृष्ठ 34

षष्ठम् अध्याय :

वीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में साहित्य सर्जना
(1951-2000)

- साहित्यकारों का सामान्य परिचय
- कृतियों का समीक्षात्मक विवेचन
- भाषा और शिल्प
- साहित्यिक मूल्यांकन

षष्ठ अध्याय

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में साहित्य सर्जना (1951-2000)

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध हिन्दी साहित्येतिहास के आधुनिक कालान्तर्गत नवलेखन काल के रूप में माना गया है। डॉ. नगेन्द्र की मान्यता है कि छायावाद के अनन्तर प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के आन्दोलन एकसाथ गतिशील रहे, तथा दूसरे तार सप्तक के प्रकाशन के उपरान्त प्रयोगधर्मिता से छुट्टी पाकर नये लेखन का जो प्रयत्न दिखाई पड़ता है उसे 'नवलेखन काल' की संज्ञा दी जा सकती है।'[1] डॉ. नगेन्द्र ने इसका प्रारम्भ 1953 ई. से स्वीकार किया है। स्वातंत्र्योपरान्त नये भावबोध तथा नवीन शिल्प विधान से युक्त नई कविता का आविर्भाव हुआ। इसमें यद्यपि प्रगतिवाद और प्रयोगवाद बीजरूप में विद्यमान थे, किन्तु अनुभूति की सच्चाई और बुद्धिमूलक यथार्थवादी दृष्टि[2] के कारण नई कविता पिछली काव्य धाराओं से असम्पृक्त रही।

1— हिन्दी साहित्य का इतिहास— डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 429

2— उपरिवत्— पृष्ठ 630

सन् 1960 के बाद की कविता में अस्वीकृति, असन्तोष और विद्रोह का स्वर प्रमुख रहा। इसे अकविता नाम दिया गया। यह कविता कोई नया आन्दोलन नहीं था, वरन् नई कविता में बीज रूप में जो स्वर विद्यमान थे, उन्हीं का प्रस्फुटित तीखा स्वरूप था।

सन् 1975 ई. के बाद की कविता, नई कविता और अकविता दोनों से अलग सामाजिक सरोकारों से सम्बंद्ध रही। इस काल के कवियों में काव्य वैभव की दृष्टि से पर्याप्त असमानता रही। इन कवियों की कविता के दो रूप प्रमुख थे– एक स्वभाव से दुरूह, क्लिष्ट तथा दूसरा पाठक को प्रभावित करने में समर्थ, सहज तथा सरल। नवगीत भी लिखे गये, हिन्दी गजल का दौर भी चला। पद्य के साथ–साथ सभी गद्य विधाओं का भी विकास हुआ। नाटक, निबन्ध, कहानी, उपन्यास तथा समालोचना आदि विधाओं में लेखन कार्य प्रगतिशील रहा।

आलोच्य युग में जनपद जालौन की साहित्य–सर्जना पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि जनपद के साहित्यकारों में गद्य की तुलना में पद्य–रचना को अधिक महत्व दिया गया। यद्यपि उपन्यास, कहानी तथा निबंध लेखन भी हुआ किन्तु काव्य सृजनकी ओर यहाँ का साहित्यकार विशेष उन्मुख रहा है। इस सृजनकाल के साहित्य–सेवियों को जन्मतिथि क्रमानुसार निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है।–

रविशंकर मिश्र

रविशंकर मिश्र जनपद जालौन के 'बड़ागाँव' में पं. हरगोविन्द मिश्र के यहाँ सन् 1951 ई. में उत्पन्न हुये। हिन्दी तथा संस्कृत में स्नातकोत्तर करके शासकीय प्रवक्ता के रूप में आप कार्यरत हैं। आपको बाल्यावस्था से ही वाणी का वरदान प्राप्त है। आपके माधुर्य रसपूर्ण गीत वीणा, कादम्बनी, मधुस्यन्दी आदि साहित्यक पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। **'काव्य–लक्ष्मी'** आपका अप्रकाशित गीत संग्रह है। मिश्र जी की रचनाओं

का प्रसारण–आकाश वादी छतरपुर तथा लखनऊ केन्द्र से यदा–कदा होता है। आपके गीतों की भाषा प्रांजल तथा तत्सम शब्दों से युक्त है, रचनाओं में शान्तरस का समावेश है। आपके गीतों में अनुप्रास तथा रूपक अलंकार की छटा यत्र–तत्र दिखायी देती है। आपके गीतों में सात्विक प्रेम–भावना सन्निहित है। निम्न पंक्तियों में कवि मिश्र के वरेण्यभाव सर्वव्यापकत्व की झाँकी प्रस्तुत करते हैं।–

उदय अस्त का क्रम देखा है हर उत्थान पतन देखा है,

कोई माने या न माने मैंने तुममें सब देखा है।

वह विमुक्ति का सुख क्या जाने जो बन्धन में रहा नहीं है।[1]

बलराम मिश्र

आपका जन्म पं. मूलचन्द्र मिश्र के यहाँ 2 अप्रैल सन् 1951 को जालौन में हुआ। विश्वविद्यालय की स्नातक उपाधि प्राप्त करके वर्तमानमें आप संग्रह–अमीन के पद पर कार्यरत हैं। सरस, मधुर एवं कोमल स्वभाव सम्पन्न श्री मिश्र जी व्यावहारिक कुशलता में निपुण हैं। बात–बात में नयी बात निकालना आपकी वाक्शैली की दक्षता को प्रमाणित करता है। गंभीर मनोवृत्ति वाले श्री मिश्र मितभाषी एवं मृदुभाषी है।

जहाँ तक सृजन का प्रश्न है, आप नई कविता से प्रभावित हैं। आपकी रचनायें सबकी खैर–खबर में प्रकाशित हुयी थीं। कतिपय पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

गंध का वातावरण

किसको सुहाना लग रहा है

कद बौने हुये हैं समय की तालिका के

चरमसीमा पर बिहंगम दृष्टि का

यह अनोखा चित्र ऋचायें पढ़ रहा है।[2]

1– काव्य–मंजूषा – सम्पादक प्रवीण सक्सेना, 'उजाला' पृष्ठ 61

2– सबकी खैर–खबर – पृष्ठ 118

अब्दुल रहमान 'रब्बानी'

आपका जन्म सन् 1952ई. में नयी बस्ती कालपी में हुआ। इन्होंने एम.ए. की परीक्षा उर्दू विषय लेकर उत्तीर्ण की। आप गीत, गज़ल, रुबाई, मुक्तक, छन्द, कहानी, समीक्षा तथा इतिहास लेखन में प्रवीण हैं। **'रब्बानी'** जी की प्रकाशित रचनायें हैं– हिन्दी में **रहमान की शायरी, मेरी कविता कौन सुनेगा** तथा **यह कैसी तकदीर मिली है'**। उर्दू में– **कविश, मता–ए–ख्वाब, आईना, मता–ए–यकी** तथा **नक्शे ह्यात** हैं। **कालपी के औलिया** तथा **आतिशे कारजार** आपकी अप्रकाशित रचनायें हैं। आप शिवदयाल वर्मा पुरस्कार प्राप्त हैं। आपकी हिन्दी रचनाओं में उर्दू के शब्द जैसे–इल्जाम, नसीहत, जहाँ, इन्सान [1] आदि यत्र–तत्र दिखायी देते हैं। आपकी गज़लों, रूबाइयों तथा कविताओं की भाषा सरल एवं ह्रदय में स्पन्दन पैदा करने वाली है। इन्होंने अपनी रूबाइयों के माध्यम से धार्मिक साम्प्रदायिकता को दूर करने का प्रयत्न किया है। उदाहरण देखिये–

हिन्दू या मुसलमान बनाने वालो!
इंसान को इंसान बना रहने दो।[2]

कवि का विचार है कि पुरस्कार व्यक्ति अकेले ही प्रप्त करना चाहता है, लेकिन दोषों को सभी में बिखेरना चाहता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

इनआम अकेले ही लिया करते हैं,
इल्जाम मगर बाँट दिया करते हैं।[3]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि का भाव है कि हर व्यक्ति को समानता का व्यवहार करना चाहिये। इसी प्रकार कवि प्रेम को सर्वोपरि स्वीकार करता है। वह प्रेम में सब कुछ न्यौछावर करने के लिये प्रोत्साहित करते हैं। उदाहरण देखिये–

1– काव्य–मंजूषा – सम्पादक प्रवीण सक्सेना, 'उजाला' पृष्ठ 61

2– उपरिवत् – पृष्ठ 61

3– उपरिवत् – पृष्ठ 61

प्यार के नाम पे कुर्बान करेंगे सब कुछ,

दिल मगन होके ये गाये तो मुझे खत लिखना।[1]

इन पंक्तियों के माध्यम से कवि प्रेम की महत्ता को प्रतिपादित करता है। आज के नेताओं की कूटनीति से त्रस्त होकर कवि कह उठता है।—

वो भी समझ न पाये, जिन्होंने विषधर कीले हैं।

आप कितने जहरीले हैं?

चिकनी चुपड़ी बातें करके लोगों को बहलाते।

अपने मन का भेद किसी से हरगिज नहीं बताते।

बात किसी की नहीं मानते बड़े हठीले हैं।[2]

आप कितने..........

उपर्युक्त कविता के माध्यम से कवि नेताओं की करनी को उजागर करके नेताओं को काले सर्प की तरह बतलाता है। आजकल ने नेताओं को बेईमान, बदकार, बदचलन, बेगैरत तथा बड़बोले आदि पर्यायों से कवि उजागर करता है। 'रब्बानी' जी ने ऐसे गीतों में देश के नागरिकों को स्वार्थी नेताओं से दूर रहने की चेतावनी दी है।

मु० जावेद मियाँ

आपका जन्म जालौन जनपद के अन्तर्गत ग्राम कुदारी में सन् 1955 ई. में हुआ। आपके पिता श्री शम्सुद्दीन थे। आपकी शिक्ष हाईस्कूल तक ही रही। कविवर एक कुशल पेन्टर के रूप में विख्यात हैं। आपके मुक्तक तथा सवैया बड़े ही आकर्षक हैं। मियाँ जी के गीतों का प्रकाशन अनेक पत्र—पत्रिकओं में होता रहता है। इनके गीतों की भाषा में उर्दू मिश्रित शब्दावली है। कुछ गीत बुन्देली में भी लिखे हैं, एक उदाहरण दृष्टव्य है—

1— काव्य—मंजूषा — सम्पादक प्रवीण सक्सेना, 'उजाला', पृष्ठ 62

2— उपरिवत्, पृष्ठ 63

तोरी लीपी पोती बखरी, मौजी नौंनी लागे राम।

हो कैसी नौंनी लागे राम।।

बड़े भुरारें सूरज किरनै आँगन आई तुम्हारे।

शीतल मंद बयार तुमारी, बखरी रोज बुहारे।।[1]

कवि उपर्युक्त छन्द में प्राकृतिक सौन्दर्य प्रतिबिम्बित करता है। शीतल मंद हवा से कवि के मन—मस्तिष्क में नयी उमंगे नया उत्साह दिखायी देता है। निम्न—पंक्तियों में आतंकबाद को उजागर किया गया है—

आये बसंत आये, जाये बसंत जाये

उजड़े हुये चमन में, बुल—बुल गीत गाये।

कर्फ्यू कहीं लगा है, कहीं भीड़ पर है गोली।

दुनियाँ में खिल रही है बस खून वाली होली।।[2]

इन पंक्तियों में कवि का हृदय आतंक से त्रस्त तथा परेशान दिखायी पड़ता है। वह देश में शान्ति व्यवस्था कायम करनेके लिये प्रयासरत है। कवि अपनी कृतियों में समाज को सुव्यवस्थित एवं शंतिमय जीवन यापन करने के लिये प्रेरित करता है।

नासिर अली 'नदीम'

आपका जन्म सन् 1955 में जालौन में हुआ। आपके पिता नूरअली शाह एक कुशल मिस्त्री थे। आप प्राइमरी में शिक्षक तथा कुशल पत्रकार के रूप में माने जाते हैं। **'सबकी खैर—खबर'** का सम्पादन आपने कुशलतापूर्वक किया। आपकी रचनाओं में हिन्दी गज़ल, शायरी, बुन्देली चौकड़िया, मुक्तक, कत्आत, कुण्डलियाँ तथा गीत प्रसिद्ध हैं। आपके गीतों की भाषा सरल और सहज है। जनपद में हिन्दी गज़ल के पुरोधा के रूप में आप विख्यात हैं। **'हिन्दी गजल का व्यवस्थित व्याकरण'** नामक आपका ग्रंथ निर्माणाधीन है।

1— सबकी खैर—खबर — सम्पादक, नासिर अली'नदीम', पृष्ठ 92

2— उपरिवत्, पृष्ठ 92

आपकी हिन्दी गज़लों का मुख्य प्रतिपाद्य आध्यात्मिक है। पवित्रतम प्रेम की व्यंजना निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत है–

न तुम मिलते न मिलता प्यार से सींचा हुआ जीवन।
ठिठुरती छाँव में या फिर दहकती धूप में होता।।
था मन चंचल लुभाने के दिखाई रूप की झिलमिल।
इशारों ही इशारों में बता दी नेह की मंजिल।।[1]

कवि इसी तरह गज़लों के माध्यम से आज की पीढ़ी को सचेत करता हुआ कहता है।–

जमीं जो छोड़ी है पुरखों ने बाँट सकते हो।
पर उनके नामों के टुकड़े न कर सकोगे तुम।।
कहाँ से देगा तुम्हें फूल, फल या छाँव भला।
वो पेड़ जिसकी जड़ों को ही काट दोगे तुम।।[2]

इस गजल में कवि का भाव है कि हे देश के सुनागरिकों अभी भी संभल जाओ, जो हमारे पूर्वजों की सम्पत्ति है उसे सम्हालों और उनके नाम को आगे बढ़ाओं तभी अपने जीवन को सफल बना सकोगे। कविता में कवि ने व्यक्ति के अस्तित्व को अभिव्यक्ति दी है–

मुक्ति का हेतु जो माया को समझता है बता।
मैल से मैल छुड़ाता है, या जल से धोकर।।
बूँद रहते हुये, सागर न कहायेगा कोई।
जो कहायेगा तो सागर में ही निज को खोकर।।[3]

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने माया से दूर रहकर ही मुक्ति प्राप्त करने का संकेत दिया है और यह भी व्यक्त किया है कि बिना तपस्या, भक्ति में सराबोर हुये ईश्वर की प्राप्ति नहीं कर सकता है। जब जीवात्मा का परमात्मा से साक्षात्कार हो जाता है तो वह परमात्मा में विलीन होकर तदाकार हो जाती है।

1– सबकी खैर–खबर – सम्पादक, नासिर अली'नदीम', पृष्ठ 89

2– उपरिवत् – पृष्ठ 99

3– सबकी खैर–खबर – पृष्ठ 124

मोहन चन्द्र स्वर्णकार 'दीवाना'

सन् 1956 ई. में पिता श्री जमुनाप्रसाद तथा माता श्रीमती किरनदेवी के घर मोहनचन्द्र **'दीवाना'** का जन्म जालौन कस्बे में हुआ। आपकी रचनाओं में बुन्देली गीत मुक्तक तथा श्रृंगार–परक दोहे हैं। कविवर **'दीवाना'** के गीतों में बुन्देली के पद–बंध जैसे– **'करिया से जालिम जहरीले'** रचना की शोभा में अभिवृद्धि करते हैं, तथा उत्प्रेक्षा, अनुप्रास एवं उपमा अलंकार कथन में सौन्दर्य उत्पन्न करते हैं।

कवि ने अपनी श्रृंगारिक रचना के माध्यम से एक नायिका द्वारा अपने प्रियतम् से मिलने का सजीव वर्णन किया। उदाहरण प्रस्तुत है–

अधखुले उन्हीं नैनों में जाने कैसा आकर्षण था?
प्रियतम् के मौन निमंत्रण पर कर डाला आत्म समर्पण था।
संकेतों के माध्यम से आने का समीप अवकाश मिला।
जीवन को घोर अंधेरे में ज्योतिर्मय नया प्रकाश मिला।।

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में कवि ने दर्शाया है कि आत्म–समर्पण का भाव आने पर ही प्रियतम की प्राप्ति होती है। प्रियतम से साक्षात्कार हो जाने पर अंधकारमय जीवन ज्योतिर्मय हो जाता है। इसी प्रकार कवि बुन्देली गीतों में पाठकों के मन–मस्तिष्क में श्रृंगारिकता भर देता है। उदाहरण दृष्टव्य है–

करिया से जालिम जहरीले कारे–कारे नैना,
जाने का कर गये जादू सो ये मतवारे नैना।
वे जुर बैठे चार ठगी गई लोक लाज जा तन की,
सैनन में कै गये अनकई कर गये अपने मन की।

अरुण नागर

सुप्रसिद्ध रीतकालीन कवि एवं तान्त्रिक कालीदत्त नागर (काली कवि) के पौत्र अरुण नागर जनपदीय रचनाकारों में विशिष्ट हस्ताक्षर

हैं। काव्य–सृजन प्रतिभा आपको विरासत में प्राप्त वरदान है। अरुण नागर गंभीर विषयों पर तो लिखते ही हैं, गीतों में अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग कर श्रोताओं को रिझाते भी हैं। आपने एक रचना में हनुमान के लिये श्रीराम चरणों के लवर, लघु जंप, दीर्घ जंप तथा वजन उठाने में सुपर बतलाया है। इस प्रकार कहीं–कहीं आपकी कविता का स्तर गिर गया। आपकी अप्रकाशित रचनायें **चंदन वन के साँप** (व्यंग्य रचना), **वे प्रशंसा के पोस्टर, मोहन के मोहन, गठ्ठर** आपके कविता संग्रह हैं।

आपके गीत अधिकतर समसामयिक हैं। रचनाओं में यत्र–तत्र अंग्रेजी के शब्द भी देखने को मिलते हैं। ग्रामीण शब्दावली का भरपूर प्रयोग उपलब्ध है। इनकी भाषा समयानुकूल है। नागर जी की रचनाओं में वीररस का भी समावेश है। कवि मनहरण घनाक्षरी के माध्यम से हनुमान की वीरता का बखान करता है–

मुक्केबाजी में आजी रावण को दिलायी याद,
केशरी कुस्ती में भी दाँव पेच प्रवर थे।
लघु जंप, दीर्घ जंप मारे कैसे–कैसे जंप;
लोंग जंपरों में आप सबसे जबर थे।।
गिरि ही उखाड़ लाये लखन बचाने हेतु,
वजन उठाने में भी कितने सुपर थे।
जादू जैसे काम इसीलिये कर पाये सभी,
श्रीराम चरणों के आप सच्चे लवर थे।।[1]

इस छन्द में हनुमान की वीरता का बखान करने में ग्रामीण तथा अंग्रेजी भाषा के शब्दों का खुलकर प्रयोग किया गया है। कवि हनुमान जी के गीत गाते–गाते आत्मविभोर होकर अपने जीवन को पुण्यमय बना लेता है। उदाहरण प्रस्तुत है–

1– काव्य मंजूषा– पृष्ठ 54

पाते हैं हिया में सियाराम के दुलारे दूत,

अंजना के पूत के ही गुण हम गाते हैं।

गाते हैं गीत मीत महावीर के रिझाते ही,

पुण्य सभी जीवन के जाग–जाग जाते हैं।[1]

यहाँ कवि नागर की हनुमान के प्रति भक्ति–भावना का प्राकट्य हो रहा है। वे भक्ति से अपने जीवन की सफलता स्वीकार करते हैं तथा महावीर को रिझाने के लिये अपने गीतों को समर्पित करते हैं। निम्न पक्ति में नेताओं की स्वार्थपरता को विवेचित किया गया है–

गाँधी जी के लिये

गोली और गालियाँ

स्वयं के लिये

चाँदी सोने के सिक्के

और

नोट भरी थैलियाँ।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों में राष्ट्रपिता का अपमान करने वाले नेताओं को फटकार दी गयी है। कवि का विचार है कि शासन सत्ता के संचालकों को ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ, विद्याओं में पारंगत त्यागी तथा बंधुत्व से परिपूर्ण होना चाहिये, तभी देश में गाँधी के रामराज्य की कल्पना साकार हो सकती है।

श्रीमती सुधा शुक्ला

जालौन जनपदान्तर्गत कालपी तहसील में निवास कर रहीं श्रीमती सुधा शुक्ला (1957ई.) अपने पतिअनूपकुमार के संरक्षण में काव्य–रचना में संलग्न है। आपके गीत तथा कवितायें रोचक हैं, गीतों की भाषा सरल,

---

1– काव्य–मंजूषा, पृष्ठ 54

2– उपरिवत्, पृष्ठ 55

संदेशपूर्ण है। आपके गीत **'सबकी खैर खबर'** आदि स्थानीय पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। सुधा जी के गीतों में निराशावादी जीवन को त्यागकर आशावादी जीवन यापन करने का उपदेश दिया गया है। उदाहरण प्रस्तुत है–

जगमग दीप जलाओ ऐसे,
सब जग को ज्योति मिले।
हृदय हृदय से मिटे अँधेरा,
ऐसा दीप जले।।[1]

कवियित्री ने उपर्युक्त गीत के माध्यम से बन्धुत्व भावना का दीप प्रज्ज्वलित कर, ईर्ष्या, कलह जैसे अंधकार को दूर करने का प्रयास किया है। आपने भेदभाव की नीति से सुख का क्षय होना भी बतलाया है–

राग द्वेष के अहंकार में बनी रात काली–काली।
ऊँच नीच के भेद–भाव में मिटी सभी सुख की लाली।।[2]

उपर्युक्त पंक्तियों का निहितार्थ है कि समस्त मानव जाति में राग–द्वेष व्याप्त है और इसके आगे आज का मानव सुख को भी त्यागने में संकोच नहीं करता है। कवियित्री ने समाज को राग द्वेष तथा अहंकार से मुक्त करने का सार्थक प्रयास किया है।

राकेश कुमार सोनी

पिता श्री अयोध्याप्रसाद सोनी के घर ग्राम जगम्मनपुर में सन् 1957 ई. को राकेश कुमार सोनी ने जन्म लिया। स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण कर आप राजकीय सेवान्तर्गत मुन्सिफ कोर्ट में लिपिक पद पर सेवारत हैं। आपकी ओजस्वी कवितायें साहसिकता से पूर्ण है। कविवर ने अपनी **'प्रयत्न'** कविता में साहस पूर्ण विचारों को व्यक्त किया है–

1– सबकी खैर–खबर, पृष्ठ 81

2– उपरिवत्, पृष्ठ 81

बाधायें जो सम्मुख आयें,

उनको कर युद्ध हरा दें हम।

भय अगर हमें भयभीत करे,

तो भय को स्वयं डरा दें हम।।[1]

उपर्युक्त कविता में कवि ने बतलाया है कि मानव को दृढ़ संकल्प होकर कठिनाइयों को दूर करने का: सार्थक प्रयास करना चाहिये।

सरयू प्रसाद भारती

ग्राम क्योलारी (कैलाशनगर) जनपद जालौन में पिता श्री गंगाद्दीन के घर सन् 1957 में उत्पन्न हुये सरयूप्रसाद भारती संगीत–गायन में प्रवीण हैं। आपके गीतों की भाषा सरल, सहज और भावपूर्ण है। गीतों में रस, अलंकारों का समावेश है। कवि गीतों के माध्यम से अपने सुव्यवस्थित जीवन में बाधा को दोषी ठहराता हुआ कहता है।–

दोष दुर्भाग्य का या कि संसार का,

अपने कर्तव्य का या कि करतार का।

पर किसी का नहीं, दोष है प्यार का,

ये वो शै है जहाँ मात होती रही।[2]

डॉ. श्रीमती वीणा श्रीवास्तव 'वीणा'

श्रीमती वीणा जी डी. वी. कॉलेज उरई में सगीत प्रवक्ता एवं विभागाध्यक्ष हैं। आप एक कुशल गीतकार संगीत विद्या में पारंगत तथा अध्यापन कार्य में दक्ष हैं। आप गीत कला मर्मज्ञ, सिद्धहस्त गज़ल गायिका तथा प्रतिभा सम्पन्न कवियित्री हैं। मधुरस छलकाती गागर के समान आपके मधुर कण्ठ से निःसृत गीत श्रोताओं को सराबोर कर देते हैं। कवियित्री

1– सबकी खैर–खबर, पृष्ठ 150

2– उपरिवत् – पृष्ठ 78

'वीणा' अपने गीतों में श्रीकृष्ण के प्रति भक्ति–भाव प्रकट करती हैं। उदाहरण देखिये–

याद तेरी जब मनको घेरे,
जब होते बिखरे सुर मेरे।
स्नेह पाश में बाँध सुरों को,
झंकृत 'वीणा' कर देते हो।[1]

'वीणा' जी ने ग़ज़ल के माध्यम से आज के क्षण–क्षण में बदलते परिवेश को प्रस्तुत किया है। उदाहरण दर्शनीय है–

कैसे करती यकीं उसकी उस बात का
वो तो मौसम सा पल–पल बदलता गया।[2]

श्रीमती मायासिंह 'माया'

प्रतिभा प्रकाशन द्वारा साहित्य–शिरोमणि एवं अ.भा. साहित्यकार अभिनन्दन समिति मथुरा द्वारा **'कवियित्री महादेवी वर्मा'** सम्मान से सम्मानित डॉ. माया (1957ई.) राजकीय महिला चिकित्सालय उरई में परिचारिका के पद पर कार्यरत हैं। माया जी गीत, ग़ज़ल, मुक्तक तथा कहानी लेखन में निपुण हैं। गीतों की भाषा भावानुरूप है। आपके गीतों में स्वाभिमान सन्निहित है। उदाहरण दृष्टव्य है–

अहसान हम पर जताया न कीजिये,
दिल में जगह जो न हो तो बुलाया न कीजिये।
तनहाइयाँ कुबूल हैं हमको ये रात की,
समां ये पल–दो–पल की जलाया न कीजिये।[3]

1– काव्य मंजूषा – पृष्ठ 48

2– उपरिवत् – पृष्ठ 49

3– उपरिवत् – पृष्ठ 51

कवियित्री ने विरहानुभूति का अभिनन्दन टूटती श्वासों से दिया है। उदाहरण दृष्टव्य है–

टूटती श्वासों की लय,

विरह का अभिनन्दन है।

दर्द की धूप है ऐसी,

कि जिसमें भींगापनं है।[1]

विमला तिवारी 'विमल'

श्रीमती विमला तिवारी (सन् 1959ई.) पति श्री गिरीश चन्द्र तिवारी कई वर्षों से साहित्य–सेवा में रत हैं। आप स्नातकोत्तर उपाधि से विभूषित हैं। आपके गीत, गज़ल तथा मुक्तक बड़े ही भावपूर्ण हैं। विमला जी की अप्रकाशित रचनाएँ विमल मुक्तक, गजलें तथा बुन्देली मुक्ता (काव्य संकलन) हैं। आपके मुक्तक, गजलें पाठक के हृदय की धड़कनों को बढ़ा देते हैं। आपका एक मुक्तक दर्शनीय है–

पानी को हम तरसते हैं वो जाम पी रहे।

दुनिया को क्या खबर है कि हम कैसे जी रहे?

देखो जमाने वाले मेरे जब्त का कमाल।

वे दर्द देते जा रहे, हम हँसके पी रहे।[2]

आपकी गज़लों में कल्पना की उड़ानों को रूपायित किया गया है–

कल्पना के नगर में न जाने कहाँ?

कब से हम अपने सपने संजोते रहे।

मील के पत्थरों की तरह ए विमल,

हम खड़े–खड़े रात भर रोते रहे।[3]

1– काव्य मंजूषा, पृष्ठ 51

2– उपरिवत्, पृष्ठ 45

3– उपरिवत्, पृष्ठ 46

श्रीमती वन्दना सिन्हा

जालौन जनपद की कालपी तहसील में पिता श्री श्रीकृष्ण सिन्हा के घर 1959 ई. में वन्दना जी ने जन्म लिया। आप स्नातकोत्तर के पश्चात् राजकीय सेवा में रत हैं। कवियित्री वन्दना जी स्वभाव से सरल एवं सहज हैं। आप नारी मूल्यों को समझाने एवं उसकी शक्ति का प्रदर्शन करने में दक्ष हैं। आपकी रचनायें कई पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। उनमें से एक गीत **'सबकी खैर–खबर'** में प्रकाशित है, जो प्रेम की दीवानी मीरा की तरह अपने भाव को संजोये है।

रात की स्याही बनी थी जिन्दगी,
रोशनी बिखेर गये तुम दीप बन।
बेसुरी सरगम बनी थीं जिन्दगी,
रागनी बरसा गये तुम गीत बन।
मीरा सा पागल मन जपे एक नाम।।[1]

असीम मधुपुरी

पिता डॉ. रामस्वरूप खरे के घर में पुत्ररत्न के रूप में उत्पन्न असीम मधुपुरी (सन् 1960ई.) का वास्तविक नाम सर्वेशकुमार खरे है, आप रचनाएँ कविनाम– असीम मधुपुरी से करते हैं। आप स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर प्राध्यापक पद पर कार्यरत हैं। मधुपुरी एक कुशल गीतकार, नवगीत लेखन में दक्ष तथा समीक्षक भी हैं। आपकी कविता **'उम्र और समय'**, **'सबकी खैर खबर'** पत्रिका में प्रकाशित हैं। जो समय की महत्ता को प्रतिपादित करती है–

सुनो प्रिय!
न तो समय किसी की प्रतीक्षा करता है!
और न हीं उम्र,
समय और उम्र
दो ऐसे पंछी हैं।
जो एक बार उड़े, तो फिर लौटकर नहीं आते।[2]

1– सबकी खैर खबर– पृष्ठ 82

2– उपरिवत् – पृष्ठ 117

रामशंकर भारती

ग्राम कैलाशनगर (क्योलारी) जालौन में पिता श्री गंगादीन के घर पुत्र रत्न के रूपमें उत्पन्न रामशंकर भारती (सन् 1962 ई.) स्नातकोत्तर साहित्य रत्न, विद्या अलंकार की उपाधियों से विभूषित हैं।। आपके गीतों में भक्तिरस बरसता है। आप गीत, गज़ल, कविता, दोहा, चौपाई के अनुपम चितेरे हैं। भारती जी ने गीतों के माध्यम से प्रभु के चरणों की भक्ति को जन्म जन्मान्तर पाने की प्रार्थना की है। उदाहरण प्रस्तुत है–

खोकर खुद को पा लिया तुम्हें,

हारा जीवन हो गयी जीत।

है मन–मयूर की चाह यही,

जन्म जन्म तक रहे प्रीत।

अब क्या देखूँ जग सपने,

जब हो गया तुम्हारा दर्शन।[1]

विनोद कुमार सौनकिया–

पिता डॉ. श्याम सुन्दर सौनकिया निवासी सिकरी राजा, जालौन के घर ज्येष्ठ पुत्र के रूप में विनोद कुमार सौनकिया (सन् 1962 ई.) का जन्म हुआ। आप स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर पी.सी.एस. राजकीय सेवा में कार्यरत हैं। आपके गीत, गज़ल, कवितायें अनेक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। विनोद कुमार जी कुशल सम्पादक भी हैं। सौनकिया के गीतों में त्याग की भावना निहित है। उदाहरण दृष्टव्य है–

है समय की गति अकम्पित आग जैसी,

और यदि डँस ले तो तक्षक नाग जैसी।

तुम गुलाबों का सुमन संसर्ग चाहो,

कठिन राहों की चुभन मेरे लिये है।[2]

1– सबकी खैर खबर– पृष्ठ 85

2– उपरिवत् – पृष्ठ 79

महेन्द्र पाटकार 'मृदुल'

मध्यवर्गीय परिवार में जन्मे युवा कवि महेन्द्र पाटकार **'मृदुल'** (सन् 1963ई.) जालौन का बचपन अभावों में व्यतीत हुआ। पिता श्री रामसेवक पाटकार के साथ जलपान गृह के संचालन में सहभागी बनकर महेन्द्र जी को समाज के खट्टे–मीठे, कठोर अनुभवों ने आपके बाल्यमन को असमय प्रौढ़ बना दिया। **'मृदुल'** जी स्वभाव से सरल तथा स्पष्टवादी विचारधारा के व्यक्ति है। वह सच्चे अर्थों में समाज सेवी, हिन्दी विचार मंच के संयोजक तथा हिन्दी व्यवहार संगठन के अध्यक्ष हैं। आपकी एक प्रकाशित कृति **'युग धर्म'** है। महेन्द्र जी की अच्छे पत्रकार, बुन्देली गीतकार के रूप में ख्याति प्राप्त हैं।

आपने **'युग धर्म'** में कवि की विशेषताओं को उद्घाटित किया है—

कूट–कूट कर राष्ट्रप्रेम का,
ओज भर दिया वाणी में।
करने को उत्सर्ग सभी कुछ,
है ममता कल्याणी में।[1]

कवि की लेखनी पत्रकार की विवशता पर भी चली है। देखिये—

पत्रकार से समाचार की बात पूँछना व्यर्थ है,
कैसा लिखना कैसा छपना, यह मालिक की शर्त है।
लिखने से पहले विचार यह क्या विज्ञापन दाता है?
सौ निर्दोष भले फँस जायें उससे प्रेस कमाता है।
कुनबा इनका भानुमती सा तुम्हें बताने वाले हैं।[2]

'मृदुल' जी के बुन्देली में लिखे प्रेरणा गीत की कतिपय पंक्तियाँ देखिये—

1— युग धर्म— महेन्द्र पाटकार 'मृदुल' प्रकाशक, हिन्दी विचार मंच जालौन, पारथ प्रेस उरई, पृष्ठ 13

2— धर्मयुग— महेन्द्र पाटकार 'मृदुल' पृष्ठ 16

लरका बच्चा लै कैं बिन्नू भोर हियाँ से जानें,

उतै केन्द्र पै पिबत दबाई जाकें तुमें पिबानें।

बड़ी बुरी बीमारी लकवा जीवन नरक लगत है;

जे सब नीम हकीमी बातें, लकवा कहूँ झरत है।

विवेकानन्द श्रीवास्तव

माता–पिता माया हरिश्याम पारथ जी के घर जन्में विवेकानन्द श्रीवास्तव (सन् 1963ई.) उरई, स्नातकोत्तर उपाधि से विभूषित हैं। आप संस्कृत काव्य–रचना, मुक्तक–लेखक तथा तबला वादन के विशेषज्ञ हैं। विवेकानन्द की कविता में मानवीय प्रेम की छटा प्रदर्शित होती है।

नहिं नैनन नीर बहे जिनके सुनि,

पीर पराई कराह भरी।

करूणा न बहे जिनके उरसों,

लखि दीनन के दुख की गठरी।[1]

आपके संस्कृत काव्य गीतों में भगवान श्रीकृष्ण के मुखारबिन्द से अर्जुन को उपदेशित करना दर्शाया गया है–

योग योगेश्वरश्चात् कृष्णः प्रियम्,

आध्वे धर्म सम्मूढ़ चेतो अर्जुनम्।

चोपदेशं हितार्थाय व्रते परम्,

कर्मयोगं फलाशक्ति रहितनरम्।।[2]

कवि एक मुक्तक में माया के जाल को उजागर करता है। उदाहरण प्रस्तुत है–

तृष्णाओं का भरण हो रहा है।

इन्सानियत का क्षरण हो रहा है।।

माया ने खींची हैं ऐसी लकीरें।

खुद में खुदी का मरण हो रहा है।।[3]

1– प्रेरणा गीत– महेन्द्र पाटकार 'मृदुल'

2– काव्य मंजूषा, पृष्ठ 41

3– काव्य मंजूषा, पृष्ठ 44

राजकुमार हिंग्वासिया 'राज'

कोंच निवासी राजकुमार हिंग्वासिया **'राज'** (सन् 1963 ई.) एक कुशल गज़लकार के रूप में विख्यात हैं। आप जनपदीय नवोदित साहित्यकारों में पांक्तेय हैं। कवि वर्तमान के मानवीय व्यवहार से व्यथित है। मानीवय दुर्भावनाओं को कवि ने चित्रित किया है–

आज देखो आदमी पशुओं से बदतर हो रहा।
आदमी ही आदमी को दे रहा है यातनायें।।
भाई–भाई से लड़ाने वालों से कह दीजिये।
एक माँ के लाल हो क्यों वो रहे दुर्भावनायें?[1]

श्रीमती शिखामनु 'गर्ग'

शिखा जी (सन् 1967 ई.) मनोज गर्ग, उरई की पत्नी, स्नातकोत्तर उपाधि से अलंकृत हैं। आप नारियों में जागृति हेतु प्रयासरत हैं। आपके गीत, गज़ल, मुक्तक तथा नवकविताओं का समय–समय पर प्रकाशन होता रहता है। शिखा जी के गीतों की भाषा पाठकों को सहजता से ही भाव विभोर कर देती है। आपकी एक नवकविता **'विवशता'** का उदाहरण प्रस्तुत है–

उदास पेड़ की शाखाओं पर,
कभी खिले गुलाबी फूल।
मुरझा गये,
अब पेड़ का चेहरा
बड़ा उतरा–उतरा लगता है।[2]

1– काव्य मंजूषा– पृष्ठ 43

2– सबकी खैर खबर– पृष्ठ 29

भास्कर सिंह स्वर्णकार 'माणिक'

'माणिक' जी (1969ई.) पिता श्री रामरूप स्वर्णकार **'पंकज'** भगतसिंह नगर कोंच, जालौन के निवासी हैं। आपकी रचनाएँ अनेक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। आपका बाल कविता संग्रह प्रकाशित है। राष्ट्रकवि **'मैथिलीशरण गुप्त सम्मान'** से सम्मानित कवि माणिक नाटक व एकांकी नाटकों के सृजन में विशेष दक्ष हैं। माणिक जी के मुक्तकों एवं कविताओं में राष्ट्रीय प्रेम–भावना के दर्शन होते हैं। आपने एक मुक्तक में नन्हें बच्चे की राष्ट्रीय–भावना को व्यक्त किया है–

माँ आशीष मुझे दे दे, मैं भी रण में जाऊँगा,
आजादी की खातिर मैं भी हँसकर शीश चढ़ाऊँगा।

कवि निम्न पंक्तियों में चाचा नेहरू के मन की कल्पनाओं को कविता में उद्घाटित करता है। उदाहरण प्रस्तुत है–

मखमल के गद्दे के ऊपर मेरे बच्चे सोते होंगे।
लोरी सुन–सुन कर
हँस–हँस कर
खूब पल्लवित होते होंगे।

कु. नीलम कश्यप

जालौन में डॉ. जीवनलाल के घर में पुत्री रूपमें उत्पन्न नीलम (सन् 1969ई.) एक मधुर गायिका हैं। आपकी मधुर वाणी से निःसृत गीत पाठकों को मोहित कर लेते हैं। नीलम जी की रचनाएँ गीत, छन्द, मुक्तक तथा गज़लों से माधुर्य छलकता है। कवयित्री बड़े–बड़े काव्य मंचों पर अपनी सरस वाणी से श्रोताओं को भाव–विभोर कर देती हैं। आपके गीत कृष्ण–भक्ति से आप्लावित हैं। उदाहरण दृष्टव्य है–

मीरा जैसी हुयी मगर मैं राधा जैसी बावरी,

मेरो कान्हा आकर मुझको आज बना ले बाँसुरी।

गैल रोककर वो तो मेरी मटकी ही फैला दी,

मैं भी पी लूँ विष का प्याला सूरत तो झलका दे।

तेरे नाम की मैं भी ओढ़ूँ कान्हा कारी कामरी।।

नीलम जी अपनी गज़लों में नारी–शक्ति का प्रदर्शन करती हैं। अपने संकल्प की दृढ़ता को अभिव्यक्ति प्रदान करती हुयी कहती हैं–

छेड़िये न आप मेरे स्वाभिमान को,

सर पे उठा लूँगी मैं आसमान को।

नारी का सत्य छेड़ना कोई हँसी नहीं,

मरने नहीं दिया कभी सत्यवान को।।

कवियित्री की काव्य–प्रतिभा गीतों में सजीवता उत्पन्न कर उन्हें प्रेरणास्पद बना देती है। प्रियतम् का मन भावन गीत प्रस्तुत है।–

वैसे तो मेरा हौंसला काफी बुलन्द है।

प्यार की सुगन्ध पला छन्द–छन्द है।

गीत, गज़ल, ओज, व्यंग्य कुछ भी लिखूँ मैं।

पर तुझको जो पसंद मुझे वो पसंद है।

अजमेर अंशारी 'कशिश'

श्री अब्दुल अंशारी के पुत्र अजमेर अंशारी (सन् 1972ई.) जालौन, एक कुशल पत्रकार हैं। आप एक गज़लकार, गीतकार होने के साथ साथ सिद्धहस्त व्यंग्यकार भी हैं। आपने गज़लों के माध्यम से मानव को विपत्ति में सद्मार्ग न छोड़ने की सलाह दी है। उदाहरण प्रस्तुत है–

कितने ही तेरे पाँव में काँटे चुभे मगर,

रास्ता अधूरा छोड़के जाना सही नहीं।

अपने मफाद के लिए मजहब के नाम पर,

अब और झोपड़ों को जलाना सही नहीं।[1]

1– सबकी खैर खबर, पृष्ठ 104

अपर्णा स्वरूप

अपर्णा स्वरूप का जन्म पिता डॉ. रामस्वरूप खरे उरई के यहाँ सन् 1973ई. में हुआ। आप स्नातकोत्तर उपाधि से अलंकृत है। कवियित्री का मन बाल्यावस्था से ही गीत रचना एवं लेखन कार्य में रमा है। वह एक अच्छी साहित्यकार, इतिहासकार, गीतकार तथा शिक्षिका हैं। आपकी वाणी में ओजस्वी भाषण की शक्ति विद्यमान है। कवियित्री अपनी नवकविता **'रेत की जलपरी'** के माध्यम से मानव की तृषा को प्रदर्शित करने की चेष्टा करती हैं।—

मैने लगभग रोआँसे स्वर में कहा बेहद।
आवाज उभरी असल में यह मरीचिका नहीं,
तुम्हारी तृषा के मापक यंत्र हैं।
मरीचिका उसे ही दिखेगी जिसके मनमें प्यास हो,
ये सुनकर मेरे मन की गहराइयों में
एक ठण्डे जल का सोता फूटा
और अब
मैं प्यासी नहीं थी।[1]

प्रवीण सक्सेना 'उजाला'

'उजाला' जी का जन्म उरई में सन् 1978ई. को श्री विशम्भर दयाल सक्सेना माता श्रीमती पूर्णिमा के घर हुआ। परास्नातक उपाधि प्राप्त कर आप प्रिटिंग व्यवसाय में व्यस्त हैं। कविवर **'उजाला'** गीत, ग़ज़ल, कविता, उपन्यास तथा कहानी लेखन में अग्रणी हैं। आपकी प्रकाशित कृति **'प्यार की तड़प'** उपन्यास तथा अप्रकाशित कृति **'चाँदनी में धूप'** शायरी संग्रह तथा **'स्मृति के साये में'** कविता संग्रह है। **'उजाला'** जी सवैया तथा छन्द लिखने में सिद्धहस्त हैं। उदाहरण देखिये—

1— सबकी खैर खबर, पृष्ठ 123

हम प्रेम सप्रेम लुटाकर यों,
दिन–रात घुना करते मरते हैं।
जब से निज यौवन के वह,
फूल हवा महका बहका करते हैं।
तब से बस यों अपने उर में,
दिन–रात सजे सपने रहते हैं।
बिन मोल–मिला पर प्रेम कथा,
हम रोज कहाँ कहते–फिरते हैं।[1]

आपका इन्द्रवज्रा छन्द का उदाहरण दर्शनीय है–

तगण, जगण दो गुरु
वीणा बजाओ नव वर्ष आया।
देखो यहाँ आज उल्लास छाया।
जागो नया सुन्दर प्रात लाया।
पक्षी गणों ने नव गीत गाया।[2]

आनन्द शुक्ला 'नवीन'

श्री नरेन्द्र देव शुक्ला के सुपुत्र **'नवीन'** जी का जन्म सन् 1978ई. को हुआ। आप परास्नातक की उपाधि प्राप्त कर काव्य–सृजन में संलग्न हैं। **'नवीन'** जी के काव्य में प्रकृति की अनुपम छटा देखने योग्य है। आपने यमुना जी की गम्भीरता का प्रतिपादन निम्न उदाहरण से किया है–

सुन कालिन्दी!
माना तुझमें गहराई
और है वेग हीनता
जो तेरा स्वभाव है स्वाभाविक
चुप रहना
दर्द भीतर ही भीतर सहना
कैसे कहे कोई तुझे अकेला?[3]

1– काव्य मंजूषा – पृष्ठ 26

2– उपरिवत् – पृष्ठ 25

3– उपरिवत् – पृष्ठ 26

गाँधी जी का हिंसा विहीन समाज बनाने का स्वप्न अधूरा प्रतीत होता है। कवि इसी भाव को निम्न पंक्तियों में व्यक्त करता है–

गाँधी तेरा ये गुजरात,
कि जिसके बदल गये हालात।
अहिंसा की नगरी में आज,
हो रहा है हिंसा का वास।
मानव में जागी है,
रक्त की प्यास।[1]

कु. अपर्णा सक्सेना

श्री विशम्भरदयाल सक्सेना की पुत्री कु. अपर्णा सक्सेना (सन् 1980ई.) बाल्यावस्था से ही काव्य रचना में रुचि रखती हैं। आपके गीत, कवितायें समाज में फैले नारी उत्पीड़न से सम्बन्धित हैं। उदाहरण प्रस्तुत हैं–

दहेज की आग,
कुछ ऐसी ही लगी।
न धुआँ ही उठा,
न राख ही मिली।
बिना दहेज के भी,
दुल्हन नहीं लगती भली।[2]

सीमा तिवारी 'सीमा'

'सीमा' जी (1980ई.) श्री संतोष तिवारी उरई की पुत्री हैं। हिन्दी विषय में स्नातकोत्तर की उपाधि से अलंकृत हैं। 'सीमा' जी के गीतों में पीड़ा की चुभन का अनुभव होता है। आपके एक गीत में निहित पीड़ा दृष्टव्य है–

1– काव्य मंजूषा, पृष्ठ 25

2– उपरिवत्, पृष्ठ 23

दर्द के चिन्ह, चेहरे पे उभरे,
हम बनायें कहाँ तक बहाना।

X X X

दर्द की कोई सीमा नहीं है,
इसको हरगिज न तुम आजमाना।[1]

प्रिया श्रीवास्तव 'दिव्यम'

सन् 1981 ई. में पिता श्री रजनीशचन्द्र श्रीवास्तव तथा माता श्रीमती स्नेहलता श्रीवास्तव के यहाँ प्रिया जी ने पुत्री के रूप में जन्म लिया। वही प्रिया आज काव्य–क्षेत्र में भावनाओं की अभिव्यक्ति, उद्वेलित मन की व्यथा, प्रेम–विरह तथा जीवन के हर पहलू को प्रकाशित करने में तत्पर हैं। कवियित्री संगीत में दक्ष होने के कारण अपनी रचना 'राग परिचय' में विशेष योग्यता का परिचय देती हैं। उदाहरण प्रस्तुत है–

घाट 'भैरव को लगाकर प्रात झंकृत कर दे तू।
शब्द झंकृत कर दे वीणा, ज्ञान झंकृत कर दे तू।
वादी 'ध', सम्वादी 'ग'
शेष शुद्ध 'ग' 'ध' नि 'कोमल'।[2]

कवियित्री कष्ट सहकर भी परोपकार करने के लिये तत्पर दिखायी पड़ती हैं।–

प्रश्न मेरा सुन बोल पड़ी,
वह नन्हीं सी कली।
भाई मैं तो हूँ पराधीन,
फूलों के संग रहती उनकी आश्रयी।
अब कष्ट चाहे मुझे लाख मिलें,
पर पलकर फूल तो बनना है।
पहुँचकर अपने लक्ष्य पर,
किसी का उपकार तो करना है।[3]

1– काव्य मंजूषा, पृष्ठ 21

2– उपरिवत्, पृष्ठ 20

3– उपरिवत्, पृष्ठ 21

कु. शारदा सिंह 'पायल'

पिता श्री रमेशसिंह, माता श्रीमती ऊषा सिंह कोंच ने (सन् 1982ई.को) शारदा सिंह **'पायल'** को जन्म दिया। पायल जी के काव्य में गज़ल, गीत एवं कविता की प्रधानता दिखायी देती है। आप पारथ प्रेम समिति द्वारा **'काव्य श्री'**, श्री भावानीशंकर जनसेवा समिति द्वारा **'साहित्य जिज्ञासु'** एवं अखिल भारतीय प्रतिभा प्रोत्साहन मंच द्वारा **'काव्य जिज्ञासु'** सम्मान से विभूषित हैं। आपकी गज़ल में प्रेम विरह की एक झलक दृष्टिगत होती है–

जिस प्यार में उसने कभी खायीं थी कसमें,
उन कसमों की क्या हुयी मेहरवानी लिख रही हूँ।
एक मैं ही नहीं रह रही हूँ आज दुनियां में अकेली,
बर्वाद जो हुये इश्क में सबकी कहानी लिख रही हूँ।[1]

'पायल' जी दुख में भी मुस्कराने की प्रेरणा देती हैं। दुनियां के दुख–दर्द व्यक्ति को निराश कर देते हैं। किन्तु निराशा में आशा का संचार करना, दुख में सुखानुभूति करना कवियित्री की सृजन धर्मिता की श्रेष्ठता का उत्कृष्ट उदाहरण है।–

जंगल में मंगल मनाओ तो जानें।
काँटों में फूल बनके मुस्कराओं तो जानें।।[2]

1– काव्य मंजूषा, पृष्ठ 16

2– उपरिवत्, पृष्ठ 17

सप्तम् अध्याय :

आलोच्य युग के साहित्य का जनपद जालौन के समाज पर प्रभाव

सप्तम् अध्याय

आलोच्य युग के साहित्य का जनपद जालौन के समाज पर प्रभाव

"साहित्यकार एक सामजिक प्राणी होता है तथा वह सामाजिक विचारों एवं भावनाओं का सृष्टा और प्रेरक भी होता है। साहित्य समाज की चेतना में साँस लेता है। उसमें समाज का स्पंदन रहता है। साहित्य समाज का वह परिधान है जो जनता के जीवन के हर्ष–विषाद एवं आकर्षण–विकर्षण के ताने–बाने से बुना जाता है। सच तो यह है कि साहित्य एक ओर समाज की गतिविधि से प्रभावित होता है और दूसरी ओर समाज में नवीन प्रेरणा, नूतन विचार और नये आदर्श भी फैलाता है।"[1] उक्त कथन का तात्पर्य है कि समाज और साहित्य का अन्योन्याश्रित सम्बंध है। साहित्य का प्रभाव समाज पर पड़ता है तो समाज की परिस्थितियों तथा गतिविधियों का रेखांकन साहित्य में अनिवार्य रूप से होता है। समाज की उपेक्षा करके साहित्य की परिकल्पना ही नहीं की जा सकती और समाज की समस्याओं का प्रतिबिम्ब साहित्य में न झलके, ऐसा कदापि नहीं हो सकता।

1— साहित्यिक निबंध— डॉ. विजयपाल सिंह, पृष्ठ 17

जनपद जालौन में सृजित साहित्य का अनवरत् प्रभाव यहाँ के समाज पर देखा जा सकता है। आदिकाल से लेकर आधुनिककाल तक यहाँ का सामाजिक जीवन साहित्य से प्रभावित रहा है।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व के साहित्यिक परिवेश का अनुशीलन करने से ज्ञात होता है कि वह समय श्रृंगार काल का था। उस समय श्रृंगारिक रचनाओं पर अधिक ध्यान दिया गया। किन्तु यत्र–तत्र वीर रस की कविताएँ भी देखी जा सकती थीं।

जालौन जनपद में अवतरित इस काल के साहित्यकारों में वीरबल (महेशदास) का नाम सर्वप्रमुख है। इन्होंने अपनी कवित्व शक्ति के माध्यम से आध्यात्मिक सौन्दर्य तथा भौतिक रूप–सौन्दर्य का मिला–जुला स्वरूप प्रदर्शित किया। आपके काव्य में नायिका के नख–शिख वर्णन का अतीव मनोहारी चित्रण मिलता है, जिसके कारण तत्कालीन समाज में नारी के प्रति प्रेम तथा श्रृद्धा भाव भी परिलक्षित होता है।

संयोग वर्णन में कवि ने विभिन्न क्रिया–कलापों के माध्यम से नायक–नायिका के पारस्परिक प्रेम की व्यंजना की, जिसके फलस्वरूप समाज में नारी– पुरुष एक–दूसरे के प्रेम–पाश में आबद्ध हुये। वियोग वर्णन की अप्रतिम छटा भी आपके काव्य में देखी जा सकती है। विरह में ही नायक–नायिका आन्तरिक स्तर पर अपने प्रेम की धड़कनों को सुन सकते हैं। विरह के कारण ही समाज में सच्ची प्रीति का प्रतिफलन होता है। नायिका का नायक के विरह में अश्रुपूरित नेत्रों से दुःख व्यक्त करना, इस काल के समाज में सच्ची प्रीति का उदाहरण है।

रीतिकालीन काव्य में मान–मनुहार, प्रेम–प्रसंग की एक स्वाभाविक प्रक्रिया रही है। संयोगावस्था में अनुनय–विनय से नायक–नायिका संतुष्ट हो जाते हैं। उनमें मान समाप्त हो जाता है। कवि इसी प्रकार की भावना को स्वाभाविक बना देता है। वह कई प्रकार के मानों का वर्णन करके समाज को नई चेतना प्रदान करता है।

नायिका भेद प्रकरण में कवियों ने नायिकाओं के विभिन्न भेद करके नारी जाति के स्वभाव को परखने में सरलता प्रदान की है। **'ब्रह्म'** के काव्य का अनुशीलन करें तो ज्ञात होता है कि इनके काव्य में रीतिकाल जैसी उच्छृंखल मानसिकता तथा थोथी आस्था नहीं थी। ईश्वर के सगुण एवं निर्गुण स्वरूप में अभेद स्थापित करना इनके काव्य की प्रमुखता थी।

सगुण भक्ति भावना के माध्यम से ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम–भाव प्रदर्शित कर कवि ने समाज को आस्थावान बनाने का सफल प्रयास किया। प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुपम छटा मानव के मन–मस्तिष्क को स्वस्थता प्रदान करती है। प्रकृति मानव की सहचरी भी है। प्रकृति तत्व संयोग में सुख की अभिवृद्धि करती है। वियोगावस्था में असीम दुःख प्रदान करती है। आपकी सर्जना ने प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन से समाज को स्वस्थ मानसिकता प्रदान की। नीति तथा उपदेशों से समाज में फैले आतंक अत्याचार और अंधविश्वास का उन्मूलन हुआ और मानवीय व्यवहार में अभिवृद्धि हुयी।

इसी युग में **श्रीपति मिश्र हुये जो सर्वांगनिरूपक आचार्यों में गिने जाते हैं।** रीतिकालीन परम्परा में लक्षण–ग्रंथों का सृजन हुआ और रचनात्मक भाषा को क्रमिक विकास का समय मिला। आचार्य श्रीपति की काव्यांग निरूपण प्रणाली अत्यन्त स्पष्ट है। साहित्य एवं काव्य का समाज पर सीधा प्रभाव दृष्टिगत होता है।

साहित्य में अपने पूर्वज कवियों के यश–गान ने नवपीढ़ी को सदाचारी होने की प्रेरणा दी। काव्य के लक्षणों का सूक्ष्म दृष्टि से चित्रण किया गया और उनमें होने वाले गुण–दोषों पर विशेष ध्यान दिया गया। काव्य लक्षणों को उदाहरण सहित प्रस्तुत करके समाज की साहित्यिक आवश्यकता को पूरा किया गया।

जागतिक अनुभव के बल पर इस काल में मानव को जीवन यापन का सही निर्देश मिला और समाज से भी साहित्य को अनुभवशील एवं

कुशाग्र बुद्धि के साहित्यकार प्राप्त हुये। मानव एक सामाजिक प्राणी है। इसी आधार पर आपके काव्य में समाज का प्रतिबिम्ब झलकता प्रतीत होता है। प्रकृति वर्णन चित्ताकर्षक है तथा ऋतुओं की प्राकृतिक छटाओं के बीच मेघों का आच्छादित होना कृषक की प्रसन्नता का सूचक है।

कवियों ने अपनी–अपनी काव्य–कृतियों में विविध सौन्दर्यों की सृष्टि की है। कवि रचनाओं को आकर्षक बनाने के लिये आलंकारिक सौन्दर्य के विभिन्न रूपों का सहारा लेते थे। इस काल में वीर–भावना के दर्शन यत्र–तत्र होते हैं। श्रृंगारकाल में शासकों के मदमस्त होने पर उनको उत्साहित करने के लिये वीर रसात्मक रचनाओं को स्थान दिया गया। इससे समाज की मान–मर्यादा दूषित नहीं हुयी।

इस काल की रचनाओं का समाज पर सीधा प्रभाव पड़ा। राधा–माधव की श्रृंगारिक रचनाओं से उस युग के मानव को श्रृंगारिक प्रेरणा प्राप्त हुयी। श्रृंगार और मनोरंजन जीवन के परमावश्यक तत्व के रूप में वर्णित किये गये। राधा–कृष्ण के श्रृंगारिक वर्णन के माध्यम से प्रेम और भक्ति का संदेश भी प्रसारित हुआ। कवियों ने इस तरह की रचनाओं को आधार बनाकर समाज को ईश्वर के प्रति आकर्षित किया।

अन्त में कहा जा सकता है कि जालौन जनपद के समाज पर आलोच्य युग के साहित्य का सीधा प्रभाव पड़ा है। देश की तत्कालीन परिस्थितियों का गम्भीर अध्ययन करके कवियों ने इस प्रकार की रचनायें कीं। शासक एवं शासित उस समय वीरता से ऊब चुके थे। इसी थकान को दूर करने के लिये शासक–शासित दोनों ही श्रृंगार के प्रति लालायित थे। कवियों ने अपने काव्य सृजन से समाज की लालसा को भरसक पूरा किया।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध को भी इतिहासकारों ने रीतिकाल से अभिहित किया है। यह काल रीतिकाल का मध्यकाल था। इसमें श्रृंगार परक रचनायें चरम सीमा पर थीं। आलोच्य युग में सृजित साहित्य का प्रभाव भिन्न–भिन्न रूपों में पड़ा है। इस काल के **मनीषियों में पं. कालीदत्त नागर**

(काली कवि) प्रमुख हैं। आपके द्वारा गंगा जी का मुक्त कण्ठ से प्रशस्ति–गायन समाज को पावन नदियों के प्रति श्रृद्धावान बनाता है। **गंगाजी को कलियुग नसावनी मुक्ति प्रदायिनी आदि** जैसी विशेषताओं से आपने विभूषित किया है।

जब भृगुजी ने भगवान विष्णु के वक्षस्थल में पदाघात किया और क्रोध की जगह भगवान विष्णु ने, ब्राह्मण देव के चरणों में मेरे कठोर हृदय से चोट तो नहीं पहुँची, यह जानने की इच्छा व्यक्त की। इस प्रकार कवि ने जीवन के विभिन्न अनुभवों को काव्य बद्ध करके सम्पूर्ण समाज को लाभान्वित किया है।

कवि सामाजिक परिस्थितियों को सफल जीवन के प्रतिकूल समझकर अत्याचारियों से बचने का एकमात्र आधार ईश्वरीय भक्ति मानता है। इसलिये काली कवि ने अपने काव्य में ईश्वर के चरित्र–चित्रण को पिरो दिया। वीर हनुमान सीता जी की खोज करते हैं और अपने प्रभु श्रीराम की भक्ति के बल पर अनेक राक्षसों का वध कर देते हैं। वीर हनुमान का वापिस आकर सर्वप्रथम प्रभु श्रीराम के चरणों में विनम्र प्रणाम करना ही समाज को सदाचार की शिक्षा देता है।

इस काल में श्रृंगारिकता इतनी चरम सीमा पर थी कि कवि की लेखनी से हनुमान भी श्रृंगारिकता से नहीं बच पाये। हनुमानजी लंका के परकोटे के भीतर सुन्दरियों के भोग–विलास सम्बन्धी सभी क्रियाओं को देखने से नहीं चूकते हैं। वे सुन्दरियों के अनुपम सौन्दर्य में इतने लीन हैं कि वे अपनी समस्त मर्यादा को छोड़ देते हैं। अतः उस समय का समाज रीतिकाल से अत्याधिक प्रभावित था, जिसके फलस्वरूप कवि–शासक एवं समाज श्रृंगार प्रिय हो गया था।

कवि की रसिक विनोद जैसी श्रृंगार–परक रचना संयोग तथा वियोग वर्णन की झाँकी प्रस्तुत कर समाज को संयोग पक्ष एवं वियोग पक्ष से अवगत कराती है। इस काल में लक्षण ग्रंथ परम्परा का निर्वहन सफलतापूर्वक करने में सक्षम था।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रीतिकालीन लक्षण ग्रंथ परम्परा का सफल निर्वहन करते हुये काली कवि जैसे कवियों ने संयोग वियोग, विभाव–अनुभाव, ऋतु–वर्णन तथा उद्दीपन आदि स्थितियों का मनोहारी चित्रण किया। इस प्रकार के काव्यों से समाज में स्त्री एवं पुरुषों के लक्षणों के वर्णन की अनिवार्यता मानी जाने लगी।

'कवि कल्पद्रुम' जैसी काव्यांग निरूपक रचना में तत्कालीन कवियों एवं आचार्यों की आत्म–प्रदर्शन की भावना तो थी ही साथ ही काव्य रसिकों का ज्ञान वर्धन करने की प्रबलेच्छा भी निहित थी। **'कवि कल्पद्रुम'** में शास्त्रकारों की प्राचीन परम्परा का सफल निर्वाह हुआ है। कवि ने अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना जैसी शब्द–शक्तियों को तो पारिभाषित किया ही, काव्य–प्रयोजन, काव्य कारण तथा काव्य के स्वरूप को भी सरलीकृत कर पाठकों के हृदय में चमत्कार उत्पन्न किया।

डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है कि **'यही कारण है कि संयोग के नग्न चित्रों तथा नायकों की धृष्टताओं के विभिन्न रूपों की प्रस्तुति करने में कोई संकोच नहीं रहा था।'**[1] क्योंकि इस समय विलासितामय जीवन को समाज स्वीकार कर रहा था।

काली कवि रसवादी कवि थे। रीतिकालीन लक्षणों को उन्होंने पूर्णरूप से अपनी कृति में समाविष्ट किया है। उनके इस प्रकार के वर्णनों से पति–पत्नी में प्रेम, प्रेमी और प्रेमिका के सम्बन्धों के बीच प्रगाढ़ता स्थापित हुयी है। **'कवि कल्पद्रुम'** में कवि ने राह में जाते हुये पथिक को नायिका द्वारा विश्राम करने का आग्रह वर्णित किया है किन्तु क्वाँरेपन के कारण सहवास के लिये असमर्थता व्यक्त की गयी है।

इस प्रकार के शिक्षाप्रद वर्णनों से संयम की प्रेरणा पाठकों को दी गई है।

1– हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. नगेन्द्र, पृष्ठ 306

प्रहेलिकाओं का काव्य में समावेश करके कवि तर्क शक्ति को तीव्र करता है। गायत्री मंत्र के गूढ़ार्थ को सरलता से अभिव्यंजित करके उपासना का मार्ग निर्दिष्ट करता है। जिन गायत्री माँ का स्तवन और आराधन ब्रह्मा, विष्णु और शिव द्वारा किया जाता है उनकी अर्चना पद्धति का अनुकरण समाज को दैविक शक्ति के रहस्य की खोज के लिये प्रेरित करता है।

तत्कालीन काव्यों में ऋतु वर्णन की प्राचीन परम्परा का अनुसरण हो रहा था। रीतिकालीन कवियों ने इसे और आगे बढ़ाया। इस प्रकार के आकर्षक वर्णन पाठकों का मन मोह लेते हैं। इस कृति में ग्रीष्म की भयंकरता का तथा शिशिर में कामोत्तेजक प्रभावों का हृदय ग्राही वर्णन है। इस प्रकार का वर्णन ऋतुओं के बदलते स्वरूप का परिज्ञान कराता है तथा प्रत्येक ऋतु के संयोग पक्ष में अनुकूल और वियोग पक्ष में प्रतिकूल प्रभावों का बोध कराता है। अन्त में कहा जा सकता है कि कवि ने इस प्रकारकी रचना कर समाज को ऋतु परिवर्तन का प्रेमी बना दिया है।

इसी काल में लछमन ढीमर **'लाख'** भी हुये हैं। इनका एकमात्र अप्रकाशित ग्रंथ **'गंगा शतक'** है। आपने भक्ति विषयक छन्द लिखे हैं। गंगाजी की महिमा को बड़ी शालीनता के साथ उद्घाटित किया है। गंगाजी के दर्शन तथा उनके पवित्र जल के स्नान मात्र से सभी पापों का नाश हो जाता है। धर्मराज राज्य के अधीनस्थ कर्मचारी चित्रगुप्त प्राणियों के शुभाशुभ कर्म का लेखा–जोखा रखते हैं, यमराज के दूत जीवात्माओं को मृत्युलोक से स्वर्ग व नरक में कर्म फल–भोग हेतु पहुँचाते हैं। लेकिन अब वे सभी हाथ पर हाथ रखे हुये बैठे हैं क्योंकि गंगा के पावन जल से पुण्यात्मा तथा पापात्मा दोनों ने मंजन कर लिया है, जिससे उन सभी के पाप विदीर्ण हो गये तथा वे पापरहित हो गये हैं। कवि गंगा जी की पावनता में इतना विश्वास रखता है कि नरक को खोदकर फेंकना चाहता है क्योंकि गंगा जी के समक्ष नरक की सार्थकता ही समाप्त हो जाती है।

गंगा स्नान के लिये जल में प्रवेश करने पर पापों में खलबली मच जाती है। सभी पाप गंगा मैया से हाथ जोड़कर क्षमा याचना करते हैं। इस प्रकार के कृतित्व से समाज गंगा मैया के प्रति श्रद्धावान है। आज भी गंगा स्नान की महत्ता प्रतिपादित है। गंगा जी एक माँ के आदर्शों को धारण किये हैं क्योंकि जब सभी पाप हाथ जोड़कर क्षमा–याचना करने लगे तो गंगा मैया ने उन्हें पुत्रवत् क्षमा कर दिया। यहाँ कवि ने माँ की क्षमा का उज्जवल आदर्श स्थापित करके माँ और पुत्र के मधुर, स्नेहिल तथा पवित्र सम्बन्धों को व्याख्यायित किया है और मानवीय समाज के कुशल संचालन हेतु सत्प्रेरणा रूपी सत्कार्य किया है।

कवि भ्रमित व्यक्ति को जागतिक दुःखों में आकण्ठमग्न देखकर उसकी व्यथा को गंगा के कूल पर पहुँचकर नष्ट करने की सलाह देता है। गंगा तट पर जाते ही पापी समस्त अपराधों से मुक्ति पा जाता है। इस प्रकार के कल्याणकारी विचारों से समाज में पीड़ित पापियों के मन की घुटन समाप्त हो जाती है।

गंगा भक्ति की इस काव्य धारा से धार्मिक दृष्टिकोण की अभिवृद्धि हुई तथा समाज में पापों की कमी भी हुयी। कई पापी इस काव्य को पढ़कर लाभान्वित हुये हैं। समाज में सुख–समृद्धि का भाव जागा है। गंगा के अनुपम सौन्दर्य एवं पाप–विनाशक पावनता से आलोच्य युग अत्यधिक प्रभावित हुआ है।

गंगा शतक जैसी रचना से जनमानस में समर्पण का भाव जाग्रत हुआ है। गंगा की गम्भीरता, तरलता, सौम्यता तथा स्वच्छता चारों दिशाओं में व्याप्त हुई है।

अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि गंगाशतक सरस भक्ति–पूर्ण रचना है। इसमें कवि ने भक्तों के भावों को पिरोया है। गंगा जी की पवित्रता का प्रभाव समस्त समाज पर पड़ा है, क्योंकि गंगा मैया में पापी भी स्नान करते हैं और पुण्यात्मा भी। उभय प्रकार के जीवों को माँ की ममता समान रूपेण प्राप्त होती है। गंगा जी का पावन जल ग्रहण करने से

आन्तरिक एवं बाह्य विकार समाप्त हो जाते हैं। समाज को भक्तिपूर्ण रचनाओं से सत्कर्म की प्रेरणा प्राप्त हुई है। गंगा समस्त दोषों का निवारण करती है। गंगा जी के गुणों का बखान कर कवि समाज में गंगा के प्रति अखण्ड विश्वास, अनन्य भक्ति तथा श्रद्धा का भाव जाग्रत कर देता है।

उन्नीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध रीतिकालीन परम्परा के अन्त का काल था। तत्कालीन रीतिकालीन साहित्य में घोर श्रृंगारिकता का प्राधान्य था। यह समय पुनर्जागरण काल के नाम से पुकारा जाता है। इस समय भक्ति और नीति को प्रमुख वर्ण्य विषयों के रूप में ग्रहण करने का आग्रह भी नहीं रह गया था। किन्तु जनपद जालौन की साहित्य–सर्जना का सूक्ष्मावलोकन करने पर यह तथ्य दृष्टि में आता है कि जनपद पर **पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश'** जैसी काव्य प्रतिभाओं ने भक्ति पर जोर दिया। **राधा–माधव की साकार युगल मूर्ति को समाज में सर्वव्यापक सिद्ध करके अपने आराध्य के प्रति श्रृद्धा एवं समर्पण भाव अभिव्यक्त किया है।**

इसी काल में कृष्ण बल्देव वर्मा भी हुये हैं। आपने **'बुन्देलखण्ड पर्यटन'** जैसे लेखों में बुन्देलखण्ड की भौगोलिक स्थिति, ऐतिहासिक विवरण, तीर्थ स्थल, दर्शनीय पर्यटक स्थल, कल–कल निनाद करती नदियाँ तथा विशालकाय पर्वतों के बारे में उल्लेख किया है जिससे जनपद के समाज को विभिन्न स्थितियों का ज्ञान प्राप्त हुआ।

इस समय समाज कलह, ईर्ष्या तथा द्वेष आदि बुराइयों से गुजर रहा था। इन सभी को दूर करने के लिये साहित्यकारों एवं कवियों ने सार्थक प्रयास किये। उन प्रयासों में वर्मा जी द्वारा रचित नाटक **'भर्तृहरि राज त्याग'** भी है। लेखक ने इस नाटक द्वारा उज्जैन नरेश के चरित्र को उकेरा है और उसमें समाज के लिये उपयोगी तथ्यों को समाहित किया है। इन तथ्यों में नीति निर्देशन, सत्याचरण, वैश्या आदर्श, राग एवं त्याग और भ्रातृ–प्रेम आदि मुख्य हैं। वर्मा जी ने इन सभी आदर्शों को अपनी नाट्य कृति में स्थापित कर समाज को पतित होने से बचाया।

रसिकेन्द्र जी राष्ट्रीय काव्य धारा के कवि माने जाते हैं। आपने अपनी कृति **'मनहर वीर ज्योति'** के माध्यम से राष्ट्रीय भावना, नारी जागरण, देश का गुणगान और भक्ति–भावना के अस्तित्व को अक्षुण्य बनाये रखा। आपके कृतित्व से समाज प्रोत्साहित ही नहीं हुआ अपितु समाज ने अपने आपको उपर्युक्त तथ्यों में ढालने का प्रयास भी किया है। आपका कृतित्व दासता का घोर विरोधी है। समाज में दासता की परिसमाप्ति के लिये आपकी कृति उदाहरण के रूप में देखी जा सकती है।

पं. बेनीमाधव तिवारी साहित्य, राजनीति और ललित कला में अग्रणी थे। आपने पद्य एवं गद्य दोनों में ही लेखन कार्य किया। आपके कृतित्व का प्रभाव जनपद की लगभग सभी जातियों पर पड़ा। आपके लेखन में जीवन को जाग्रत करने वाली अपरिमित शक्ति थी। उस समय की परिस्थितियों पर आपके समाचार पत्रों ने पर्याप्त प्रभाव डाला है। आपने अपनी कृति में समाज के आडम्बर व ढोंग का भण्डा फोड़ कर समाज को समानता का पाठ पढ़ाया। उस समय सूक्ति लेखन भी हो रहा था। सूक्तियों के माध्यम से उस काल का कवि श्रोताओं के ह्रदय पर अमिट प्रभाव छोड़ने का सफल प्रयास किया था, जिससे समाज दोषमुक्त होकर संगठित एवं सुव्यवस्थित हो सके।

तत्कालीन साहित्य में समाहित विनोदप्रियता ने भी समाज को मानसिक तनाव से मुक्ति दिलाने का कार्य किया। काव्य में आगत विनोद प्रियता चिन्तनमुक्त समाज को प्रगतिशीलता की ओर उन्मुख ही नहीं करती थी वरन् सम्पूर्ण देशकाल एवं वातावरण को एक सूत्रता में आबद्ध कर राष्ट्रोन्नति में सहायक सिद्ध होती थी।

समाज सुधार तिवारी जी के जीवन का ध्येय था। आपकी कृति में छुआ–छूत जैसी सामाजिक बीमारी को समूल उन्मूलित करने का प्रयास किया गया। इस जनपद में साहित्य के प्रति अटूट निष्ठावान डॉ. आनन्द ने समाज सुधारक के रूप में अथक परिश्रम किया। आपके

सुप्रसिद्ध महाकाव्य **'झाँसी की रानी महारानी लक्ष्मीबाई'** में देश के प्रति अनन्य प्रेम तथा इस देश में उपजे वीरों की महानवीरता का वर्णन है। जनपद के समाज को वीरों के प्रति श्रद्धान्वित किया गया है। इस महाकाव्य ने समाज में वीरता का संचार करके कायर व्यक्तियों को उत्साहित किया तथा नवचेतना जाग्रत की। **'एम.एल.ए.राज'** कृति ने नेताओं के चुनावी घोटालों तथा उनकी विद्वेषपूर्ण नीति से समाज को जाग्रत किया।

देश के धन का दुरुपयोग, असमान वितरण एवं राजनीतिक दुरवस्थाओं की भर्त्सना कर सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने का विचार व्यक्त किया। कवि ने **'सन् अड़तालीस'** में स्वातंत्र्योत्तर, भारतीय जनमानस के क्षय होते मानवीय मूल्यों एवं विश्वासों की सुषुप्त चेतना को जाग्रत किया।

कवि ने अपनी कृति में समाज को उन लोगों से अवगत कराया है जो हुकूमत के गुलाम रहकर पुरस्कार पाते रहे, जो जीवन में राष्ट्र के काम नहीं आये। उन्हीं गुलामों को स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश का कर्णधार माना गया। अन्त में कहा जा सकता है कि कृति ने समाज को देश द्रोहियों से अवगत कराया।

'शक्ति निदान' कृति के माध्यम से आयुर्वेद सम्बन्धी जानकारी प्रस्तुत की गयी है जिससे समाज में रह रहे भाषावादी वैद्य **'शक्ति निदान'** की सहायता से आयुर्वेद के गूढ़ विषय की विलक्षण शक्ति से परिचित हुये।

'चीन और पाकिस्तान' कृति ने देश में चीन द्वारा हो रहे अत्याचार के प्रति समाज को विध्वंशी भावना से ओत–प्रोत कर देश के सम्मान को सुरक्षित किया। इस कृति में साम्यवाद को खोखला एवं निराधार, अस्तित्व विहीन बतलाया है, जिससे समाज में साम्यवाद के प्रति आक्रोश व्याप्त हो गया। इस आक्रोश के बल पर देश के जवानों ने चीन पर विजय प्राप्त की।

ठीक इसी तरह **'पब्लिक इन्ट्रेस्ट'** तथा **'दारुल शफा'** रचनाओं में श्रोताओं एवं पाठकों को मंत्रमुग्ध कर अमिट छाप छोड़ी है। **'वैश्यासती'**

नाटक समाज की समस्याओं को उभारकर उन सभी का समाधान कराने का प्रयत्न करता है।

अन्त में कहा जा सकता है कि यह समय देश में अत्याचार, विद्वेष, ईर्ष्या का था। इस समय के कवियों एवं लेखकों ने समाज में व्याप्त सभी बुराइयों का विनाश करने का सार्थक प्रयास किया है।

जनपद जालौन में साहित्य: सर्जना का आलोच्य युग पर प्रभाव परीक्षण के लिये कवियों एवं लेखकों के साहित्य का प्रस्तुतीकरण करके उनके प्रभाव को अंकित किया गया। साहित्य में जिस धारा पर लेखन होता है उसका अमिट प्रभाव तत्कालीन समाज पर पड़ता है। साहित्य समाज का दर्पण होता है तथा साहित्य से समाज को सत्प्रेरणा प्राप्त होती है। मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य होता है। साहित्यकार साहित्य-सर्जना समाज के लिये ही करता है। जनपद जालौन का समाज युगीन साहित्य से सदैव प्रभावित रहा है तथा समाज साहित्य से प्रेरणा भी प्राप्त करता है।

अष्टम् अध्याय :

साहित्यिक पत्रकारिता का योगदान

अष्टम् अध्याय

जनपद की साहित्य सर्जना : साहित्यिक पत्रकारिता का योगदान

पत्रकारिता के विषय में समय–समय पर विद्वानों मनीषियों और वरिष्ठ पत्रकारों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं, जिनसे पत्रकारिता का स्वरूप बहुत ही पवित्र और उज्जवल प्रतीत होता है। प्रसिद्ध विद्वान कार्लाइल की दृढ़ धारणा थी कि **'पत्र सम्पादक सच्चे सम्राट और धर्मोप– देशक हैं।'**[1] द्वितीय सम्पादक सम्मेलन के सभापति के रूप में अभिभाषण देते हुये पं. माखनलाल चतुर्वेदी ने कहा था **'पत्रकारिता स्वयं स्वीकृत सेवा है।'**[2]

पत्रकार पं. सुन्दरलाल के अनुसार– **'सच्चा पत्रकार वही हो सकता है जो समाज सेवा के लिये पूरी तरह समर्पित होकर निर्भीकता, निष्पक्षता, निःस्वार्थ भावना तथा स्वतंत्रता से लेखनी चलाये और किसी के अनुचित दबाव के आगे न झुके।**

1– हिन्दी पत्रकारिता सिद्धान्त और प्रयोग– डॉ. प्रतीक मिश्र, प्रकाशक ग्रंथम साकेत नगर, कानपुर–14, पृष्ठ 84

2– उपरिवत् – पृष्ठ 84

उक्त विवरण से निष्कर्ष निकलता है कि पत्रकार में समाज के प्रति सेवा करने का भाव दृढ़ हो तथा वह निर्भीक और साहसी भी हो।

साहित्य और पत्रकारिता का गहरा सम्बन्ध है। शोषण हो या अत्याचार, दमनहो या उथल–पुथल ऐसे किसी भी समय न तो पत्रकार चुप बैठ सकता है और न ही साहित्यकार। अंग्रेजों की शोषण नीति का भी परिणाम यह हुआ कि जहाँ एक ओर पत्रकारों ने कार्य प्रारम्भ किया वहीं दूसरी ओर साहित्यकार भी चुप नहीं बैठे। दोनों के स्वर आपस में मिलने लगे, और एक स्थिति ऐसी भी आयी जब पत्रकार वही होने लगे जो मूलतः साहित्यकार थे। वस्तुतः साहित्य की संवेदनशील प्रेरक भाषा में ही वह क्षमता थी जो पत्रकारिता को उसके उद्देश्य की सम्प्राप्ति करा सकती थी।

प्रारम्भ में देश की पत्रकारिता को उपयुक्त भाषा की तलाश थी। हिन्दी खड़ी बोली का गद्य स्वरूप ग्रहण कर रहा था। यह कार्य केवल पत्रकारों के वश का न था। साहित्य ने उसमें भरपूर सहयोग किया। संवेदना का तत्व मिलकर हिन्दी पत्रकारिता संपुष्ट हो चली। यदि हिन्दी पत्रकारिता में साहित्यिक स्पर्श न होता तो वह प्रारम्भ से ही इतनी प्रभावपूर्ण नहीं हो सकती थी।

समाचार और समाचार पत्रकारिता का जीवन में अत्यधिक महत्व है। समाचार प्राप्त करके हम एक ही स्थान पर रहकर भी मात्र सम्पूर्ण विश्व ही नहीं वरन् अन्तरिक्ष तक की अनेकानेक सूचनाओं से जुड़ जाते हैं। जबकि साहित्यिक पत्रकारिता देश और काल की सीमाओं को लाँघकर समस्त मानवता का हित चिंतन करती है। साहित्य मनुष्य को व्यवहार से सुपरिचित कराता है, उसे सुसंस्कारित भी करता है। सुसंस्कारित करके समाजोपयोगी बनाता है। इसलिये कहा गया है– **'साहित्य संगीत कला विहीनः साक्षात् पशु पुच्छ विषाण हीनः।'**[1] अर्थात् साहित्य, संगीत और कला से विहीन मनुष्य साक्षात् सींग, पूँछ रहित पशु के समान है। तात्पर्य यह है कि साहित्य, संगीत और कला मनुष्य को पूर्णता प्रदान करते हैं।

1– नीति श्लोक

समाचार पत्रों के माध्यम से विस्तृत विश्व की नवीनतम सूचनाओं को जानने, समझने का आज एक मात्र साधन समाचार पत्र ही हैं, वे चाहे अखबार के माध्यम से प्राप्त हों या फिर रेडिया या टेलीविजन से दूसरी ओर साहित्यिक पत्रकारिता के माध्यम से सहजरूप में साहित्य की अभिवृद्धि होती है और समाज के बीच साहित्य पढ़ने–पढ़ाने का एक चाव जागता है। साहित्यिक पत्रकारिता स्वयं में एक सम्पूर्ण: कार्य है और कार्य भी इतना उत्तरदायित्वपूर्ण कि जिसके द्वारा श्रेष्ठ मानवता का निर्माण होता है।

समाचार पत्रकारिता पाठक को विभिन्न प्रकार के लाभ प्रदान करती है। ये लाभ सामान्य एवं कम पढ़े–लिखे लोगों को भी मिलते हैं और असामान्य तथा अति बुद्धिजीवियों को भी साहित्यिक पत्रकारिता का सम्बन्ध साहित्य की प्रत्येक विधा से होता है। वह चाहे काव्य हों चाहे, नाटक हों, उपन्यास हो, कहानी हो, रिपोर्ताज हो, समीक्षा हो कुछ भी ऐसा नहीं है जो साहित्यिक पत्रकारिता के सम्बन्ध में न आता हो। इन सभी विधाओं से सहित्यसेवी तो ज्ञानार्जन करते ही हैं साथ ही समाज का प्रत्येक मानव प्राणी भावानुभूति से अनुप्राणित होता है।

समाचार प्राप्त करके व्यक्ति मनोवैज्ञानिक रूप में एक प्रकार की पूरी सुरक्षा का अनुभव करता है। कभी–कभी कोई समाचार तो किसी पूरे समाज, पूरे देश और सम्पूर्ण विश्व को भी सुरक्षा का अनुभव कराने वाला सिद्ध होता है। जबकि साहित्यिक पत्रकारिता प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सत् साहित्य के सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है।

जगत में पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन साहित्यकारों की प्रबुद्ध चेतना का शुभ लक्षण है। अध्ययन, मनन और चिन्तन के संकलित ज्ञान का प्रकाशन भी साहित्यिक प्रगति के लिये आवश्यक हो जाता है। हिन्दी जगत में साहित्यिक पत्रकारिता का प्रारम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के अवतरण के साथ हुआ है। तदन्तर समय–समय पर प्रबुद्ध वर्ग में साहित्यिक पत्रिकाओं का प्रकाशन होता रहा। **अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद'** ने **'हिन्दी पत्रकारिता को**

जालौन जनपद का योगदान'[1] नामक निबन्ध में पत्रकारिता का प्रारम्भ बाबू मूलचन्द्र अग्रवाल से माना जाता है। इन्होंने सन् 1911ई. में **दैनिक 'विश्वमित्र'** का सम्पादन कलकत्ता में रहकर किया था।

इसी क्रम में **'सत्यप्रकाश'** हिन्दी मासिक पत्र सन् 1912 ई. में कोंच से प्रकाशित हुआ। पण्डित बेनीमाधव तिवारी के सम्पादकत्व में **'साप्ताहिक देहाती'** का प्रकाशन उरई से हुआ। किन्तु जनपद जालौन की साहित्यिक–पत्रकारिता का सर्वेक्षण करने पर गोपालकृष्ण अवस्थी[2] की टिप्पणी से ज्ञात होता है कि जनपद जालौन में साहित्यिक पत्रकारिता का प्रारम्भ एकेडमी की पत्रिका **'हिन्दुस्तानी'** (सम्पादक स्व. कृष्ण बल्देव वर्मा, कालपी) तथा प्रौढ़ शिक्षा विभाग की पत्रिका **'अनुदेश'** (सम्पादक बाबूराम अग्रवाल, उरई) से हुआ। कृष्ण बल्देव वर्मा के भतीजे स्व. बृजमोहन वर्मा ने 'विशाल भारत' का सम्पादन किया था। विशाल भारत में प्रकाशित आपके साहित्य लेख हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं।

डॉ. आनन्द ने साप्ताहिक दुनाली का प्रकाशन किया था इस पत्र में डॉ. आनन्द की ओजस्वी रचनायें तथा उनके समकालीन साहित्यकारों के लेख तथा कवितायें प्रकाशित हुआ करती थीं। आपकी सम्पादकीय टिप्पणी भले ही राजनीति से प्रभावित रही हो किन्तु प्रकाशित साहित्यिक सामग्री पाठकों के लिये महत्वपूर्ण हुआ करती थी।

राजाराम पाण्डेय ने **'पहरेदार'** (साप्ताहिक) लघुपत्रिका का सम्पादन किया। पाण्डेय जी स्वयं एक साहित्य–मर्मज्ञ, समीक्षक, आलोचक एवं मूर्धन्य कवि थे। पत्रिका के माध्यम से जनपद की साहित्यिक गति–विधियों से पाण्डेय जी बहुत दिनों तक सम्बद्ध रहे। आपके सम्पादकीय युवावर्ग में चेतना उत्पन्न करके साहित्यिक प्रचार एवं प्रसार में अग्रणी हुआ

1– जालौन जनपद : साहित्य और पत्रकारिता–अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' नमन प्रकाशन, वर्ष 1994 ई., पृष्ठ 23

2– सारस्वत– जालौन जनपद विशेषांक गोपाल कृष्ण अवस्थी, पृष्ठ 137

करते थे। अर्थाभाव के कारण यह लघु पत्रिका अधिक समय तक साहित्य की सेवा न कर सकी।

राधेश्याम दाँतरे का नाम जनपद जालौन में पत्रकारिता के क्षेत्र में विशेष उल्लेखनीय है। आपने 1954–55 में **'साप्ताहिक दीपक'** का सम्पादन किया तथा 1960 में **'साप्ताहिक कौटिल्य'** का सम्पादन भी किया। आपके दोनों पत्र राजनीतिक कम साहित्यिक अधिक थे। 1972 ई. तक आपके पत्रों का प्रकाशन चलता रहा, तत्पश्चात् अचानक बन्द हो गया। आपका कोई भी पत्र अधिक समय तक स्थायी रूप से आपके जीवन का अंग नहीं बन सका। अपने पत्रकार जीवन के परिप्रेक्ष्य में राधेश्याम दाँतरे के निम्न विचार वर्तमान पाठक वर्ग की वस्तुस्थितियों तथा समकालीन समस्याओं का द्योतन करते हैं।

"चूँकि वस्तुतः पत्रकारिता से मेरा जुड़ाव साहित्यिक अभिरुचि और राष्ट्रवाद को अभिव्यक्ति देने के लिये था शनैः शनैः पत्रकारिता विज्ञापन आधारित होती गयी। विज्ञापन या तो भय प्रदर्शन से मिल पाते या चाटुकारिता से। यह दोनों ही मेरी प्रकृति के विपरीत हैं। इसलिये मैं विज्ञापन प्राप्त करके पत्र को आर्थिक आधार देने में सदैव विफल रहा हूँ। परिणामस्वरूप पत्र प्रकाशित करता रहा और आर्थिक अभाव के कारण वे बन्द होते रहे। यह दुखद् सत्य है कि साप्ताहिक पत्रों के पाठक भाषा, शैली, पत्र की सामग्री आदि की सराहना तो करते हैं, कलम के साहस की प्रशंसा भी करते हैं लेकिन वार्षिक शुल्क अदा करने में आना–कानी करते हैं।"

उक्त कथन से राधेश्याम दाँतरे की साहित्यिक अभिरुचि के साथ उनकी आर्थिक विवशता का परिज्ञान होता है।

डॉ. रामस्वरूप खरे का नाम जनपदीय साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ट उल्लेखनीय है। सन् 1966 में महाविद्यालयीन सेवा में संलग्न रहते हुये आपने **'साप्ताहिक दिनान्त'** का सम्पादन किया। कुछ समय पश्चात् **'साप्ताहिक ज्ञानाभ'** के प्रकाशन से डॉ. खरे को जनपद में विशेष ख्याति उपलब्ध हुयी। आपने सन् 2005 ई. में **'उद्घोष'** पत्रिका के प्रधान सम्पादक

के रूप में कार्य किया। इस पत्रिका ने साहित्य के क्षेत्र में पर्याप्त ख्याति अर्जित की। कहानी, कविता, समीक्षा तथा आलोचना सभी स्तम्भों के माध्यम से यह पत्रिका कई वर्षों तक जनपद के साहित्य क्षेत्र में सराहनीय रही।

डॉ. रामशंकर द्विवेदी का साहित्यिक पत्रकारिता में विशेष योगदान रहा। आपने **'राष्ट्रधर्म'** पत्रिका का सह सम्पादन भी किया है। वस्तुतः डॉ. द्विवेदी बंगला के विद्वान हैं, राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में आपके समीक्षा लेख एवं अनुवाद अनवरत प्रकाशित होते रहते हैं। इन्होंने किसी साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन तो नहीं किया, किन्तु विभिन्न पत्रिकाओं के माध्यम से अपने शोध आलेखों द्वारा अध्येताओं का ज्ञानवर्धन किया है। अनुवाद के क्षेत्र में आपको साहित्य एकेडमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है।

जनपद जालौन को साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में गौरवान्वित करने में हरिश्याम पारथ जी का नाम अग्रणी है। आपने गीता प्रेस गोरखपुर की पत्रिका का सहसम्पादन करके पुराणों, वेदों तथा शास्त्रों के प्रति धार्मिक आस्था को स्थायित्व प्रदान किया। आप छन्द शास्त्र के मर्मज्ञ तो हैं ही, नाट्यकार, कवि तथा समीक्षक भी हैं। आपके साहित्यिक स्फुट लेख राष्ट्रीय स्तर की पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' ने साहित्यिक पत्रकारिता को चेतना प्रदान करने में अहम् भूमिका निभायी। आपने संस्कार भारती से सम्बद्ध पत्रिका **'लोक कला दर्पण'** का सम्पादन किया। इस पत्रिका के माध्यम से सांस्कृतिक चेतना पर हो रहे आघातों को निष्क्रिय करने का सार्थक प्रयास किया गया है। **'गहोई वैश्य बन्धु संस्था'** द्वारा संचालित **'गहोई साहित्यकार अंक'** पत्रिका के **'कुमुद'** जी कार्यकारी सम्पादक रहे। यह पत्रिका गहोई समाज की साहित्यिक चेतना तथा परम्परा को प्रकाश में लाने के लिये प्रतिबद्ध थी। अखिल भारतीय वैश्य महासभा के मुख्य पत्र के रूप में इसे कोंच नगर से प्रकाशित किया जाता था।

'छायानट' त्रैमासिक पत्रिका के आप अतिथि सम्पादक भी रहे। इस पत्रिका में लोक नृत्यों के विविध प्रकारों से समाज को अवगत कराया गया है।

डॉ. जयश्री पुखार कुशल लेखिका हैं। आपने साहित्यिक मासिक पत्रिका **'नवअंकुर'** का सम्पादन कर साहित्यिक पत्रकारिता को सशक्त रूप प्रदान किया। आपने इस पत्रिका में अनेक विद्वानों के अनुभवों एवं कहानियों तथा कविताओं के माध्यम से जनमानस में साहित्यिक पत्रिकाओं के प्रति अध्ययन की रुचि जाग्रत की है। इस पत्रिका का उद्देश्य साहित्य के प्रति अदम्य इच्छाशक्ति, असीम उत्साह एवं जनजागरण था। आपने पत्रिका के माध्यम से संगीत तथा कला का प्रचार एवं प्रसार किया है। इस पत्रिका में गीत, कविता एवं कहानी आदि स्तम्भ विशेष सराहनीय रहे। कुछ समय पश्चात् इस पत्रिका का प्रकाशन अवरुद्ध हो गया।

नासिर अली 'नदीम' जनपद के उन विरल रचनाकारों में हैं जो जनपदीय साहित्यिक गौरव की अभिवृद्धि में अपना तन, मन, धन भी न्यौछावर कर सकते हैं। आपने **'सलामो पयाम'** उर्दू पत्रिका का कुशल सम्पादन किया। इसका मुख्य उद्देश्य कुरानशरीफ के नियमों पर चलकर जीवनयापन करने की शिक्षा देना था। वर्तमान पीढ़ी नाजायज तरीकों से धनार्जन करके अपने ऐसो–आराम में व्यय किया करती है। इस कुप्रथा को कलंक मानकर 'नदीम' ने अपनी पत्रिका के माध्यम से समाज में सुधार लाने की चेष्टा की है। पत्रिका कुछ दिन समाज की सेवा करने के पश्चात् अर्थाभाव के कारण बन्द हो गयी।

'नदीम' ने द्वितीय प्रयास में **'जीनते–ए–जुबां'** गैर साम्प्रदायिक पत्रिका का सम्पादन किया। इसका मुख्य उद्देश्य हिन्दू तथा मुसलमानों में देश के प्रति असीम श्रृद्धा एवं भक्ति का प्रादुर्भाव करना था। इस पत्रिका की सम्पादकीय टिप्पणियों से जनपद की साम्प्रदायिकता दूर हुयी तथा

हिन्दू और मुस्लिम लेखकों में सामंजस्य भी स्थापित हुआ। पारस्परिक असहयोग के कारण यह पत्रिका भी साहित्य क्षेत्र में अधिक समय तक न टिक सही।

तृतीय प्रयास में **'नदीम'** जी ने **'सबकी खैर खबर'** पत्रिका का सम्पादन किया। इसका मुख्य उद्‌देश्य था जनपद के साहित्यकारों को प्रकाश में लाना। पिछड़े इलाकों के स्वान्तः सुखाय सृजन कर्ता साहित्य क्षेत्र में सदियों तक अज्ञात बने रहे। इस पत्रिका ने कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार तथा गज़लकारों को ढूंढ़–ढूढ़कर उनका छायाचित्र तथा उनकी मूर्धन्य रचनाओं को उजागर किया। इस अथक प्रयास से जनपद की साहित्य सर्जना को प्रेरणादायी सम्बल मिला। किन्तु अर्थाभाव के कारण यह पत्रिका भी साहित्य क्षेत्र में स्थायित्व प्राप्त न कर सकी।

'आशय' विचारशील रचना की त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका की सम्पादकीय टिप्पणी से विनोद कुमार सौनकिया जी के सम्पादकत्व का स्तर अत्यधिक प्रभावशाली हो जाता है। इस त्रैमासिक पत्रिका में कहानी, कविता, विमर्श, गीत, उपन्यास, गज़ल, डायरी अंश, पत्र संवाद, स्मृति, भाषान्तर, विरासत तथा विवेचना का संग्रह किया गया है। इन सभी विधाओं के माध्यम से साहित्यिक विषयों की ओर ध्यान केन्द्रित तो किया ही गया है बल्कि समाज सुधार के लिये भी प्रेरणायें प्रदान की गयी हैं। इस प्रकार की साफ–सुथरी पत्रिका ने जनपद में एक साहित्यिक पत्रकारिता को अग्रिम रूप प्रदान किया। इस पत्रिका में विद्वानों की लेखन शैली तथा विचारों को सामन्जस्य के साथ गूँथा गया है।

'शोध धारा' अर्द्धवार्षिक राष्ट्रीय शोध पत्रिका में प्रधान सम्पादक डॉ. नीलम मुकेश तथा सम्पादक डॉ. राजेश पाण्डेय जी हैं। यह पत्रिका मानविक एवं समाज विज्ञान पर केन्द्रित है। इस पत्रिका में आपने विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों एवं मनीषियों के लेखों को संजोया है।

जनपद को विभिन्न क्षेत्रों की जानकारी उपलब्ध कराने में **'प्रांकुर'** पत्रिका की अहम् भूमिका है। इस पत्रिका का सम्पादन कार्य अपर्णा खरे ने किया। इसमें जीवन के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया गया है। आपकी सम्पादकीय प्रत्येक सूक्ष्म वस्तु का महत्व बताने वाली है। आपकी पत्रिका का मुख्य उद्देश्य दुःख–सुख को समान रूप से समझना तथा एक दूसरे के प्रति उनके महत्व को प्रकाश में लाने का है।

अपर्णा जी कवियित्री होने के साथ–साथ कुशल लेखिका भी हैं। आपकी सम्पादकीय टिप्पणी जनपद की साहित्यक क्षेत्र में अभिरुचि जाग्रत कर देती हैं।

जालौन जनपद में प्रतिवर्ष विद्यालयों से वार्षिक पत्रिकायें प्रकाशित होती हैं। इन्ही पत्रिकाओं के माध्यम से जनपदीय छात्रों शिक्षकों तथा विद्वानों के लेख प्रकाश में आते हैं। इन पत्रिकाओं का विवरण निम्नवत् प्रस्तुत है–

'सारस्वत' वाषिक पत्रिका पर अयोध्या प्रसाद गुप्त **'कुमुद'** ने लेखनी चलाकर जनपद की विभिन्न सूक्ष्मातिसूक्ष्म जानकारी से समाज एवं साहित्य को अवगत कराया। इस पत्रिका में जनपद के ऐतिहासिक स्थल, तीर्थ स्थल,भौगोलिक स्थिति तथा राजमार्गों की जानकारी उपलब्ध होती है।

'सुजन समीक्षा' साहित्य एवं संस्कृति की त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका की सम्पादकीय टिप्पणी लिखने की अहम् भूमिका डॉ. सत्यवान की है। आपने इस पत्रिका में साक्षात्कार, कविता, गज़ल, यात्रावृतांत, अपना जनपद लेख तथा समीक्षा आदि विधाओं को प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार की विधाओं के पाठन से जनपद की साहित्य सर्जना में विकास हुआ है।

आपने इस पत्रिका को एक अनोखे ढंग से समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। इसमें विद्यालय की व्यवस्था, शिक्षकों की कर्तव्य परायणता, छात्रों की आज्ञाकारिता तथा कर्मचारियों की सेवा भावना पर जोर दिया

गया है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य समाज एवं साहित्यकार तथा छात्रों को जनपद की प्रत्येक स्थिति से परिचित कराना है।

राजकीय महाविद्यालय जालौन से प्रकाशित पत्रिका **'स्वयं प्रभा'** है। इस पत्रिका का नाम छात्रों, शिक्षकों, साहित्यकारों को विशेषरूप से प्रभावित करता है। इस पत्रिका की सम्पादकीय टिप्पणियों ने महाविद्यालयीन छात्र–छात्राओं, शिक्षकों, विद्वानों को लेखन कार्य के लिये प्रेरित तो किया ही है, बल्कि विद्यार्थियों में अनुशासन, चरित्र निर्माण, नैतिक उत्थान एवं राष्ट्रप्रेम की भावना जाग्रत की है।

मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय कोंच की वार्षिक पत्रिका **'क्रौंच रश्मि'** है जिसका सम्पादन डॉ. रामसजीवन शुक्ल ने किया है। आपने इस पत्रिका में विद्यालय की उपलब्धियों को दर्शाया है। कोंच नगर की ऐतिहासिक स्थिति, विद्वानों का समागम तथा कस्बे में निवास कर रहे विद्वानों की विद्वत्ता को प्रकाशित किया है। इस पत्रिका का प्रयास है कि जनपद को प्रत्येक क्षेत्र में विकासोन्मुख किया जावे। जनपद जालौन हर क्षेत्र में आगे रहे। इन सभी विचारों को ध्यान में रखते हुये सम्पादक ने पत्रिका को एक नये ढंग से प्रकाश में लाने का प्रयास किया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि जनपद जालौन में प्रगतिशील साहित्यिक पत्रकारिता यहाँ के साहित्यिक उत्कर्ष का प्रतीक है। विविध पत्रिकाओं के प्रकाशन से यहाँ के साहित्यिक वर्ग को लेखन व प्रकाशन की प्रेरणा मिलती रही है। साहित्य क्षेत्र के नवोदित कवियों एवं लेखकों को प्रोत्साहन देने का कार्य विविध पत्रिकाओं ने सम्पादित किया है। अतः हम कह सकते हैं कि जनपद जालौन के विकास में साहित्यिक पत्रकारिता का उल्लेखनीय योगदान रहा है तथा यहाँ की साहित्य सर्जना सुदृढ़ एवं संपुष्ट हुयी है।

नवम् अध्याय :

उपसंहार

नवम् अध्याय

उपसंहार

जनपद जालौन में साहित्य—सर्जना की परम्परा सदियों पुरानी हैं। जनपदीय साहित्यकारों ने अपने रचना काल में महाकाव्य, कहानी, उपन्यास, समीक्षा, आलोचना, निबंध तथा अनुवाद के क्षेत्र में उल्लेखनीय सृजन किया है। काव्य सृजन के क्षेत्र में वीर, श्रृंगार, भक्ति, हास्य—व्यंग्य एवं बुन्देली रचनाओं की प्रधानता रही है। गद्य क्षेत्र में अपेक्षाकृत कम रचनायें प्रकाश में आईं हैं। शोध कार्य में सुविधा की दृष्टि से साहित्य—सर्जना की इस दीर्घावधि को पाँच कालखण्डों में वर्गीकृत किया गया है।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्व के साहित्यिक परिवेश में भक्ति एवं श्रृंगारिक रचनाओं की प्रधानता रही। वस्तुतः उस समय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के कालविभाजन के अनुसार रीतिकालीन रचनाओं का सृजन प्रारम्भ हो चुका था। तथापि भक्ति पूर्ण रचनाओं का पूर्ण परित्याग नहीं हो सका था। इस कालखण्ड में जनपद में महेशदास (वीरबल) तथा आचार्य श्रीपति मिश्र ही प्रमुख कवि हुये।

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के रचनाकारों में काली कवि तथ लछमन ढीमर **'लाख'** का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस कालखण्ड में भी श्रृंगारिक रचनाओं का प्राधान्य रहा। यद्यपि काली कवि किसी राजा के दरबारी कवि नहीं रहे फिर भी रचना धर्मिता के क्षेत्र में इनका सृजन श्रृंगार से अछूता नहीं रहा। भक्ति की सरस रचनायें भी इनकी लेखनी से उद्भूत हुईं हैं। **'लाख'** कवि दतिया नरेश भवानीसिंह के दरबार में सुराही वरदार थे। इनकी भक्ति एवं श्रृंगारिक रचनायें अत्यन्त उत्कृष्ट हैं। यदि यह कहा जाये कि भाव एवं शिल्प की दृष्टि से इनके छन्द पद्माकर के छन्दों से कहीं आगे हैं, अत्युक्ति नहीं होगी।

इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध काल में काव्य चेतना परिवर्तित हुई और कविता ने पुनर्जागरण का स्वरूप ग्रहण कर लिया। इस युग की रचनाओं के वर्ण्य–विषय मुख्यतः समाज सुधार, स्त्री शिक्षा, कृषकों की दुरावस्था, राष्ट्रीय–जाग्रति, अछूतोद्धार जागरण तथा अधिकार एवं कर्तव्य बोध ही रहे। साप्ताहिक कवि गोष्ठियों में समस्यापूर्ति का विशेष प्रचलन था। इस कालखण्ड में अवतरित कवियों मे पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', कृष्णबल्देव वर्मा, रसिकेन्द्र, बेनीमाधव तिवारी, डॉ. आनन्द, बृजमोहन वर्मा, रामनाथ चतुर्वेदी 'विप्र', रामसहाय पटसारिया मुख्य थे। कृष्ण बल्देव वर्मा तथा बृजमोहन वर्मा ने गद्य क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है।

बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जो काव्य सृजन हुआ, वह अपनी सबल अभिव्यक्ति, समर्पण भाषा एवं शिल्प, प्रतीक विधान, बिम्ब योजना, सांस्कृतिक तथा भावात्मक सम्पन्नता के कारण हिन्दी साहित्य क्षेत्र की अक्षुण्ण निधि है। इस युग में जालौन जनपद में साहित्यकारों की संख्या पर्याप्त है। इस युग की कविता में छायावादी सौन्दर्य भावना, प्रेम, करुणा, प्रकृति का मूर्त–अमूर्त चित्रण तथा मनवतावाद आदि विषयों की प्रधानता रही है। इस कालखण्ड में **आन्जनेय गौरव, शैव्या विलाप, आन्जनेय बन्धु, दुर्योधन तथा शतमन्यु** जैसे उत्कृष्ट काव्य सृजित हुये।

वीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रगतिवादी तथा प्रयोगवादी काव्य सृजन हुआ। इस कालखण्ड की कविता में अस्वीकृति, असंतोष तथा विद्रोह के भाव साकार हुये हैं। इस कालखण्ड में पद्य के साथ गद्य साहित्य का सृजन भी हुआ। नवगीत तथा हिन्दी गज़ल का प्रचार और प्रसार भी हुआ। गद्य क्षेत्र में कहानी, उपन्यास, समीक्षा तथा आलोचना आदि विधाओं में लेखन कार्य हुआ है। इस युग के कवियोंः में रविशंकर मिश्र, नासिर अली 'नदीम', डॉ. श्रीमती वीणा श्रीवास्तव, कु. नीलम कश्यप, प्रवीण सक्सेना 'उजाला', कु. अपर्णा खरे, कु. शारदा 'पायल', रामशंकर भारती तथा विनोद कुमार सौनकिया आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

साहित्य—सर्जना के क्षेत्र में साहित्यिक पत्रकारिता का विशेष महत्व है। साहित्यिक पत्रकारिता से जनपद जालौन के नवोदित साहित्यकारों एवं जिज्ञासुओं को पर्याप्त प्रेरणा मिली है। कहानी कविता तथा उपन्यास आदि विधाओं के प्रणयन में प्रोत्साहन देने का कार्य साहित्यिक पत्रकारिता ने जिम्मेदारी से निभाया है। साहित्यिक पत्रिकाओं के विविध स्तम्भों से नवीन पाठकों को साहित्यिक विषयों का पर्याप्त ज्ञान हुआ है। अध्ययन एवं सृजन के क्षेत्र में विकास तो हुआ ही है साथ ही चिंतन एवं शोधपरक आलेख लिखने का प्रोत्साहन भी मिला है।

जनपद जालौन में साहित्य सर्जनाः एक सर्वेक्षण शोध प्रबन्ध में अद्यावधि साहित्य सर्जना उजागर हुई है। कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, इतिहासकार, निबन्धकार तथा अनुवादक साहित्य जगत के समक्ष प्रत्यक्ष हुये हैं, तथा उनकी रचनायें प्रकाश में आईं हैं। चूँकि शोध कभी पूरा नहीं होता। इस दृष्टि से जनपद के ग्रामीण अंचलों में स्वान्तः सुखाय लिखने वाले कतिपय रचनाकर इस सर्वेक्षण से यदि छूट गये हों तो उन पर आगे आने वाले शोधार्थी शोध करेंगे। भरसक प्रयास यह रहा है कि साहित्यकारों के प्रकाशित ग्रंथों का तथा अप्रकाशित पाण्डुलिपियों का विवेचन विधिवत विश्लेषण के साथ प्रस्तुत किया जाय। रचनाकारों के ग्रंथों से विशिष्ट उद्धरण भी प्रस्तुत किये गये हैं।

शोध–ग्रंथ में साहित्य–सर्जना की अवधि को पचास–पचास वर्षों के 4 कालखण्डों (1801–1850, 1851–1900, 1901–1950, 1951–2000) में विभाजित किया गया है। एक निश्चित कालखण्ड की साहित्य–सर्जना को रेखांकित करने के लिये उस अवधि के रचनाकारों का व्यक्तित्व एवं सामान्य परिचय संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। उनकी रचनाओं का विवरण तथा भाषा–शिल्प की विवेचना की गई है। तत्पश्चात् कवियों के कृतित्व का साहित्यिक मूल्यांकन, उनकी रचनाओं से सम्बद्ध उदाहरण देते हुये प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में कुल नौ अध्याय हैं।

परिशिष्ट :

संदर्भ ग्रंथ सूची

परिशिष्ट :

आधार एवं संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हर्षिता भूगोल–जिला जालौन, डॉ.वी.शर्मा,हर्षिता प्रकाशन राजमार्ग उरई।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ. नगेन्द्र, मयूर पेपर बैक्स सेक्टर–5 नोएडा, सन् 1973 ई.।
3. अकबरी दरबार के हिन्दी कवि– डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय प्रकाशन, सं. 2007 वि.।
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास– पं. रामचन्द्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान दरियागंज– नई दिल्ली, संस्करण सन् 2004 ई.।
5. राजा वीरबल– मुंशी देवी प्रसाद, सं. 1958 वि.।
6. शिवराज भूषण, भूषण, छन्द संख्या 26–27, सन् 1921 ई.।
7. श्रीपति मिश्र ग्रंथावली– सम्पादक लक्ष्मीधर मालवीय, आदित्य प्रकाशन एफ–14/65, मॉडेल टाउन 11, दिल्ली, सन् 1999 ई.।
8. अकबरी दरबार–भाग 1 आजाद, अनु. रामचन्द्र वर्मा, सं.1981वि.।
9. आइने अकबरी भाग–1 अबुल फज्ल,अनुवादक ब्रलाक मैन, सन् 1873ई.
10. कविता–कौमुदी, भाग–1, रामनरेश त्रिपाठी, सन् 1946ई.।
11. हिन्दी साहित्य का इतिहास– डॉ.रामशंकर शुक्ल 'रसाल' सं.1931वि.
12. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास–भाग 1,नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।
13. छायावादी काव्य में सामाजिक चेतना– डॉ. डी. पी. बरनवाल, जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा पटना, सन् 1988ई.।
14. छायावाद का काव्य शिल्प– डॉ. प्रतिभा कृष्ण बल
15. गीतीतिहास में ये गीत– डॉ. सूर्यप्रसाद शुक्ल, विहान प्रकाशन, सी–3 दर्शन पुरवा, कानपुर, सन् 2002 ई.।

16. साहित्य दर्पण, तृतीय परिच्छेद
17. हनुमत्पताका– पं. कालीदत्त नागर, भारती प्रेस, कवि काली मार्ग उरई, सन् 1983 ई.।
18. छबि रत्नम्– पं. कालीदत्त नागर, महाकवि काली कला शोध केन्द्र उरई, सन् 1987ई.।
19. गंगा गुण मंजरी– पं. कालीदत्त नागर, महाकवि काली कला शोध केन्द्र उरई।
20. जालौन जनपदः साहित्य और पत्रकारिता– श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद', नमन प्रकाशन 1994 ई.।
21. रत्नेश शतक– पं. रामरत्न शर्मा 'रत्नेश', नेशनल प्रेस कानपुर, संवत् 1982 वि.।
22. बुन्देल वैभव–भाग–1, गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', टीकमगढ़।
23. बुन्देल वैभव–भाग–2, गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर', टीकमगढ़।
24. मनहर वीर ज्योति– द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र' कालपी, रसिकेन्द्र पुस्तकालय, कालपी, सन् 1937ई.।
25. झाँसी की रानी–महारानी लक्ष्मीबाई– डॉ. आनन्द, आनन्द प्रकाशन, जालौन, सन् 1967ई.।
26. भतृहरि राज त्याग– डॉ. कृष्णबल्देव वर्मा (हिन्दी साहित्य परिषद् लोकनाथ चौराहा, इलाहाबाद के सौजन्य से प्राप्त जीर्ण शीर्ण प्रति)।
27. पारिजात विजय– द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र', रसिकेन्द्र पुस्तकालय कालपी, सन् 1935ई.।
28. रसिकेन्द्र रंजन– द्वारिकाप्रसाद गुप्त 'रसिकेन्द्र', रसिकेन्द्र पुस्तकालय कालपी, सन् 1934ई.।
29. उरई एकादशी– पं. बेनीमाधव तिवारी, पं. गोविन्दनारायण तिवारी प्रेस उरई।
30. एम.एल.ए.राज– डॉ. आनन्द, आनन्द प्रकाशन, जालौन

31. सन् अड़तालीस—डॉ. आनन्द, आनन्द प्रकाशन, जालौन, सन् 1937ई.।
32. आंजनेय गौरव— पं. दशाराम 'रामकवि', प्रकाशन शक्ति प्रिन्टर्स बैठगंज जालौन।
33. आंजनेय बन्धु— पं. बाबूराम गुबरेले, भदौरिया प्रिंटिंग प्रेस कोंच, सन् 1957ई.।
34. मिलिबो न भूलियो— भगीरथसिंह 'तकदीर' साहित्य मधुवन नूरपुर, उरई, सन् 1957ई.।
35. आलोक दर्शन— रामबाबू अग्रवाल, रवि प्रकाशन, उरई सन् 1981ई.।
36. अर्चना—डॉ. रामस्वरूप खरे, अभिनव साहित्य परिषद, 722, कटरा मण्डी मथुरा, सन् 1957ई.।
37. अनकहा ही रह गया— श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', अखिल भारतीय, 30/4 चरखेवालान, दिल्ली, सन् 2001ई.।
38. फूल के अधरों पर पत्थर— श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', समय प्रकाशन दिल्ली, सन् 1999ई.
39. अश्वत्थामा— पं. दशाराम मिश्र, कंज प्रकाशन उरई, सन् 1971ई.।
40. वय बोधनी— भगीरथसिंह 'तकदीर' साहित्य मधुवन नूरपुर, उरई।
41. अंग लक्षण प्रबोधिनी— भगीरथसिंह 'तकदीर' साहित्य मधुवन नूरपुर, उरई।
42. दुर्योधन— भगीरथसिंह 'तकदीर' साहित्य मधुवन नूरपुर, उरई।
43. स्वरूप काव्य का समीक्षात्मक विवेचन— डॉ. दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव, जनार्दन प्रकाशन, कानपुर, सन् 1992 ई.।
44. मेरे स्वप्न तुम्हारे चित्र— डॉ. रामस्वरूप खरे, हिन्दी प्रचार सभा, सदर मथुरा, सन् 1972ई.।
45. शतमन्यु— डॉ. रामस्वरूप खरे, हिन्दी प्रचार सभा, सदर मथुरा, संवत् 2026 वि.।
46. साहित्यिक निबन्ध— डॉ. विजयपाल सिंह, जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद सन् 1999 ई.।

47. युग धर्म— महेन्द्र पाटकार 'मृदुल' हिन्दी विचार मंच, जालौन 1994ई.

48. प्रेरणा गीत— महेन्द्र पाटकार 'मृदुल'

49. हिन्दी पत्रकारिता सिद्धान्त और प्रयोग— डॉ. प्रतीक मिश्र, प्रकाशक ग्रंथम् साकेत नगर कानपुर—14

50. संस्कृत दिग्दर्शिका, नीतिश्लोक— सम्पादक डॉ. गोवर्धननाथ शुक्ल, प्रकाशक मनोहर प्रिंटिंग प्रेस मथुरा।

अप्रकाशित शोध-प्रबंध

51. शैव्या विलाप— शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र'

52. हँसते फूल— शिवराम श्रीवास्तव 'मणीन्द्र'

53. गंगा शतक— लछमन ढीमर 'लाख'

पत्रिकायें

54. जालौन गजेटियर— बलवंत सिंह

55. शोध रिपोर्ट— ना. प्र. सभा (1909—1911) संस्करण 1914ई.।

56. आचार्य श्रीपति और उनका आचार्यत्व—शोध पत्र— श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' (मध्यकालीन साहित्य संदर्भ में प्रकाशित)।

57. हिन्दी साहित्य के विकास में, उरई नगर का योगदान— डॉ. दिनेशचन्द्र द्विवेदी, सारस्वत—वार्षिक पत्रिका, (उरई विशेषांक) 1999—2000ई.।

58. सारस्वत जालौन जनपद विशेषांक, सम्पादक अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' सन् 2001—2002ई.।

59. जालौन जनपद के साहित्यकार— त्रैमासिक पत्रिका, सबकी खैर खबर, सम्पादक— नासिर अली 'नदीम' सन् 1995ई.।

60. साप्ताहिक हलचल— तिवारी विशेषांक, सम्पादक पं. श्रीधरदयाल दुबे, सन् 1953ई.।

61. काव्य मंजूषा— सम्पादक प्रवीण सक्सेना 'उजाला' अक्टूबर सन् 2003ई.